वर्जित देश तिब्बत में

तिब्बत की रोमाञ्चकारी यात्रा का सजीव वर्णन

लेखक

लावेल थामस जूनियर

अनुवादक

रामदत्त पंत

१९७१

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार
मूल्य
साढे सात रुपये

मुद्रक
सा० प्रिं० द्वारा
इंडिया प्रिंटर्स
दिल्ली

दलाई लामा

महामहिम दलाई लामा

एवं

तिब्बत-निवासियों को,

जो

सच्चे हृदय से प्रार्थना कर रहे हैं कि
ईश्वर मनुष्य-मात्र को स्थायी
शान्ति एवं प्रसन्नता दे ।

संदेश

मुझे प्रसन्नता है कि 'आउट आफ दिस वर्ल्ड टू फारबिडन तिब्बत' नामक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद हो गया है। यह तिब्बत और तिब्बत-निवासियों के विषय मे भारतीय जनता को जानकारी देने का एक और नया स्रोत होगा।

जन-साधारण के लिए तिब्बत जैसे देश के विषय मे, जो बहुत वर्षों तक पूर्णतया पृथक बना रहा, जानकारी प्राप्त करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है और जबकि सम्बन्धित जनता हमारे भारतीय भाई है, इसपर जितना जोर दिया जाय, थोड़ा है। तिब्बत और भारत के मध्य अनेक शताब्दियो पुराना धार्मिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध है, जो कि राजनैतिक सम्बन्धों की तरह टूट नही सकता, क्योकि उसका निर्माण दोनो राष्ट्रो की जनता के हृदयो मे अवस्थित प्रेम और सहयोग द्वारा हुआ है।

—दलाई लामा

स्वर्ग आश्रम,
अपर धर्मशाला,
कांगड़ा (पंजाब)
३ मार्च, १९६६

प्रकाशकीय

'मण्डल' ने बहुत-सा यात्रा-साहित्य प्रकाशित किया है। इस साहित्य की रचना उन व्यक्तियो ने की है, जिन्होने ये यात्राए स्वय की हैं। यही कारण है कि पूरा साहित्य अत्यन्त सजीव और रोचक है। ज्ञानवर्द्धक तो है ही। कुछ पुस्तको के तो कई-कई सस्करण हो चुके है।

हमे हर्ष है कि हमारे यात्रा-साहित्य मे एक और मूल्यवान पुस्तक का समावेश हो रहा है। अग्रेजी मे यह पुस्तक 'आउट आफ दिस वर्ल्ड टू फारबिडन तिब्बत' के नाम से प्रकाशित हुई है। यद्यपि इसे लिखे अनेक वर्ष हो गये है, तथापि इस पुस्तक मे वर्णित नगर, धार्मिक स्थल, प्राकृतिक सौंदर्य, मार्ग की बीहडता, वहा के निवासियो के रीति-रिवाज आदि मे विशेप परिवर्तन नही हुआ है। यह पुस्तक तिब्बत की भूमि तथा उसके जन को समझने मे सहायक होती है।

पुस्तक बडी रोमाचकारी है। जाने कितने स्थानो पर पुस्तक मे वर्णित दोनो पर्यटको की कठोर परीक्षा हुई है। अत उनके विवरण जहा सरस बन पडे है, वहा अनेक स्थलो पर रोगटे खडे कर देते हैं।

हमे पूरा विश्वास है कि इस पुस्तक को सभी क्षेत्रो और वर्गों मे पाठक चाव से पढेंगे।

—मंत्री

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक मे उस यात्रा की कहानी है, जो मेरे पिता ने और मैंने दलाई लामा की राजधानी ल्हासा की की थी। यह मेरे पिता की साहसिक यात्राओ के जीवन का चरम उत्कर्ष है। मेरे लिए भी यह तबतक महानतम साहसिक यात्रा रहेगी जबतक अन्तरिक्ष यान द्वारा दूसरे ग्रह की यात्रा सभव न हो जाय। तिब्बत की फिर से यात्रा निकट भविष्य मे असभव ही है, क्योंकि उसे साम्यवादी चीन ने निगल लिया है। हिमालय पर उनका काष्ठ-आवरण गिरने से पूर्व उस देश के हम अन्तिम पश्चिमी यात्री थे।

हम दोनो की ओर से मैं उन सबके प्रति अत्यन्त आभारी हूं, जिन्होने ल्हासा जानेवाले हिमालय के मार्ग पर हमारे तिब्बत के कारवा को मदद दी—लाय हैन्डर्सन, जो उस समय भारत मे अमरीकी राजदूत थे, चार्ल्स एच० डेरी जिन्होंने कलकत्ता मे मुख्य समुपदेष्टा के रूप मे हमारी सहायता की, जे० जैफर्सन जोन्स जो उस समय अमरीकी दूतावास के प्रथम सचिव थे और पैन अमरीकन एयरवेज के बॉब वर्नेट।

हम अत्यन्त आभारी हैं सर गिरजाशकर वाजपेयी के तथा विदेश मन्त्रालय के उनके तत्कालीन सहकारियो के, जिन्होने राजदूत हैन्डर्सन से सहयोग किया। इन सम्मानीय व्यक्तियो की सहायता के बिना ल्हासा पहुंचना स्वप्न ही रह जाता।

—लावेल थामस जूनियर

पालिग, न्यूयार्क
जनवरी, १९५४

निवेदन

भारत और तिब्बत के सवध अत्यन्त प्राचीन है। दोनो देशो मे सास्कृतिक आदान-प्रदान शताब्दियो से होता रहा है। तिब्बत मे बौद्ध धर्म भारत से ही गया, स्थानीय प्रभावो के कारण उसके धार्मिक अनुष्ठानो मे अन्तर भले ही आ गया। अत्यन्त निकटस्थ पडोसी देश होने पर भी भारत की जनता मे तिब्बत और उसके निवासियो के विषय मे बहुत कम जानकारी है।

साम्यवादी शासन की स्थापना के उपरान्त चीन की तिब्बत पर लोलुप दृष्टि पडने लगी और एक के बाद दूसरी ऐसी कठिनाइया पैदा होती चली गईं कि परम पवित्रात्मा दलाई लामा को तिब्बत छोडना पडा। वह १९५९ मे भारत आये और तबसे इसी देश मे निवास कर रहे है।

प्रस्तुत पुस्तक श्री लावेल थामस जूनियर द्वारा लिखित पुस्तक 'आउट आफ दिस वर्ल्ड टू फारबिडन तिब्बत' का स्वतन्त्र हिन्दी अनुवाद है। इसमे थामस पिता-पुत्र की तिब्बत-यात्रा का वर्णन है। दलाई लामा महोदय से भेंट का वृत्तान्त भी अत मे जोड दिया गया है। पुस्तक केवल यात्रा-वृत्तान्त ही नही है, अपितु तिब्बत का अपने पडोसी देशो से पुराने संवधो का इतिवृत्त तथा साम्यवादी शासन से पूर्व वहा की सामाजिक और राजनैतिक स्थिति का विवरण भी है, जो रोमाचकारी होने के साथ-साथ मनोरजक भी है। मैं पुस्तक के लेखक का हृदय से आभारी हू, जिन्होने पुस्तक के हिन्दी सस्करण के प्रकाशन की अनुमति दी। यह अनुमति तथा चित्र भारत स्थित सयुक्त राज्य के सूचना-विभाग के सौजन्य से प्राप्त हुए हैं। इसके लिए मैं उसका अनुगृहीत हू।

पुस्तक मे स्थान-स्थान पर विभिन्न विषयो पर व्यक्त किये गए

विचार पूर्णतया लेखक के अपने है। अनुवादक या सरकार उनके लिए किसी प्रकार उत्तरदायी नही है। अनुवाद मे दी गई टिप्पणियां, दलाई लामा के व्यक्तिगत सचिव से प्राप्त सूचनाओ के अनुसार हैं। मैं इसके लिए सचिव महोदय को धन्यवाद देता हूं। उन्हींकी कृपा से दलाई लामा का इस पुस्तक के हिन्दी सस्करण के लिए विशेप सदेश प्राप्त हो सका।

सबसे अधिक आभारी हूं मैं सस्ता साहित्य मडल का, जिसने इस पुस्तक को पाठको के लिए इतने सुन्दर और सुरुचिपूर्ण ढग से सुलभ किया है।

—अनुवादक

विषय-सूची

वर्जित देश
तिब्बत में

१ | ल्हासा के लिए निमन्त्रण

"वास्तव मे महान् आश्चर्य हो गया है। मुझे कलकत्ता मे मिलो। हम ल्हासा को प्रस्थान कर रहे है।"

डैडी की यह सूचना बेतार के तार से मुझे तेहरान मे १४ जुलाई, १९४९ को मिली जबकि मैं पूर्वी ईरान के बख्तियारी कबीलो के बीच संयुक्त राज्य अमरीका की सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश विलियम ओ० डगलस के साथ एक सप्ताह की यात्रा के उपरान्त लौटा।

साहसिक यात्राओ मे रुचि रखनेवाला ऐसा कौन व्यक्ति होगा, जो इस सूचना को पाकर खुशी से उछल न पड़े। मैं तो ईरान के गर्म और वीरान मैदानो को शीघ्र छोडने की आशा मे हर्ष से नाचने लगा। मैंने निश्चय किया कि ईरान का अध्ययन और उससे सम्बन्धित फिल्म, जिसे कि मैं बनाने की तैयारी मे था, लम्बे अरसे तक रोके जा सकते है। मेरे सामने इस समय ऐसा अपूर्व अवसर था जैसाकि गिने-चुने यूरोपियन या अमरीकी लोगो को मिला है—इस संसार से प्रायः पृथक और बहुत दूर स्थित देश तथा उसकी राजधानी ल्हासा को चलने का निमन्त्रण।

'वर्जित देश तिब्बत!' पश्चिमी देशों के निवासी इसे सदियो से ऐसा समझते रहे है। यह भेदभरा पर्वतीय राज्य, जो कि तुग हिमालय के परे संसार की छत पर स्थित है, खोजियो और अज्ञात के जिज्ञासु साहसी यात्रियो के लिए सुवर्ण देश के समान रहा है। किन्तु पश्चिमी यात्रियो के मध्य एशिया में प्रवेश के उपरान्त भी इस शान्तिपूर्ण एवं दुर्गम देश मे थोड़े ही लोग पहुच सके है। तिब्बत के राजनैतिक

एव धार्मिक शासक तथा उत्तरी एशिया के लाखो बौद्ध मतावलम्बियों के आध्यात्मिक गुरु दलाई लामा के निवास-स्थान एव कथाओ मे प्रसिद्ध राजधानी और पवित्र नगर ल्हासा मे तो और भी थोडे लोग पहुच सके है।

सो हैरत मे डालनेवाले उस तार को पाने पर मेरे आश्चर्य का अनुमान आप भली प्रकार लगा सकते है। ईरान को रवाना होने से पूर्व हमने तिब्बत की यात्रा के सम्बन्ध मे विचार-विमर्श किया था। डैडी ने कहा था कि मैं अपने कुछ भारत-स्थित मित्रो को इस विषय मे लिखनेवाला हू, किन्तु मुझे यह विचार इतना अकल्पनीय-सा लगा था कि मैंने उसे अपने दिमाग से पूरी तरह निकाल फेंका था।

हमारी इस अविश्वसनीय एव दुसाहसिक यात्रा की पृष्ठभूमि क्या थी ? मैं स्वीकार करता हू कि मैंने दलाई लामा की सरकार से प्रवेश की अनुमति प्राप्त करने के लिए कोई प्रयत्न नही किया था। यह पूर्णतया डैडी का ही परिश्रम था।

हमारा एक स्वप्न इस यात्रा के रूप मे साकार हुआ, यह कहने मे जरा भी अत्युक्ति नही है। सभवत. डैडी तो तिब्बत के स्वप्न तभी से देखते थे, जबकि बचपन मे वह क्रिपल क्रीक की पुरानी कोलोरेडो स्वर्ण खदान पर काम करते थे। जो हो, उन्होने सुवर्ण खोजियो के साथ काम करके दूर-दूर के स्थानो की यात्रा की उत्कठा प्राप्त कर ली थी और यात्रा की उत्कठा ने ही तिब्बत-भ्रमण की तीव्र अभिलाषा को निरन्तर पोषित किया तथा ल्हासा की उस यात्रा को सभव किया, जिसे 'दुर्गम यात्राओ का शिरोमणि' कहा जा सकता है।

प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान तथा उसके उपरान्त एक युवक साहसी अन्वेषक के रूप मे डैडी को ससार के तीन तथाकथित वर्जित देशो—अरब, अफगानिस्तान तथा तिब्बत—ने विशेष आकर्षित किया। अरब की यात्रा मे डैडी ने अनेक कथाओ के नायक, लारेन्स नाम के अग्रेज के विषय मे, जो लारेन्स आफ अरेबिया के नाम से प्रसिद्ध था तथा जो रेगिस्तान के युद्ध मे अरब-विद्रोह का नेता था, अनेक रोमाचक आख्यानो की खोज की। इससे उन्हे ऐसी कहानी प्राप्त हुई, जिसे

पुस्तक के रूप मे छापा गया तथा व्याख्यानो मे सुनाया गया। इसके बाद वह अफगानिस्तान मे प्रवेश पा सके, जिससे उनकी दूसरी इच्छा पूरी हुई। अफगानिस्तान के पूर्व मे काराकोरम और हिमालय की उत्तुग शृ ंगमालाओं के पार है तिब्बत, जोकि समस्त लक्ष्यो का चरम लक्ष्य है। तीस वर्ष पूर्व दक्षिणी तथा मध्य एशिया की दो वर्षो की यात्रा के सिलसिले मे डैडी भारत भा आये थे। उस समय उन्हे ल्हासा पहुच सकने की आशा थी, पर अवसर न मिल सका।

दूसरी यात्राए होती रही, जिनमे १६२६ मे पुराने ढंग के हवाई जहाज पर २८ हजार मील की यूरोप, एशिया और अफ्रीका पर उडान भी थी। इस यात्रा मे उनका परिचय हुआ एक हँसमुख और साहसी नौसैनिक काउन्ट फैलिक्स वान ल्यूकनर से, जो पथम विश्व-युद्ध के दिनो मे अतलान्तिक और प्रशान्त महासागरो पर एक पालदार जहाज पर धावे मारता फिरता था। ल्यूकनर डैडी के साथ अमरीका चला आया और उन्होने इस साहसी नौसैनिक की कहानी दो पुस्तकों मे लिखी, पर यह केवल दूसरे व्यक्ति के साहसिक कार्यो तथा यात्राओ का विवरण मात्र था, अपना कुछ नही।

रेडियो का आविष्कार हो जाने पर डैडी अनेक वर्षो तक विश्व-समाचारो के प्रसारण मे तथा दिन-रात वृत्त-चित्र तैयार करने मे लगे रहे। दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान दूसरे देशो मे सूचना-प्रसार के लिए तूफानी यात्राए भी की, जिनमे से एक लगभग सारे ससार का दौरा था। इस दौरे मे डैडी ने अपनेको फिर से चीन के मध्य, तिब्बत की सीमा पर पाया।

सौभाग्य से मैं भी डैडी के समान ही यात्राओ तथा अन्वेषणो मे रुचि रखता हूं। बचपन मे सयुक्त राज्य नौसेना दस्ते के साथ हार्न अन्तरीप के चारो ओर प्रवास पर गया। बाद मे अलास्का के एक पर्वतारोही दल में शामिल हुआ और पिछले विश्व-युद्ध मे वायुसेना मे वैमानिक के पद पर कार्य करने के उपरान्त बिकनी द्वीप-समूह तक हवाई यात्रा की और तत्कालीन वायु-सेना-सचिव डब्लू स्टुअर्ट सिमिं-गटन के साथ सारे भूमडल का परिभ्रमण किया। अन्त मे तुर्की और

फिर ईरान की यात्रा की ।

यद्यपि डैडी ल्हासा पहुचने की आशा को लगभग छोड ही चुके थे तथापि वह अपने इस पुराने स्वप्न को भूले नही थे। इसलिए मई, १९४९ मे जब अकस्मात् ही सूचना मिली कि वह ८ से १० सप्ताह तक की छुट्टी ले सकते है—१९ वर्ष के समाचार-प्रसारण के कार्य-काल मे उनको पहली छुट्टी मिल रही थी—तो उन्हे यह निश्चय करने मे देर न लगी कि इस समय कहा जाना है ।

"ल्हासा", उन्होने ममी से वडे भेदभरे भाव से कहा, "यह भले ही असभव हो, विशेष रूप से इतने थोड़े समय मे, लेकिन यह शायद मेरा लाखो मे एक के समान एक और अन्तिम अवसर है। मैं प्रयत्न करूगा ।"

तुरन्त हवाई डाक से अमरीका के भारत-स्थित नये राजदूत लाय डब्ल्यू० एन्डर्सन को उनकी नियुक्ति पर वधाई का पत्र भेजा और उसी-मे लिखा, "अब आप आश्चर्यो के देश भारत मे हैं। अत. एक आश्चर्य-जनक कार्य आप भी कर डालें ! क्या मेरे, मेरे पुत्र और तीन अन्य अम-रीकियो के तिब्वत जाने का प्रवध हो सकता है ? कुछ आशा रक्खू ?"

राजदूत महोदय ने तुरन्त उत्तर दिया और वताया कि तिब्वत के द्वार पहले से भी अधिक सख्ती से बन्द हैं। उन्होने डैडी को यह भी वताया कि हमारा दलाई लामा से कोई राजनयिक सम्वन्ध नही है। भारत-निवासी दूसरे मित्र सर गिरजाशकर वाजपेयी ने भी, जो प्रधान-मंत्री नेहरू के परराष्ट्र मन्त्रालय के एक उच्च अधिकारी थे, लाय एन्डर्सन की बात की पुष्टि की। परन्तु सभवत: दोनो ने विचार को पसन्द किया और कोई आशा न होते हुए भी डैडी की प्रार्थना को हिमालय के पार ल्हासा को भेज दिया।

हमारे स्वराष्ट्र विभाग से आधी रात गये रेडियो समाचार मिला, जो तिब्वत से भारत होकर आया था—"तुम्हे ल्हासा आमन्त्रित किया गया है। तुरन्त चले आओ,"किन्तु अनुमति पाच व्यक्तियो के लिए नही, केवल डैडी और मेरे लिए ही थी। हमे हिमालय के छोटे-से राज्य सिकिम की राजधानी गगटोक और १४,८०० फुट ऊचे नाथू ला से

होकर कारवो के मार्ग से प्रवेश करना था।

अवतक दो बहुमूल्य सप्ताह वीत चुके थे। डैडी जानते थे कि शेष समय मे यात्रा पूरी नही हो सकती, जबकि भारत से ल्हासा को, और वापसी यात्रा, कारवो के रास्ते करनी थी। यात्रा का कुछ भाग उन्हे अपने सयोजक के समय मे करना अनिवार्य हो जायगा। इस कठिनता से इस योजना को पूर्ण करने के लिए एक नये विचार का जन्म हुआ। डैडी अपना कार्यक्रम तिब्बत से ही क्यो न शुरू करे और ल्हासा पहुच-कर अपना वृत्तान्त प्रसारण करें। यह तो हवाई किलो की चरम सीमा ही थी। तिब्बत मे रेडियो की सुविधा तो बिल्कुल नही है और विजली भी नाममात्र को ही उपलब्ध हो सकती है।

फिर भी रास्ता निकला। सरलता से वहनीय रिकार्ड भरने की मशीने और रिकार्ड भरने की नई प्रणाली उपलब्ध थी, जिनकी सहा-यता से एशिया के मध्य से भी दूर-दूर तक समाचार प्रसारित किये जा सकते थे। बैटरी से सुसज्जित वे मशीने क्यो न तिब्बत साथ ले जाई जायं। इसपर डैडी का सयोजक भी सहमत हो गया और उसने उन्हे 'ससार की छत' से प्रसारण-यात्रा की एक डायरी जैसी तैयार करने के लिए छुट्टी दे दी।

आज घर पर बैठा जब मैं अपने अनुभवो को अकित कर रहा हूं, मुझे मुश्किल से विश्वास होता है कि हम तिब्बत गये भी थे, किन्तु ऊपर के कमरे मे रक्खा वैसाखियो का जोडा डैडी की उस गम्भीर दुर्घटना का तुरन्त स्मरण करा देता है, जो ल्हासा से भारत की वापसी में हुई थी, जबकि तिब्बती ग्रामीणो ने पहाडी मार्गो पर कूद-फाद करते हुए स्ट्रैचर-पर लादकर उन्हे तीन सप्ताह मे सकुशल पहुचाया था। तो भी कभी-कभी ऐसा लगता है कि यह सब और किन्ही दो आदमियो पर गुजरी होगी। जब हम सबसे ऊचे और सबसे अधिक दुर्गम देश से लौटे तो ऐसा लगा मानो हम सातवी सदी से बीसवी सदी मे पहुच गये है। हम ऐसे देश से निकले थे, जहा वाह्य ससार की याद दिलानेवाली वहुत थोडी चीजें है। हिमालय को पार करके तब्बत मे घुसने के उपरान्त हम विस्तृत क्षितिज के यात्रियो के समान हो गये थे। अक्सर

ऐसा लगता था, जैसे शागी ला के मार्ग पर जाते हुए हम, जैम्स हिल्टन के उपन्यास के पात्रो के समान, स्वप्नलोक मे विचरण कर रहे हो।

लगभग सभी स्कूलो के विद्यार्थी मध्य एशिया के मानचित्र पर अकित उस वडे भूभाग से परिचित होगे, जिसका नाम तिब्वत है। किन्तु वहा पहुचने के पूर्व हम उस स्थान की सही दूरी का अनुमान भी नही लगा सके थे। एन्टार्टिका का भूभाग साधारण तौर पर हमारे इस ग्रह—पृथिवी—का दूरतम स्थान समझा जाता है। फिर भी तिब्वत के पडोसी देशो से उसकी राजधानी ल्हासा पहुचने मे, समुद्र द्वारा दक्षिणी अमरीका से एन्टार्टिका पहुचने की अपेक्षा अधिक ममय लगता है।

हवाई जहाज द्वारा जाना तो असभव था, क्योकि तिव्वत मे वायुयान द्वारा यात्रा सर्वथा निषिद्ध थी, यहातक कि वे मोटर या अन्य गाडियो द्वारा भी यात्रा की अनुमति नही देते। जहातक यातायात के साधनो का सम्वन्ध है, तिब्वत विना पहियो का देश है। यह विचार करते हुए कि उनकी सभ्यता हमारी सभ्यता से कही प्राचीन है, इसपर विश्वास नही होता। आप तिब्वत केवल लम्बे स्थल-मार्ग द्वारा ही पहुच सकते हैं। यह है विभिन्न कारवो का रास्ता, जिससे पहुचने मे तीन से चार महीने तक लगते है। सवसे छोटे रास्ते से घोडे या खच्चर या गधो द्वारा सफर करते हुए कारवां तीन या चार सप्ताह मे वहा पहुच सकता है, जवकि रास्ते मे सहायता और सुरक्षित निकास के लिए दलाई लामा का आज्ञा-पत्र पास मे हो।

तिब्वत के पडोसी देश भी अत्यन्त दुर्गम है। इनमे वहुत ही थोडे पश्चिमी अन्वेषक मिशनरी या वैज्ञानिक पहुच पाये है। स्वय तिब्वत के साथ भी प्रकृति ने उसके निवासियो को अनभीष्ट आगन्तुको से पृथक रखने मे, कम-से-कम वर्तमान काल तक, पूर्ण सहयोग दिया है। पहाडो पर उगी पेडो की पक्ति से ऊपर समुद्र की सतह से १४००० से लेकर १८००० फुट की ऊचाई तक अवस्थित यह विस्तृत पठार, जहा तीर जैसी हवाए निरन्तर चलती है, वीरान रेगिस्तानो और पाच-पाच मील तक ऊची और हिमनदो से मडित पर्वतो की वडी शृखला से सुरक्षित

है। दो विश्व-युद्धो ने भूमडल के अधिकाश भागों मे विस्मयजनक परिवर्तन कर दिया है, किन्तु तिब्बत पर उनका कुछ प्रभाव नही हुआ। यह अभी तक लगभग दो लाख सर्वशक्तिमान बौद्ध भिक्षुओ की धार्मिक सामन्तशाही के निरकुश शासन मे है, जो उनके एकान्त मे विघ्न डालनेवाले अनाहूत आगन्तुको के प्रत्येक प्रयत्न का जी-जान से विरोध करते रहे हैं।

इस कारण इसमे कोई आश्चर्य नही कि मध्य एशिया के भीतरी भाग मे स्थित इस पहाडी देश के सम्बन्ध मे, जो भौगोलिक स्थिति तथा अपने निवासियो की स्वेच्छा के कारण ससार से अलग है तथा जहा थोडे ही अन्वेषक यात्री और विशेषज्ञ पहुच सके है, ससार के निवासियो को, विशेषतया पश्चिम के निवासियो को, अस्पष्ट एव भ्रमपूर्ण ज्ञान हो। उदाहरण के लिए एक बहुप्रचलित तथा नवीनतम अमरीकी एटलस मे तिब्बत के विषय मे निम्नलिखित सूचना दी है—"नाम मात्र के लिए चीन के अधिकार मे", यह गलत है। "क्षेत्रफल—लगभग ४,७०००० वर्गमील", गलत। "जनसख्या—१० लाख", यह भी बिल्कुल गलत। "इस छोटे देश की जनसख्या कितनी है?" यह प्रश्न लौटने पर हमसे एक अमरीकी सपादक तथा प्रकाशक ने पूछा।

हमने उत्तर दिया, "वहा जनगणना कभी नही हुई है, किन्तु साधारणतया जनसंख्या ३० और ५० लाख के बीच मे मानी जाती है। यह छोटा-सा देश भी नही है। यह सयुक्त राज्य का लगभग एक-तिहाई है, यद्यपि सीमाओ का स्पष्ट रूप से निर्धारण नही हुआ है।"

हमारे लौटकर आने के बाद से एक और सवाल कई बार पूछा गया है। तिब्बत पर मेरे सचित्र व्याख्यान के उपरान्त कई लोगो ने मुझसे पूछा, "कुछ समय पहले एक वृत्त-चित्र मे भारत के प्रधानमत्री पडित नेहरू को तिब्बत के एक हवाई अड्डे पर हवाई जहाज से उतरते तथा दलाई लामा को उनका स्वागत करते दिखाया गया था। तो जब आपके डैडी के साथ दुर्घटना हुई, तो आप दोनो को ले आने के लिए कोई हवाई जहाज क्यो नही गया? उन्हे १६ दिन तक तिब्बतियो के कधे पर क्यो ले जाया गया?" निश्चय ही वृत्त-चित्र मे किसी दूसरे देश मे अन्य दो

व्यक्तियो का चित्र लिया गया होगा। सबसे पहली बात यह है कि प्रधानमत्री नेहरू अभीतक कभी तिब्बत गये ही नही। दूसरे तिब्बत मे हवाई जहाज को उतरने की आज्ञा बिल्कुल नही है। हा, कोई हवाई जहाज दुर्घटनाग्रस्त होकर वहा गिर ही पडे तो अलग बात है। द्वितीय विश्व-युद्ध मे अमरीका के पाच वायु-सैनिको के साथ वास्तव मे यही हुआ था।

हमने यह निश्चय करने के लिए कि वे शेष ससार से इस प्रकार पृथक रहने की जिद क्यो करते हैं, तिब्बत के एक अधिकारी से ग्यान्तसी मे बहुत तर्क किये।

"क्या आप वर्तमान युग की सुविधाए नही चाहते ?" हमने पूछा।

"हा, शायद" उसने हिचकिचाते हुए कहा, "हम उन्हे उसी प्रकार स्वीकार कर सकते है जैसे अन्य भेंटो को।" लामाओ ने भी सदैव यही उत्तर दिया कि वे दृढतापूर्वक विश्वास करते हैं कि ससार मे केवल वे लोग ही औद्योगिक युग के साधनो तथा भन्नाती हुई मशीनो के पहियों के दास होने से बचे है। वे उसमे भाग लेना नही चाहते। उनके लिए विभिन्न मशीनें, उनके कल-पुर्जे और बडे-बडे पहिये, जो पाश्चात्य सभ्यता के प्रतीक है, अर्थ-शून्य खिलौना मात्र हैं। उनके विचार से, या वे हमे ऐसा विश्वास ही दिलाना चाहते हो, केवल अध्यात्म-सम्बन्धी वस्तुए ही स्थायी उपयोगिता की हैं।

यही कारण है कि इस देश मे, जो विस्तार मे सयुक्त राज्य के एक-तिहाई के बराबर है और जहा की जनसख्या ४० लाख के लगभग है, आपको हवाई जहाज, मोटर, रेल-मार्ग, गाडी, साइकल, कारखाने, चिकित्सालय, समाचार-पत्र-पत्रिकाए, पानी के नल, उष्णता और स्वच्छता की प्रणालिया गर्जेकि जीवन की आवश्यक कोई भी यान्त्रिक सुविधा या सेवाए बिल्कुल नही मिलेंगी। यहा यह बता देना उचित होगा कि कुछ जागीरदार और व्यापारियो के पास, जो भारत और चीन को कारवा भेजते रहते हैं, बैटरी से चलनेवाले रेडियो हैं, और ल्हासा मे एक विद्युज्जनित्र भी है, जो कुछ इमारतो के धीमे लट्टुओ को बिजली प्रदान करता है। यद्यपि तिब्बत ने आधुनिक सुख-सुविधा के साधनो से मुह

फेरा हुआ है, तो भी यह नही समझना चाहिए कि यह कोई आदिम और असस्कृत राष्ट्र है। इसके विपरीत विना वैज्ञानिक साधनो के दलाई लामा के देश मे उच्च श्रेणी की विशिष्ट एव अद्वितीय सभ्यता, विशेप-रूप की कला, भवन-निर्माण, धार्मिक दर्शन, साहित्य और लोकगीत के क्षेत्र मे अनेक शताब्दियो से विकसित है।

तिव्वत के सम्बन्ध मे एक प्रामाणिक अंग्रेज लेखक ग्रैहम सैडवर्ग ने सन् १९०४ मे अपनी 'तिव्वत की खोज' (एक्सप्लोरेशन ऑव तिव्वत) नामक पुस्तक मे लिखा है, "वाहरी ससार से तिव्वत मे प्रवेश पाने तथा उस देश मे यात्रा करनेवाले कुछ ही चुने हुए एव विशिष्ट व्यक्ति है।" उनका यह कथन अभी तक पूर्णत ठीक उतरता है। तिव्वती लोग, जो स्वभाव से ही विदेशियो को सदेह से देखते है, ऐसा ही चाहते है कि कम-से-कम विदेशी उनके देश मे घुस सके।

तव क्या यह आश्चर्य की वात रह जाती है कि पश्चिम के इतने थोडे निवासी ही स्वर्णिम छतो की उस विचित्र शोभा और झिलमिलाहट पर निगाह डाल सके है, जो कि अन्तिम पर्वत का पूरा मोड समाप्त करते ही ल्हासा की प्रथम झाकी के रूप मे सामने आती है।

सत्रहवी तथा अठारहवी शताब्दी मे कुछ यूरोपीय मिशनरी तिव्वत मे चुपचाप घुस गये, किन्तु वे अपने पैर जमाने मे असमर्थ रहे। वाद मे कुछ गिने-चुने यूरोप-निवासी, जिनमे अनेक प्रसिद्ध अन्वेषक और भूगोल-वेत्ता भी थे, छद्मवेष मे यात्रा करने के कारण अकथनीय विपत्तियो को झेलकर पहुचे। १९०४ मे जव ब्रिटेन ने एक सैनिक दल-व्यापार-सवधी सुविधाए प्राप्त करने के लिए तिव्वत भेजा, तवसे १९४७ मे भारत के स्वतन्त्र होने तक, ब्रिटिश वाणिज्य एव राजनैतिक एजेन्ट, केवल भारतीय सीमा के मार्ग से ही तिव्वत के घनिष्ट सम्पर्क मे रहे। जहातक अमरीका-निवासियो का सम्वन्ध है, चाहते हुए भी केवल थोडे ही व्यक्ति ल्हासा पहुच सके है। वास्तव मे ल्हासा आने की अनुमति पानेवालो मे हम सातवे और आठवे व्यक्ति थे और तिव्वत के शासक द्वारा, जोकि वहा ईश्वर के समान पूजा जाता है, सरकारी तौर पर भेट के लिए बुलाये जानेवाले चौथे और पाचवे ही थे। सग्रहालय दलो का

नेता और प्रसिद्ध प्रकृतिविद स्वीडन कटिंग हमारे देश का ल्हासा पहुचनेवाला प्रथम मनुष्य था, जो वहा सन् १६३५ मे पहुचा। दो वर्ष वाद उसे अपनी पत्नी के साथ लौटने के लिए भी आमन्त्रित किया गया। कटिंग-दम्पती दलाई लामा से अवश्य भेंट करते, यदि उनकी गद्दी १६३३ से १६४० तक खाली न पडी रहती। इस पवित्र नगर मे प्रवेश पानेवाला तीसरा अमरीकी एरीजोना-निवासी थियोस वर्नोर्ड था। दलाई लामा से भेंट का सम्मान प्राप्त करनेवाले सयुक्त राज्य के दो सैनिक अधिकारी, ले० कर्नल ईलिया टाल्स्टाय और कैप्टिन ब्रुक डोलन पहले और दूसरे अमरीकी थे। उन्हे यह अवसर सन् १६४२ मे प्राप्त हुआ। उन्हे सैनिक सेवा विभाग ने मध्य एशिया होकर किसी नवीन रास्ते से शत्रु द्वारा घिरे हुए चीन को रसद पहुचाने का मार्ग ढूढने के लिए भेजा था। ल्हासा की भूमि पर छठा और महामहिम से भेंट करनेवाला तीसरा व्यक्ति आर्क स्टील था। यह भी द्वितीय विश्व-युद्ध के काल मे ही मिला। उस समय वह शिकागो से प्रकाशित 'डेली न्यूज' का वैदेशिक सवाददाता था। उसने वाद मे लामाओ के देश तिब्वत के विषय मे खोजपूर्ण लेखमाला निकाली। इनके वाद हमारा स्थान था।

२ | यात्रा की तैयारियां

डैडी का तिब्वत-सबधी समाचार पाते ही मैने तेहरान से फारस की खाडी पर स्थित वसरा बदर को तुरन्त प्रस्थान कर दिया। उस जन-सकुल इराकी वन्दरगाह से, जो कि कथाप्रसिद्ध नाविक सिन्दवाद का घर कहा जाता है और जो आजकल खजूरो के निर्यात का प्रमुख केन्द्र है, मैं पान-अमरीकन वायुयान से वड़े आराम से भारत की ओर उड चला।

मेरे वायुयान ने मुझे डैडी से कई दिन पूर्व कलकत्ता पहुंचा दिया। इससे मुझे यात्रा के लिए आवश्यक सामान और रसद एकत्र करने का समय मिल गया। मैं ठीक ऐसे मौसम मे वहा पहुंचा था, जबकि मानसूनी बादल रात या दिन किसी भी असुविधाजनक समय फट पडते थे। सडके नदिया बन जाती थी। कलकत्ते का जनसमूह बगल मे जूते दबाये उनको पार करता था और मै भी छपछप करता एक से दूसरी दूकान पर सामान इकट्ठा करता फिरता था।

सौभाग्य से यात्रा का अधिकतर प्रारभिक कार्य किया जा चुका था। हमारे देश के कलकत्ता-स्थित मुख्य समुपदेष्टा (कौसल जनरल)' चार्ल्स डैरी ने यह निश्चय करने के लिए कि आवश्यक वस्तुए कहा से अच्छी मिल सकती है, अनेक दूकानो की विचारपूर्वक जाच कर ली थी। हमारे दिल्ली दूतावास के प्रथम सचिव जैफर्सन जोन्स भी श्री डैरी का हाथ बटाने आगये थे और लामयिक (तिब्बत का प्रवेश-पत्र) भी तैयार करा दिया था, जिसके बिना कोई भी पश्चिम-निवासी तिब्बत मे सुरक्षित रूप से यात्रा नही कर सकता था।

अत्यन्त ऊची पर्वत-श्रेणियो पर और ससार के ऐसे सुदूर-स्थित देश की यात्रा के लिए बडी सावधानी से योजना बनाने की आवश्यकता है। यदि हम कोई भी आवश्यक वस्तु भूल जाय तो यह दुर्भाग्य ही होगा। इस यात्रा मे भोजन की गाडिया या छोटे-मोटे होटल मिलनेवाले नही थे। हमारे सामान की कुछ विशेष वस्तुए ये थी—घोडो की जीन और काठी, सैनिक चारपाइया, (आराम से सोने के लिए) बैग, मच्छर-दानियां, टार्च, मुड जानेवाली मेज और दो कुर्सिया, कैनवस का एक टब (स्नान के लिए)—इसका कभी उपयोग नही किया गया—और सिकिम के अत्यधिक वर्षावाले वनो तथा तिब्बत के पठार को पार करते समय समान को ढकने के लिए न भीगनेवाली कैनवस की चादरे। यात्रा के लिए हमारे वस्त्र थे—बर्फ पर फिसलने के खेल के लिए गर्म पेन्ट, बूट, ऊनी कमीजे, स्वेटर, टोपी, हवा रोकनेवाले चश्मे और रबर के बने बरसाती सूट। ये सब चीजे डैडी अमरीका से अपने साथ लाये।

औषधियो का एक अत्यन्त उत्तम बक्स तो ऐसी दूर की यात्रा मे,

जहा आधुनिक ओषधिया अलभ्य हो और तिब्बत मे तो ये सर्वथा अप्राप्य है, सबसे पहले साथ रखने की वस्तु है। किन्तु अपनी जल्दवाजी मे मैंने इस ओर पर्याप्त ध्यान नही दिया। मैंने जो वक्स तैयार किया उसमे जोक के चिपक जाने, साधारण कटाव जाने, मलेरिया, पेचिश और सिर दर्द ऐसे रोगो की दवाइया थी। ल्हासा से लौटते समय ये दवाइया हमारी आवश्यकताओ की, जबकि हमपर विपत्ति पडी, पूर्ति न कर सकी, क्योकि इनमे पीडा को शान्त करनेवाली औषधि या हड्डी को वैठाने के लिए बाधी जानेवाली लकडी की पटरिया आदि कुछ नही थी।

कलकत्ते मे मैंने रसोई का सारा सामान भी वर्तन से लेकर पौछने के तौलिया तक, एकत्र किया। रसोई की सबसे आवश्यक वस्तु, रसोइये के वाद, जिसे हमने साथ मे रक्खा, अमरीका का वना तथा सरलता से वहनीय कुकर था। इसे मैंने ईरान मे भी अपने साथ रक्खा था। कोलमैन प्राइमस स्टोव किसी भी यात्रा के लिए आवश्यक वस्तु है। इसकी टार्च के समान तेज लपट से चीजे शीघ्र गर्म हो जाती है। इसके अभाव मे हमे अनेक चीजे लगभग कच्ची ही खानी पडती। हमने अपने स्टोव का तिब्बत की रसोई तक मे इस्तेमाल किया, क्योकि याक के गोवर की आग पर तैयार किये हुए भोजन मे विचित्र प्रकार की गन्ध भर जाती थी, जो हमे अच्छी नही लगती थी।

अधिकतर हम यात्रा मे प्राप्य वस्तुओ पर निर्भर रहना चाहते थे, फिर भी सावधानी की दृष्टि से हमने एक मास के लिए भोजन की सामग्री खरीद ली। एक वडी किराने की दूकान से मैंने आठ पेटिया तैयार की। हरएक पेटी का वजन ६५ पौड था और हरएक मे हम दोनो के लिए ६ दिन के लायक भोजन था।

ल्हासा के मार्ग मे भिन्न-भिन्न समयो के भोजन के लिए हमने खाद्य वस्तुओ की नीचे लिखी सूची वनाई

सुबह का नाश्ता—उवला हुआ वेर के आकार का फल या सेव के टुकडे, एक प्याला ओट मील या गेंहू का दलिया, सूखा मास, विस्कुट, मुरब्वा और मक्खन। द्रव पदार्थो मे ओवल्टीन, काफी, चाय या कोको मे से दूध और चीनी के साथ कुछ भी ले लेते थे।

दोपहर का भोजन—यह हम अधिकतर घोडे की पीठ पर ही लेते थे। यह साधारण किन्तु सार-युक्त रहता था। इसमे बिस्कुट और पनीर, सार्डीन मछली, चाकलेट, सूखा अगूर, खजूर और अजीर रहता था। हमारा बडा और पूर्ण भोजन थकाकर चूर-चूर करनेवाली घोडे की पीठ पर की गई सारे दिन की यात्रा के बाद शाम को होता था। एक प्याला गोश्त का शोरवा लेने के बाद मक्खन लगे बिस्कुट और मुरब्बा, उसके बाद डिब्बा-बन्द मांस की एक गरमा-गरम प्लेट या सालमन मछली, उसके साथ कोई ताजी सब्जी, जो कि रास्ते मे मिल सके। भोजन के अन्त मे फिर सूखे मेवे लेते थे, क्योकि शीत की अधिकता के कारण तिब्बत मे फल बहुत कम होते है। केवल गर्म और निचली पूर्वी घाटियो मे कुछ आडू और अखरोट होते है। उसके बाद अधिक मात्रा मे कोको या ओवल्टीन लेते थे।

हमारे भोजन मे विविधता का जो कुछ भी अभाव था, उसे हमारी एकलक्ष्यता की शक्ति ने, जिसकी ऊबड़खाबड पहाडी मार्गो की यात्रा मे अत्यन्त आवश्यकता होती है, पूरा कर दिया था।

वायुयान द्वारा प्रशान्त महासागर पार करके कलकत्ता मे मुझसे पूर्व डैडी ने प्रकृति-वेत्ता और अन्वेषक सीडम कटिंग से भेट की। तिब्बत की तीन-तीन यात्राए कर चुकने के कारण वे सब असुविधाए जानते थे और उनके सुझाव अमूल्य सिद्ध हुए। उन्होने आवश्यक वस्तुओ की सूची लिखाई और छोटे रास्ते बताये, जिनसे समय की बचत हो सकती थी। भोजन के सामान को विशेप बक्सो मे बन्द करने के विषय मे दिये गए उनके सुझावो के लिए हम उन्हे मार्ग मे प्रतिदिन धन्यवाद देते थे, क्योकि उनके कहने से ही हमने प्रत्येक बक्स को सर्वथा पूर्ण बनाया, जिसमे सूप मे नमक तक सबकुछ मिल जाय और इससे हमारा प्रत्येक विश्राम-स्थल पर भिन्न-भिन्न वस्तुओ को खोजने के लिए होनेवाला परिश्रम बच गया।

सीडम कटिंग के 'करने' और 'न करने' के बारे मे दिये गए सुझावो ने हमे अनेक भद्दी भूलो से बचाया, जो सदियो से शालीनता और अपने विशिष्ट नम्रता के नियमो के अनुसार चलनेवाले लोगो के साथ, उनके

आचार-व्यवहार को न जानने के कारण, हो सकती थी। उदाहरण के तौर पर उन्होने हमे दलाई लामा तथा ल्हासा के अन्य उच्च पदाधिकारियो के लिए तथा मार्ग मे मिलनेवाले अन्य अधिकारियो के लिए, उचित उपहार ले जाने के बारे मे सतर्क कर दिया। तिब्बत मे उपहारो का आदान-प्रदान वडे पैमाने पर होता है। हमे अपने विजिटिंग कार्डो की भी वडी गड्डिया ले जानी पडी। तिब्बत-निवासी से भेंट करने पर उसे वडे आकार का सफेद रेशमी रूमाल, जिसे वे कत्ता कहते है, देना होता है। मेजबान भी वदले मे अपना कत्ता भेंट मे देता है। यह आदान-प्रदान की रसम वडे विस्तार तथा नियमो के साथ पूरी की जाती है।

प्रकृति-इतिहास-सम्बन्धी अन्वेषणो के सिलसिले मे की गई अनेक यात्राओ मे सीडम कटिंग कई वार तिब्बत के सीमान्त तक जा चुके थे। स्वभावत उनके मन मे सीमा पार करके ल्हासा पहुचने की तीव्र अभिलाषा थी, किन्तु विना सरकारी अनुमति के उन्होने प्रवेश नही किया। सन् १९३० की अपनी प्रथम यात्रा मे वे ग्यान्तसी तक गये। वहातक जाना कठिन न था, क्योकि तिब्बत के साथ विशेष सन्धि के आधार पर व्यापार की उस मडी तक जाने के कुछ आज्ञा-पत्र ब्रिटिश सरकार दिया करती थी। फिर घर लौट आने पर भी उन्होने उस उद्देश्य को नही भुलाया। तेरहवें दलाई लामा के लिए, जो कि तिब्बत के धार्मिक एव सासारिक क्षेत्रो मे वर्तमान नवयुवक प्रशासक के पूर्वाधिकारी थे, कटिंग ने उपहार भेजे, जिनमे मुख्य वस्तुए थी अमरीकी वास्तु कला की पुस्तके, स्वयचालित सुनहरी घडी, शीशे का मथानीदार महा-परिचालक, जो दलाई लामा की मक्खन मिली चाय को मथने के काम आ सकता था तथा अल्सेशियन और जर्मन हाउन्ड कुत्तो का एक-एक जोडा। इसके प्रत्युत्तर मे महामहिम ने कटिंग के लिए एस्पोस[1] का जोडा इस आदेश के साथ भेजा, "इनकी सावधानी से देख-भाल की जाय।" इसके फल-स्वरूप एक अमरीकी नागरिक और जीवित देवता के रूप मे पूजित तिब्बत के प्रमुख शासक के मध्य एक अभूतपूर्व निजी

---

१. विशेष नस्ल का तिब्बती कुत्ता।

पत्र-व्यवहार प्रारम्भ हो गया, यहांतक कि तेरहवे दलाई लामा ने कटिंग से उनका सन्देश लेकर वाशिंगटन जाने तक को कहा, जिससे तिव्वत और संयुक्त राज्य अमरीका के वीच अधिक सीधे संपर्क स्थापित हो सकें।

इस प्रकार स्नेह-पूर्ण और निरन्तर वढते पत्र-व्यवहार से कटिंग को पूर्ण आशा थी कि दलाई लामा से शीघ्र ही तिव्वत का आमन्त्रण मिलेगा। पर केवल प्रतीक्षा ही रही। अन्त मे सन् १९३३ के वडे दिन पर उन्हे तिव्वत की सर्वोच्च परिषद कशग से सूचना मिली कि "१७ दिसम्वर को पूज्यपाद का कुछ काल के लिए स्वर्ग प्रयाण हो गया है।"

सीडम कटिंग अव द्विविधा मे पड गया कि उसे कभी ल्हासा देखने का अवसर मिलेगा या नही। किन्तु अपने उद्देश्य मे अथक कटिंग ने अपने मैत्री-पूर्ण सवध वदलकर कशग और रीजेन्ट के साथ चालू कर दिये। अन्त मे सन् १९३५ मे उन्हे चिर-प्रतीक्षित आमन्त्रण मिला। एक वार ल्हासा पहुच जाने के वाद उन्होने अधिकारियो पर ऐसा अनुकूल प्रभाव डाला कि उन्हे सन् १९३७ मे अपनी पत्नी के साथ पुन आने का निमन्त्रण मिला। इसका एक कारण यह था उन्होने तिव्वत-निवासियो की वहुत प्रशसा की और उनको पसन्द किया। उन्होने अपनी पुस्तक 'दी फायर ऑक्स एण्ड अदर ईयर्स' मे लिखा है कि "यह पहला अवसर था जव एक गोरी महिला को अनिश्चित अवधि के लिए तिव्वत मे आने और रहने का निमन्त्रण मिला था।"

कटिंग-दम्पती का ल्हासा मे प्रेम-पूर्ण स्वागत हुआ। सरकार ने उनके रहने के लिए प्राइवेट पार्क के वीच मे वने हुए एक मनोहर महल-जारा लिगा मे व्यवस्था की, जिसके हरे मैदान मे सरपत के कुज थे तथा एक छोटा झरना वीच से होकर वहता था। उनके निवास के काल मे ही उस पार्क मे पोटाला[1] से आये हुए वाल-लामाओं का दस दिन का शिविर हुआ, जिसमे उन्हे तिव्वत के भावी नेताओं को खेलते-कूदते, आराम करते और स्वच्छन्द भोजन करते देखने का अवसर

---

१. दलाई लामा का विशाल प्रासाद।

के लिए भेजे जाते है, पर उनपर ध्यान ही नही दिया जाता था।

अगस्त १९४९ मे ढालू कगारवाली दीवारो और तग मोडो पर चलते हुए और पुराने कारवो के रास्तो पर सिर चकरा देनेवाले ऊचे पहाडो के दर्रो को पार करते हुए डैडी और मैं जव पवित्र नगर की ओर वढ रहे थे तव इन प्रश्नो पर वात कर रहे थे। हमे इसका कोई स्पष्टीकरण नही मिल रहा था। हम केवल इतना ही जानते थे कि सौभाग्य से स्वीकृति तत्काल प्राप्त हो गई थी। हमे सदेह था कि इसका उत्तर केवल एक शब्द था, साम्यवाद। वाद मे तिब्वती अधिकारियो ने हमारे अनुमान को पुष्ट किया।

तिब्बत साम्यवाद से भयभीत है। सन् १९४९ के ग्रीष्म तक चीन का अधिकतर भाग लाल हो चुका था और यह स्पष्ट था कि चीन मे कार्य पूर्ण होने पर अगला लक्ष्य तिब्वत ही होगा। जव हम ल्हासा पहुचे तव बातचीत का यही प्रमुख विषय था।

साम्यवादियो के उद्देश्यो से भली भाति अवगत होने के कारण ल्हासा की सरकार विचार कर रही थी कि एशियाई साम्यवाद के विरुद्ध तिव्वत की सुरक्षा की गम्भीर समस्या को अमरीका के समक्ष किस प्रकार रक्खा जाय। साथ ही, वे अमरीका और सारे ससार पर यह प्रकट करना चाहते थे कि वे स्वतन्त्र राष्ट्र है और सदैव स्वतन्त्र रहे हैं।

इसी मनोवैज्ञानिक अवसर पर, जब उच्च तिब्बती अधिकारी इस विषय पर विचार-मग्न थे कि अमरीका को तिब्बत से लाल खतरे की सूचना पहुचाने का सर्वोत्तम ढग क्या हो, हमारी प्रार्थना भारत से भेजी गई। उन्होने एक दाव लगाया और हमे तिब्बत आमन्त्रित किया। इस कारण जन्म-जन्मातर मे प्राप्त होनेवाला अवसर हमे मिला।

इस छोटे-से देश पर, जिसके निवासी अपने कार्य मे ही व्यस्त और अपनी अनूठी सस्कृति के अनुसार शान्तिपूर्वक अलग रहना चाहते है, क्यो आक्रमण किया जाता है और हमे, जो दुनिया के एकदम दूसरे भाग मे रहते है, इससे क्या प्रयोजन है ?

सकट-काल अत्यन्त निकट है। उत्तर और पूर्व मे असख्य विजयी चीनी साम्यवादी फौजें है, जिनको राष्ट्रवादी चीन के पतन के उपरान्त

कोई काम नही है । चीन के साम्यवादी रेडियो ने पिछले कुछ महीनो मे अनेक वार तिब्बत को 'छुटकारा' दिलाने की अपनी योजनाओ का समाचार प्रसारित किया है । तिब्बत मे आधुनिक सुविधाए भले ही न हो, किन्तु उसके शासनाधिकारी पर्याप्त बुद्धिमान है और उन अत्याचारो और विपत्तियो से भली भाति परिचित है, जो साम्यवादी 'छुटकारे' ने दूसरे छोटे देशो पर ढाई है । हमारे आगमन के समय केवल १० हजार तिब्बती सेना, जिसके पास युद्ध के अत्यन्त पुराने शास्त्रास्त्र थे, पर्वत-श्रृ खलाओ के पीछे मातृभूमि की रक्षा के लिए तैनात थी । हमे यह भी वताया गया कि १ लाख व्यक्तियो की जल्दी ही भर्ती की जा रही है और उन्हे भारत से खरीदे गये हल्के शस्त्रो से लैस किया जा रहा है, किन्तु नवीनतम सामग्री और उचित प्रशिक्षण के अभाव मे कट्टर साम्यवादी सेनाओ का सामना करने के लिए वे पर्याप्त सिद्ध न होगे ।

साम्यवादी कई कारणो से तिब्बत पर अधिकार चाहते हैं । यदि ल्हासा के पवित्र नगर पर उनका आधिपत्य हो जायगा, तो वे मध्य और पूर्वी एशिया की वौद्ध जनता पर महान प्रभाव स्थापित कर सकेगे । किन्तु प्रधान कारण कूटनीतिक है, क्योकि तिब्बत पर अधिकार होने से उनकी १८०० मील लम्वी सीमा-पक्ति भारत से मिल जायगी और भारतवर्ष के विशाल प्रायद्वीप पर आक्रमण करने तथा वहा की ४० करोड आवादी पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए पर्वतो से सुरक्षित एक आदर्श सैनिक अड्डा यहा वन सकेगा । चीन की कम्यूनिस्ट सेनाओ और भारत के मध्य मे केवल तिब्बत ही अवस्थित है और भारत सम्पूर्ण एशिया महाद्वीप पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए एक प्रकार की कुजी है ।

इसके साथ ही तिब्बत की खनिज सपत्ति का भी महत्व है । कुछ समय पहले ब्रिटेन के विदेश-विभाग ने घोषित किया था कि अन्वेषक दलो ने तिब्बत मे ऐसे खनिज पदार्थों की खोज की है, जिसके मूल्य का अनुमान नही लगाया जा सकता । लन्दन के इस घोषणा-पत्र का आशय यह था कि यह नवीन पदार्थ, कोई रेडियो सक्रिय धातु है अर्थात अणु-वम वनाने योग्य पदार्थ ।

हमे अपनी यात्रा की तैयारिया इतनी शीघ्रता मे करनी पडी कि यात्रा से पूर्व हमारा वशिंगटन से कोई भी विचार-विमर्श नही हो सका इतना ही नही, बल्कि डैडी यात्रा की आतुरता मे राष्ट्रपति ट्रूमैंन से यह भी पूछना भूल गये कि क्या वे दलाई लामा के लिए कोई भेंट या पत्र देना चाहते है ? यह एक सामान्य शिष्टाचार है, ऐसी परपरा जिसे उस वर्जित देश मे आमन्त्रण पाने के सौभाग्यवाले व्यक्ति को कभी नही भूलना चाहिए ।

इस प्रकार यह सारा मामला उतना ही व्यक्तिगत था, जितना हमारे भोजन की मछली का डिब्बा । हमने बीच-बीच मे अमरीका को अपने वृत्त प्रसारित किये, जिनमे हिमालय के शिखरो पर यात्रा का और विशिष्ट तिब्बती लोगो से भेट का वर्णन था । ये लघु और दीर्घ दोनो तरगो पर समाचार-प्रणाली द्वारा रेडियो के बृहत जाल पर प्रत्येक रात्रि को प्रसारित होते थे । इस प्रकार हमारी यात्रा के किसी भी भाग मे कुछ भी भेदपूर्ण या गोपनीय नही था ।

तिब्बत मे हमे जो सबसे उपयोगी वार्तालाप करने का अवसर मिला, उसमे तिब्बत के दो कुशल विदेश मन्त्रियो के साथ हुआ वार्तालाप भी था । इनमे से एक थे भिक्षु ल्यूसेर जाजा-लामा और दूसरे थे सामान्य नागरिक सरखग जाजा, एक स्वतन्त्र विचारक । दोनो तिब्बती इतिहास के माने हुए विशेषज्ञ थे । जोकग के नाम से प्रसिद्ध ल्हासा के पवित्र मठ के समीप स्थित अपने कार्यालय के भवन मे बैठे हुए उन्होने हमारे सामने तिब्बत की दो मुख्य समस्याओ, साम्यवाद और चीन का अत्यन्त विशद विश्लेषण प्रस्तुत किया । हमने भारत मे सुनी हुई अफवाहो के विषय मे कि ल्हासा मे साम्यवादी विद्रोह हुआ है, जिसमे अनेक चीनी और तिब्बती लोग मारे गये है, उनसे पूछा ।

"नही, यह सत्य नही है ।" दोनो मन्त्रियो ने एक स्वर मे जोशीली तिब्बती भाषा मे उत्तर दिया, जिसका दुभाषिये ने अनुवाद करके हमे बताया ।

उनका इस अफवाह का स्पष्टीकरण अर्थपूर्ण था, क्योकि तिब्बत साम्यवाद से, जो कि उसके जीवन-दर्शन के सर्वथा विपरीत है, घृणा

करता है तथा डरता है और तिब्बती लोग इस भौगोलिक तथ्य को स्वीकार करने मे कि लाल चीन उनका निकटतम पड़ोसी है, विशेष प्रसन्नता प्रकट नही करते । किन्तु मै सबसे पहले चीन-तिब्बत-सबधो की पृष्ठ भूमि को, जैसीकि मुझे दोनो मन्त्रियो ने बताई, सक्षेप मे बताने का प्रयत्न करूगा ।

ऐतिहासिक, भौगोलिक और सास्कृतिक विचार से तिब्बत और चीन मे अनेक सदियो से निकट सपर्क रहा है, जिसके आजतक अनेक प्रमाण मिलते है । पूर्वी पठार के तिब्बतियो ने भोजन करने की सीको से लेकर चोटी रखने तक के अनेक चीनी रिवाज ग्रहण कर लिये है । चीनियो ने चोटी रखनी छोड दी है, किन्तु उच्च वर्ग के तिब्बती अभी तक रखते है । धनवान तिब्बत-निवासी चीनी रेशम पहनते है, अपने घरो को चीनी फर्नीचर और चीनी मिट्टी के खिलौनो आदि से सजाते है । अमरीका की खोज से भी पहले से अनेक कारवां पुराने कठिन व्यापार-मार्गो से धीरे-धीरे यात्रा करने के उपरान्त तिब्बती ऊन चीन को ले जाते थे तथा चीन की चाय तिब्बत पहुचाते थे । सभी महान तिब्बती मठ उन प्राचीन बहुमूल्य चीनी पदार्थो से भरे है, जो चीनी सम्राटो ने उन्हे भेट मे दिये है ।

सातवी से नवी ईसवी सदी तक चीन और तिब्बत मे बराबर युद्ध चलता रहा । इस समय तक तिब्बत बौद्ध धर्म के शान्तिमूलक प्रभाव के अन्दर नही आया था, उस समय वह एशिया का एक महान सैनिक देश था, जिसमे चोट करने तथा चोट झेलने की शक्ति थी । सातवी सदी के मध्य मे चीन ने ल्हासा पर कब्जा कर लिया, किन्तु सन् ७६६ मे तिब्बत ने चीनियो पर अंतिम विजय प्राप्त की और उन्हे (चीनियो को) अपनी राजधानी, जो कि उस समय चाग-आन मे थी, बचाने के लिए बहुत भेट देनी पडी । कुछ वर्ष बाद तिब्बत ने फिर पश्चिमी चीन पर धावा किया । इस बार चीन को एक सन्धि पर हस्ताक्षर करने पडे, जिसके अनुसार झील कोकोनूर तिब्बत की उत्तर-पूर्वी सीमा नियत हुई । इस तरह तिब्बती अपने प्यारे पर्वतीय प्रदेश पर अधिकार किये रहे ।

वौद्ध धर्म की प्रगति के साथ तिव्वतियो ने सामरिक शक्ति खो दी, किन्तु धार्मिक प्रभाव प्राप्त कर लिया। चीन मे मगोल वश के सस्थापक कुवलई खा को ल्हासा के समीपस्थ शाक्य मठ के प्रधान भिक्षु ने वौद्ध धर्म के लामा पन्थ का अनुयायी बना लिया था और उस महान खान ने अपने मैत्री प्रदर्शन के रूप मे प्रधान भिक्षु को तिव्वत का राजनैतिक शासक नियत कर दिया। इस तरह तिव्वत पर भिक्षु शासको की परम्परा चली।

कुछ समय वाद सम्पूर्ण मगोलिया तिव्वती वौद्ध धर्म का अनुयायी हो गया। मगोलो ने ही अल्ता खा के राज्य-काल मे ल्हासा के भिक्षु शासक को 'दलाई लामा वज्रधर' की उपाधि दी, जिसका अर्थ है सर्वव्यापी लामा, जो वज्र को लिये है। दलाई लामा की आध्यात्मिक प्रभुता तथा धार्मिक महत्ता चीन, मगोलिया एव अन्य अनेक मध्य एशियाई देशो मे और अपने देश मे भी स्वीकार की गई। जव पाचवा दलाई लामा, जो कि महान पचम कहलाता था, मचु वश के राज्य-काल के प्रारम्भ मे पीकिंग गया तो सम्राट ने अपने महान नागसिंहासन से उतरकर उसका स्वागत किया, जिससे यह प्रकट होता है कि दलाई लामा स्वतन्त्र शासक समझा जाता था। उन दिनो, जवकि चीनी सम्राट स्वेच्छाचारी शासक थे, विशेषकर चीन मे ही यह वहुत वडी वात थी।

मचु शासको के ही समय मे १७ से १६ वी सदी तक चीन ने तिव्वत पर अपना नियन्त्रण कठोर किया। चीनी रेजीडेन्ट, जो अम्वन कहलाते थे, स्थायी रूप के ल्हासा मे रहने लगे। तिव्वत पीकिंग को वार्षिक भेंट भी भेजने लगा। हमे वताया गया कि 'तिव्वत एक वर्जित प्रदेश है' ऐसी धारणा विदेशो मे फैलानेवाले चीनी ही थे, तिव्वती नही। जवतक चीनियो ने भीतरी मामलो मे अधिक हस्तक्षेप नही किया, यह प्रवन्ध तिव्वतियो के लिए सुविधाजनक रहा, क्योंकि वे दूसरे देशो का अतिक्रमण नही चाहते थे। जव मचु शासको की शक्ति क्षीण होने लगी, उनका तिव्वत पर प्रभुत्व ढीला पड गया। चीन तिव्वत को एक वाह्य प्रान्त समझता रहा और उसे वाह्य प्रान्तो के प्रवन्ध मे कठिनता ही

रहती थी। उन्नीसवी सदी के अन्तिम भाग मे तेरहवे दलाई लामा के प्रयत्नो के फलस्वरूप तिब्बत चीन के प्रभाव से लगभग वाहर हो गया।

सन १९११ मे जब सनयात सेन विद्रोह ने मञ्चु शासको को निकालकर चीनी गणतन्त्र की स्थापना की, तव तिब्बत ने अपनेको स्वतन्त्र घोषित कर दिया और चीनी प्रभुता को विधिपूर्वक समाप्त करके अम्बन को भी चीन वापस भेज दिया।

"तव से तिब्बत पूर्ण स्वाधीन है," सरखग जाजा ने अपनी लाख के वार्निश से रगी लाल मेज को वास के कलम से ठोकते हुए कहा और गेरुआ वस्त्रधारी ल्युशेर लामा ने उत्साहपूर्वक उसके समर्थक मे गर्दन हिलाई।

किन्तु चीनियो ने तिब्बत की स्वतन्त्रता-घोपणा को सरकारी तौर पर कभी नही माना। १९३३ ई० मे तेरहवे दलाई लामा के स्वर्गवास के अवसर पर चाग काई शेक की सरकार ने ल्हासा के प्रति गहरी सहानुभूति जताने के लिए एक मिशन वहा भेजा। इस मिशन का एक भाग, जिसके पास वेतार के तार द्वारा समाचार भेजने का यन्त्र भी था, सीमा-सम्वन्धी विवादो को हल करने के बहाने रुका रहा। तिब्वत ने चीन के इस दल को अस्थायी समझा, पर चीनी इसे स्थायी समझने लगे। जव वर्तमान दलाई लामा सन् १९४० मे गद्दी पर बैठे, इस अवसर के लिए दूसरा मिशन राजधानी मे आया। चीनी राजदूत तथा ब्रिटिश प्रतिनिधि दोनो ही अभिषेक के उत्सव मे पोटाला मे वुलाये गए। वाद मे चीनी समाचार-पत्रो ने प्रकाशित किया कि चीनी राजदूत ने, जो कि दलाई लामा के पीछे चल रहा था, उनके धार्मिक अभिपेक की घोषणा की। चीनी समाचारो के अनुसार उस समय वालक दलाई लामा ने अधीनता स्वीकार करते हुए झुककर आभार प्रदर्शन किया। तिव्वती रोप-पूर्वक इसका निषेध करते है, किन्तु दुर्भाग्य से इन झूठे समाचारो के खडन के लिए तथा वहा होनेवाली घटनाओ का अपनी ओर से विवरण देने के लिए तिव्वत मे कोई समाचार ऐजन्सी नही है। अधिकतर चीनी भी, जो अभिपेक के अवसर पर आये, पहले सैनिक दल के

साथ ल्हासा मे रुक गये। सन् १९४५ मे तिब्बतियो ने च्याग काई शेक को तिब्वत की स्वाधीनता सरकारी रूप मे स्वीकार करने को प्रेरित किया किन्तु मार्शल उनको टालते रहे। उन्होने सदा यही कहा कि जहातक विदेशी मामलो का सम्बन्ध है, तिब्बत चीन का एक बाह्य प्रान्त मात्र है। तिब्बती जोर-शोर से इसका विरोध करते थे और इसपर कुछ ध्यान न देते थे। उस समय इधर-या-उधर होने का उनके लिए कुछ महत्व भी न था। एक घिरा हुआ देश होने के कारण उसकी विदेशी मामलो की कोई समस्या भी न थी, केवल चीन और भारत से व्यापार-सबध मात्र था।

तभी क्षितिज पर वास्तविक विपत्ति प्रकट हुई। चीन मे गृह-युद्ध प्रारम्भ हो गया। चीनी साम्यवादी विजयी हो रहे थे। राष्ट्रीय सरकार की सब ओर हार हो रही थी। दलाई लामा के परामर्श-दाताओ ने इस भय से कि जब साम्यवादी समस्त चीन पर अधिकार कर लेंगे, वे तिब्बत को विलीन करने की भी योजना बनायेंगे, उन चीनी अधिकारियो को निकालने की योजना बनाई, जो विशेष मिशनो के बहाने ल्हासा मे आ गये थे और अवाछित निवासियो के समान वहा स्थायी रूप से अड्डा जमाये थे। तिब्बती अधिकारियो ने यह भी अनुमान किया कि साम्यवादी सरकार अपना मिशन भी ल्हासा भेजना चाहेगी और चीनी साम्यवादियो के कारण बौद्ध धर्मानुयायियो के इस अत्यन्त पवित्र देश मे हस्तक्षेप का खतरा बढ जायगा।

तिब्बत सरकार ने स्थिति को शीघ्र स्पष्ट करने का निश्चय किया और यह अस्वीकृत करते हुए कि तिब्बत पर सन् १९११ से चीनी प्रभाव की छाया मात्र भी थी, चीन से अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता घोषित कर दी। तब यदि राष्ट्रवादियो को साम्यवादियो ने चीन से निकाल दिया, वे माओ-त्से-तुग की साम्यवादी सरकार से कह सकेंगे कि "हम उसी प्रकार स्वतन्त्र देश है, जैसे कि तुम। हम यह नही कहते कि तुम ल्हासा मे राजनयिक मिशन नही भेज सकते, पर तुम हमे अपनी व्यवस्था चलाने के विषय मे निर्देश नही दे सकते।" हमे दोनो मन्त्रियो ने बताया कि यही अवसर था जबकि साम्यवादियो से सहानुभूति रखनेवालो से

भी छुटकारा पाया जा सकता था। ल्हासा का एक चीनी जलपानगृह, जो कि आन्दोलनकारियो के मिलने का अनौपचारिक स्थान था, बन्द कर दिया गया। चीनियो को एक उद्यानभोज मे आमन्त्रित किया गया। यह सब मित्रतापूर्ण और उचित था।

सब एक-दूसरे से नम्रतापूर्वक मिले। साथ चाय पी गई। तब तिब्बत-निवासियो ने पूर्वीय शिष्टाचार और सभ्य ढग से चीनियो से कहा कि वे तुरन्त तिब्बत से चले जाय।

अगले दिन ८० से १०० तक चीनी अपने बीवी-बच्चो के साथ देश के बाहर भेज दिये गए। उनके साथ एक सम्मान गारद भेजा गया, जो एक जनरल के अधीन था। एक पदाधिकारी लामा भी। चीनियो को खाद्य पदार्थ और धन भेट मे दिया गया। विशिष्ट तिब्बती प्रकृति का सबसे अच्छा प्रदर्शन विदा किये जाते हुए अतिथियो के मनोरजन के लिए भेजे गए बाजे से हुआ, जो भारत की सीमा के निकटवर्ती प्रदेश, यातुग की १८ दिन की कठिन यात्रा पर उनके साथ निरन्तर बजता हुआ गया। यह सब हमारे पहुचने के एक मास पूर्व ही हुआ।

अपनी बात समाप्त करते हुए सरखग जाजा ने कहा, 'इस प्रकार आप देख सकते हैं कि यह घटना साम्यवादी विद्रोह होना तो दूर, उसके बिल्कुल विपरीत ही था।"

हमे यह बताया गया कि तिब्बत ने चीनियो का निष्कासन समस्त ससार को, विशेष रूप से साम्यवादियों को, यह दिखाने के लिए किया था कि वह पूर्णरूप से स्वतन्त्र है और बाहरी हस्तक्षेप को तबतक सहन नही करेगा जबतक सैनिक विजय से बाध्य ही न कर दिया जाय। पर खेद है कि यही होना था।

तेरहवे दलाई लामा मे धार्मिक तथा राजनैतिक दोनो प्रकार के शासक के गुण थे। अपनी मृत्यु या जैसाकि तिब्बती लोग कहते थे, 'स्वर्गीय क्षेत्र' को जाने से पूर्व उन्होने अपनी प्रजा को एक लम्बा और स्मरणीय पत्र लिखा, जिसे वे महान सरक्षक का अन्तिम वसीयतनामा कहते है। बादलो के मध्य में स्थित अपने प्यारे देश पर आने-वाली विपत्तियो के विषय मे उनमे भविष्यद्रष्टा की सूक्ष्म दृष्टि मालूम

होती थी।

सर चार्ल्स बैल के अनुवाद से मैं एक भाग यहा उद्धत करता हू।

'यह हो सकता है कि यहा तिब्बत के मध्य मे भी धर्म तथा राजनैतिक शासन-प्रबन्ध पर भीतर और बाहर दोनो ओर से आक्रमण हो। यदि हम अपने देश की रक्षा न कर सके, तो यह होगा कि धर्म के रक्षक पिता और पुत्र दलाई लामा और पछेणन लामा के ईश्वरीय पुनर्जन्म की परम्परा टूट जायगी और उनका नाम शेप न रहेगा। जहातक मठो और भिक्षुओ का सबध है, उनकी भूमि और सम्पत्ति नप्ट कर दी जायगी। तीन धार्मिक सम्राटो के प्रशासनिक रीति-रिवाज शिथिल हो जायगे। राज्य, धर्म और राजनैतिक अधिकारियो की भूमि छीन ली जायगी तथा सम्पत्ति जब्त कर ली जायगी और उन्हे शत्रु की सेवा करनी पडेगी या देश मे भिखमागो की तरह भटकना होगा। समस्त जीवधारी महान् विपत्तियो मे पड जायगे, विवश करनेवाली भीतियो के अधीन होगे तथा दिन-रात धीरे-धीरे कष्टपूर्वक व्यतीत होगे।

"अपने देश के विरुद्ध, दूसरे देश के लिए काम करके, धर्म या राज्य के प्रति विश्वासघाती मत बनना। तिब्बत इस समय प्रसन्न और आराम से है और यह तुम्हारे ऊपर ही निर्भर है। समस्त सैनिक तथा नागरिक मामलो को ज्ञान-पूर्वक सगठित करना चाहिए तथा एक-दूसरे के साथ मेल से काम करना चाहिए। जो तुम नही कर सकते, उसे कर सकने का छल मत करो। राजनैतिक शासन-प्रबन्ध का सुधार तुम्हारे धार्मिक तथा राजनैतिक अधिकारियो पर निर्भर है। उच्च अधिकारी, निम्न अधिकारी तथा कृषक सबको तिब्बत मे प्रसन्नता लाने के लिए मेल से काम करना चाहिए। एक व्यक्ति भारी कालीन को नही उठा सकता, अनेको को उसे उठाने के लिए जुटना चाहिए।"

तेरहवें दलाई लामा साम्यवादियो के भीतरी फूट तथा बाहरी आक्रमण द्वारा कार्य करने के ढग को खूब समझते ज्ञात होते थे। बीस साल पूर्व उन्होने जिम खतरे को पहचाना था उसका सामना करने के लिए परस्पर एकमत होकर कार्य करना ही एकमात्र अस्त्र है, इससे श्रेप्ठ परामर्श और कुछ नही हो सकता था। उन्हे यह भ्रान्त धारणा भी

नही थी कि अकेला और नि सहाय तिव्वत वढते हुए साम्यवादी आक्रमण के ज्वार के विरुद्ध सैनिक प्रतिरोध कर सकेगा।[1]

४ | गंगटोक को प्रस्थान

जव कोई तिब्वत को जानेवाला यात्री-दल कलकत्ता से प्रस्थान करता है तो ऐसा मालूम होता है कि कोई सर्कस पार्टी अपने शीत-कालीन निवास-स्थान से दौरे पर निकली हो। पृष्ठभूमि पर तो यह दल सर्कस पार्टी से भी अधिक रग-विरगा और विचित्र दीख पडता है। कुलियो की एक सेना हमारे भोजन, कपड़े, उपहार की वस्तुए, डेरो का सामान, छ कैमरो के फिल्म, रिकार्डिग के सामान के वक्सो और नकद सिक्को के भारी थैलो से भरे लौहे के सन्दूक को उठाने मे लगी।

जुलाई की अन्तिम रात्रि को हम कलकत्ता से ३०० मील उत्तर की ओर हिमालय की तलहटी पर स्थित रेल तथा सडको के केन्द्र सिलीगुडी को रवाना हुए। रेल के डिव्वे मे हम लोग टनो रसद के साथ अटे हुए थे। हमारे साथ वेकफील्ड मैसेचूसेट्स का निवासी फोटोग्राफर जॉन रावर्ट्स भी था, जो मेरे साथ ईरान मे काम कर रहा था। हमे उसे यात्रा के प्रथम भाग मे हिमालय की प्रधान श्रेणियो पर तिव्वत मे लग-भग चार मील अन्दर तक ले चलने की विशेप अनुमति मिली हुई थी। हमने अपने भोजन के वक्सो को दरवाजो पर अटा दिया तथा खिडकियो

---

१. अव तो तिव्वत में अनेक परिवर्तन हो चुके हैं। साम्यवादी चीन द्वारा देश पर अधिकार हो जाने के उपरान्त दलाई लामा भ रत आ गये हैं। वह इस समय भारत सरकार के अतिथि के रूप मे धर्मशाला (पजाब) मे निवास कर रहे हैं।

की सिटकिनी चढाली। रात की गाडी मे मुसाफिर अक्सर लूट लिये जाते है तथा कत्ल तक कर दिये जाते है। बगाल के मैदानो पर खड-खड करके जाते हुए हममे से कोई भी अधिक नीद नही ले पाया।

प्रात काल सिलीगुडी के समीप हमने रेल की खिडकी से बाहर झाका। हमारे सामने सिकिम की हरी-भरी निचली पहाडियो से ऊपर ठडे नीले आकाश की पृष्ठभूमि मे ससार की विशाल हिममडित पर्वत-शिखरे झाक रही थी। पूरी शृ खला पर आधिपत्य-सा जमाये, अपने पडोसियो से कही ऊची कचन-जघा का शिखर था, जो ससार मे सबसे उच्च शिखरो मे तीसरा है। समुद्र की सतह से२८१४६फुट, अर्थात हमारे कैलिफोर्निया के सबसे ऊचे शिखर माउन्ट ह्विटने से लगभग दुगुना ऊचा। बगाल के समतल मैदान से अकेले सन्तरी के समान शान से सिर उठाये कचन-जघा का शिखर, तिब्बत-नेपाल-सीमा पर पश्चिम की ओर अन्य ऊचे शिखरो के बीच मे स्थित एवरेस्ट से भी अधिक प्रभावशाली तथा आतक उत्पन्न करनेवाला प्रतीत होता है। कहा जाता है कि यह उस आत्मा का निवास-स्थान है, जिसने सिकिम मे बौद्ध धर्म का सन्देश लानेवाले भिक्षु को हस का रूप धारण करके पहाडी दर्रो पर मार्ग दिखाया था।

सिलीगुडी मे गगटोक स्थित हमारे परिवहन-एजेन्ट का भेजा हुआ एक बस-ड्राइवर मिला, लूलू। वह अपना नाम सार्थक करता था। बख्शीश के लिए आमतौर से की जानेवाली सौदेबाजी के उपरान्त पगडी वाले लगभग २० बगालियो ने हमारे ३७ बक्स और सामान के अन्य अदद सिकिम की राजधानी गगटोक की सत्तर मील की यात्रा के लिए, लूलू की ट्रक मे लादे। गगटोक से ही हमे तिब्बत को कारवा तैयार करना था। लूलू की लडाई के जमाने की अग्रेजी लारी मे लदे, हम जगल मे घुसे और पहाडी सडक पर घूघू करते चल पडे। तग, ढालू और घुमावदार यह विचित्र सडक थी। हमारे चारो ओर घना जगल था और कीचडभरी तिस्ता नदी, जो मानसूनी वर्षा से उफन रही थी, पास मे बह रही थी। एक बार एक बडा लगूर अत्यन्त उत्तेजित होकर ठीक लूलू की ट्रक के आगे से सडक पार कर गया।

कई घटो की धीमी चढाई के उपरान्त, जबकि हम एक फूले हुए टायर के फट जाने की आशका से बैचैन थे, एक छोटे गाव मे पहुचे। यहा हमने स्वादिष्ट अनन्नास और केले खरीदे और २४ घटे के उपरान्त अच्छा भोजन किया। कुछ आगे जाकर सिकिम की सीमा पर हमे अपने पास दिखाने के लिए रुकना था। सीमा की रेखा पर पुल था, जिसपर प्रार्थना के लगभग सौ सफेद झडे, जिनमे अनेक चिथडे हो चुके थे, बधे थे तथा उनपर बौद्ध प्रार्थनाए अकित थी। यह विश्वास है कि प्रत्येक बार जबकि झंडा हवा मे फहराता है, बौद्धो के धार्मिक ससार मे वह प्रार्थना भी प्रसारित हो जाती है।

तग सडक के २४ वे मील पर हमे एक पहाड के खिसकने के कारण रुकना पडा। इस रुकावट को पार करके अपने सामान को दूसरी टूटी-फूटी लारी मे लादने मे दो घटे का कठिन परिश्रम करना पडा। हम आगे सरके, लेकिन इससे पूर्व कि हम अपने माथे का पसीना पोछ पाते, ब्रेक चीख उठे और हम तुरन्त रुक गये। लूलू और दो कुली उत्तेजित स्वर मे बडबडाने लगे।

"पहाड फिर खिसककर गिर रहा है।" वे चिल्ला उठे और सामने लगभग आधा मील दूर पर धूल के बादल उठ रहे थे।

"यह कैसे हो सकता है ?" मैंने प्रश्न किया, "पहाड खिसकने से ऐसा धूल का बादल कभी नही उठ सकता।"

किन्तु शीघ्र ही हमे पता चल गया। आगे की सडक, चट्टानो की विशाल दीवार, मिट्टी और टूटे पेडो के तनो के रूप मे भूमि की नाक जैसी हमारी दाहिनी ओर से निकलकर और बाई ओर तिस्ता नदी में जा गिरी थी। चूर-चूर हुई चट्टानो की धूल के उमड़ते बादलों को देखकर अनुमान होता था कि पहाड हमारे पहुचने के कुछ पूर्व ही नीचे गिरा होगा। पहाड का पूरा-का-पूरा किनारा मानसूनी वर्षा के कारण फिसल पडा था। लगभग डेढ मील तक जंगल तिस्ता में जा पड़ा था और २०० फुट ऊचे मलवे के ढेर ने दो फर्लांग तक सडक को दबा दिया। वहां के निवासियो ने, जो उस स्थान के समीप थे, हमें बताया कि [illegible] खिसकने पर वज्र की तरह की गर्जना हुई और मानसूनी वर्षा [illegible]

हुई और तेज प्रवाहवाली तिस्ता नदी की धारा तक कुछ मिनटो के लिए रुक गई और वह पर्याप्त दवाव एकत्र करने के उपरान्त ही वडे-वडे पत्थरो और वृक्षो को वहाने मे समर्थ हुई। उस वाधा को पार करके या उससे घूमकर निकल सकने की हमे उस दिन कोई आशा न रही।

सौभाग्य से पर्वतीय राज्य मे दुर्घटना-ग्रस्त यात्रियो को शरण देने के लिए भारतीय सीमा मे वने हुए अनेक निवास-स्थानो मे से एक समीप ही था। इसलिए हमने उस वगले पर रात-भर के लिए धन्यवादपूर्वक अधिकार कर लिया।

सडक की यात्रा के पहले दिन के अनुभव से आराम करने के लिए आवश्यकता से अधिक प्रोत्साहित होकर जॉन, डैडी और मैं काम-चलाऊ भोजन के उपरान्त कुछ देर के लिए बैठ गये। हम प्रसिद्ध यात्री मार्को पोलो के विषय मे वातचीत करने लगे। उसने मध्य युग मे एशिया की जितनी यात्रा की थी, उतनी किसीने नही की। उस विख्यात वेनिस-निवासी ने जब मध्य एशिया के पामीर पठार को पार किया तव वह तिब्वत से बहुत दूर नही था, किन्तु महान् कुवलई खा की सभा को जाते हुए, कारवा के मार्ग से हटकर दक्षिण की ओर इस रहस्यपूर्ण देश की यात्रा, जहा के निवासी वह कहता था कि जादू की विद्या से विचित्र मायाजाल फैला सकते थे, उसने कभी नही की।

उसकी पुस्तक मे तिब्वत पर एक पूरा अध्याय है, जो कि तिब्वत के निवासी या वहा के रीति-रिवाजो के विषय मे प्रशसापूर्ण नही है। मार्को पोलो ने यह सारी सूचना पूर्वाग्रह-पूर्ण चीन-निवासियो से प्राप्त की होगी। जो हो, मार्को पोलो की कुछ टिप्पणिया, जो तेरहवी शताब्दी मे सत्य थी, अव भी सत्य है। अनेक यात्रियो ने अपनी तिब्वत की यात्रा के विवरण लिखे है, पर वे केवल उसकी सीमा तक ही गये थे और उनमे वास्तविक तिब्वत के विषय मे वहुत कम हैं। हमारे पश्चिमी पुस्तकालयो मे तो इस विचित्र देश के विषय मे सही सूचना देनेवाले ग्रन्थ और भी कम है तथा अनेक शताब्दियो से तिब्वत का जीवन इतना अपरिवर्तित चला आ रहा है कि प्राचीन काल की अच्छी पुस्तको मे लिखे गये विवरण

आजतक ऐसे नये मालूम होते है, जैसे वे पिछले वर्ष ही लिखे गये हो।
यद्यपि मार्को पोलो तिब्बत को छोड गया, यूरोप के दूसरे यात्रियो ने तिब्बत की ओर ल्हासा तक की यात्रा की। जिन दशाओ मे उन पुराने साहसियो ने यात्रा की, उनसे तुलना करते हुए हमारी यात्रा अत्यन्त आराम की थी।

सत्रहवी और अठारहवी सदी के उन पथ-प्रदर्शको के विषय मे सोचते और बगले की छत पर मानसूनी वर्षा की अनवरत पटर-पटर को सुनते-सुनते हमे नीद आ गई। हमे विश्वास था कि प्रातःकाल ही स्वेच्छापूर्वक काम करनेवाले कुलियो का दल हमे गगटोक पहुचने मे मदद देने के लिए उपलब्ध हो जायगा।

अगले प्रातःकाल वर्षा तो रुकी, पर कुलियो का पता न था। इसलिए डैडी और मैने अपने काम को पूरा करने का उपाय खोजने के लिए सडक पर मलवे के ढेर के समीप तक जाने का निश्चय किया।

डैडी ने कहा, "हो सकता है कि हमे सहायता के लिए कुली-दल दूसरी ओर मिल जाय या हम इतने कुली पा सकें कि जो हमारे सामान को उधर पार करा दे।"

इस समय तेज धूप और गर्मी हो चली थी। हम केवल निकर ही पहनकर चल पडे। हम उस जगल के ढेर और चट्टानो की दीवार पर परिस्थिति की जाच करने और कुछ चित्र लेने के लिए सरलता से चढ गये। ऊपर चढते समय नीचे फिसलते छोटे पत्थरो के समूह को देखकर हमे वडा भय मालूम हुआ।

आधी दूरी पर भयानक शब्द के साथ पहाडो पर से लुढकते पत्थरो की बौछार से अपनेको बचाने के लिए एक बडी चट्टान के पीछे हम ऐन मौके पर छिप गये।

"ओह," डैडी ने अपने माथे को पोछते हुए कहा, "मै सोच रहा हूं कि हम कभी ल्हासा पहुच भी सकेंगे ?"

अमरीका के पहाडो पर अपने जीवन के इतने वर्ष विता चुकने पर भी हमने पहाडो का इस प्रकार गिरना नही देखा था। स्पष्ट था कि हम सुरक्षित स्थान पर नही थे, पर चूकि हम आधा रास्ता तय कर

चुके थे, इसलिए जल्दी-जल्दी टूटे स्थान को पार कर गये। वहा हमे कुछ कुली मिले, जो हमारी सहायता के लिए भेजे गये थे।

उनसे हमे पता चला कि उस टूटे स्थान को पार करनेवाले हमी दो व्यक्ति सबसे पहले हैं। इसके बाद कई सप्ताह तक, यातायात पहाड के ऊपर कई मील का चक्कर काटकर होता रहा और सारा सामान एक जगली पगडडी से कुलियो द्वारा ले जाया जाता रहा। उस रात को, गगटोक मे इस ओर आते हमे दो यात्री मिले। ये थे भूटान का एक राजकुमार और उसकी बहन, यहातक कि दो महीने बाद भी, जबकि हम ल्हासा से लौट रहे थे सडक रुकी हुई थी। फिर भी बगाल के सैंकडो कुली और इजीनियर मिट्टी हटानेवाली मशीनो (बुलडोजर्स) की सहायता से काम मे जुटे थे और जीप पर चढकर हमने ही उसे सबसे पहले पार किया।

कुलियो को सामान लाते हुए पीछे छोडकर हमने गगटोक की अन्तिम १८ मील की यात्रा जीप द्वारा की। ६००० फुट की ऊचाई पर चढते-चढते, जहाकि सिकिम की राजधानी स्थित है, ठड बढने लगी और बूदा-बादी शुरू हो गई। अपने खाकी नेकरो मे ठिठुरते हुए हम भारतीय राजनयिक अधिकारी हरीश्वरदयाल के पहाडी की चोटी पर स्थित निवास-स्थान पर पहुचे। यद्यपि श्री दयाल और उनकी पत्नी ने, जो कि वहा के सक्षिप्त निवास-काल मे हमारे दयालु मेजबान थे, हमारा प्रेम-पूर्ण स्वागत किया तथापि हमारे नाम मात्र के परिधान पर एक दृष्टि डालकर उन्होने हमे शीघ्र ही कमीज और कोट दिये। वे इतने सज्जन थे कि इसपर उन्होने अपना आश्चर्य प्रकट नही किया। पर हम जानते है कि वे सोचते होगे कि ये अमरीकी लोग कैसे विचित्र होते है।

श्री दयाल ने हमे शुभ समाचार दिया हमारे तिब्बत-प्रवेश के लिए अन्तिम स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है। इसका एक भाग इस प्रकार था—"इसका सबध अमरीका निवासी मि० लावेल थामस और उनके पुत्र से है, यद्यपि तिब्बत सरकार साधारण तौर पर विदेशी आगतुको को ल्हासा आने की अनुमति नही देती, तथापि अमरीकी सरकार के साथ मैत्रीपूर्ण

सबधो को ध्यान मे रखकर इन दोनो को देश मे आने की अनुमति दी जाती है।" इसपर दलाई लामा की ओर से सिपन शकापा ने हस्ताक्षर किये थे। यह वही व्यक्ति था, जो सन् १९४८ की ग्रीष्म मे अमरीका जानेवाले तिब्बती व्यापार-दल का नेता था। वह हमे बाद मे ल्हासा मे मिला।

सीढीनुमा चावल के खेतो और बहुभाषी जनसख्या से पूर्ण गगटोक चित्र-विचित्र नगर है। संसार की सबसे छोटी राजधानी के रूप मे प्रसिद्ध होने पर भी यह हिमालय के दक्षिणी भाग के सबसे प्रसिद्ध व्यापार-केन्द्रो मे से एक है। कारवो के अनेक मार्ग गगटोक पर मिलते है। इसका बाजार भिन्न-भिन्न जातियो और विचित्र वेश-भूषाओ से रग-बिरगा बना रहता है। तिब्बती, सिकिमी, लेपचा, भारतीय, शेरपा और भूटानी लोग, जो यहा अपना सामान उतारते और लादते है, अनेक भाषाए बोलते है।

यहापर हमारी रिनजिग दोर्जे नाम के काले सिकिमी से भेंट हुई, जिसने एक मोटी रकम और हमने जितने व्यक्ति किराये पर लिये, उनके वेतन का दस प्रतिशत वसूल करके हमारा कारवा तैयार किया। वह छोटा, मोटा और हँसमुख व्यक्ति दोर्जे, जिसके सिर पर जूडा बधा था, हमे 'टेरी एन्ड दी पाइरेट' नाम के प्रहसन चित्र के अच्छे स्वभाववाले किन्तु छली 'चोपस्टिकस' नाम के चीनी की याद दिलाता था। हमेशा नम्र और झुककर बात करनेवाला रिनजिग दोर्जे एक चतुर प्रबन्धक निकला। कारवा की तैयारी करना उसकी विशेषता थी। यदि हमे उसके हिसाब मे कुछ गडबड मिलती तो दोर्जे परेशान नही होता था। वह केवल मुस्कराता और कधे उचकाकर कहता, "गलती हो गई। घटा दीजिए।"

सामान ले चलनेवाले छ. कुली, बोझा ढोनेवाले नौ खच्चर और सवारी के टट्टुओ के अतिरिक्त हमारी पार्टी के शेष कर्मचारियो को भी किराये पर लाने का दोर्जे ने प्रबन्ध किया। वह हमारे सिरदार अर्थात प्रधान बैरा को लाया, जो कि लेजर नाम का लेपचा था। यह बडा ही काम का आदमी था और थोडा-थोडा हर काम कर सकता था। दो

चुके थे, इसलिए जल्दी-जल्दी टूटे स्थान को पार कर गये। वहा हमे कुछ कुली मिले, जो हमारी सहायता के लिए भेजे गये थे।

उनसे हमे पता चला कि उस टूटे स्थान को पार करनेवाले हमी दो व्यक्ति सबसे पहले हैं। इसके बाद कई सप्ताह तक, यातायात पहाड के ऊपर कई मील का चक्कर काटकर होता रहा और सारा सामान एक जगली पगडडी से कुलियो द्वारा ले जाया जाता रहा। उस रात को, गगटोक मे इस ओर आते हमे दो यात्री मिले। ये थे भूटान का एक राजकुमार और उसकी बहन, यहातक कि दो महीने बाद भी, जबकि हम ल्हासा से लौट रहे थे सडक रुकी हुई थी। फिर भी बगाल के सैकडो कुली और इजीनियर मिट्टी हटानेवाली मशीनो (बुलडोजर्स) की सहायता से काम मे जुटे थे और जीप पर चढकर हमने ही उसे सबसे पहले पार किया।

कुलियो को सामान लाते हुए पीछे छोडकर हमने गगटोक की अन्तिम १८ मील की यात्रा जीप द्वारा की। ६००० फुट की ऊचाई पर चढते-चढते, जहाकि सिकिम की राजधानी स्थित है, ठड बढने लगी और बूदा-बादी शुरू हो गई। अपने खाकी नेकरो मे ठिठुरते हुए हम भारतीय राजनयिक अधिकारी हरीश्वरदयाल के पहाडी की चोटी पर स्थित निवास-स्थान पर पहुचे। यद्यपि श्री दयाल और उनकी पत्नी ने, जो कि वहा के सक्षिप्त निवास-काल मे हमारे दयालु मेजबान थे, हमारा प्रेम-पूर्ण स्वागत किया तथापि हमारे नाम मात्र के परिधान पर एक दृष्टि डालकर उन्होने हमे शीघ्र ही कमीज और कोट दिये। वे इतने सज्जन थे कि इसपर उन्होने अपना आश्चर्य प्रकट नही किया। पर हम जानते है कि वे सोचते होगे कि ये अमरीकी लोग कैसे विचित्र होते है।

श्री दयाल ने हमे शुभ समाचार दिया हमारे तिब्बत-प्रवेश के लिए अन्तिम स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है। इसका एक भाग इस प्रकार था—"इसका सबध अमरीका निवासी मि० लावेल थामस और उनके पुत्र से है, यद्यपि तिब्बत सरकार साधारण तौर पर विदेशी आगतुको को ल्हासा आने की अनुमति नही देती, तथापि अमरीकी सरकार के साथ मैत्रीपूर्ण

सबधो को ध्यान मे रखकर इन दोनो को देश मे आने की अनुमति दी जाती है।" इसपर दलाई लामा की ओर से सिपन शकापा ने हस्ताक्षर किये थे। यह वही व्यक्ति था, जो सन् १६४८ की ग्रीष्म मे अमरीका जानेवाले तिब्बती व्यापार-दल का नेता था। वह हमे बाद मे ल्हासा मे मिला।

सीढीनुमा चावल के खेतो और बहुभाषी जनसख्या से पूर्ण गगटोक चित्र-विचित्र नगर है। संसार की सबसे छोटी राजधानी के रूप मे प्रसिद्ध होने पर भी यह हिमालय के दक्षिणी भाग के सबसे प्रसिद्ध व्यापार-केन्द्रो मे से एक है। कारवो के अनेक मार्ग गगटोक पर मिलते है। इसका बाजार भिन्न-भिन्न जातियो और विचित्र वेश-भूषाओ से रग-बिरगा बना रहता है। तिब्बती, सिकिमी, लेपचा, भारतीय, शेरपा और भूटानी लोग, जो यहा अपना सामान उतारते और लादते है, अनेक भापाए बोलते है।

यहापर हमारी रिनजिग दोर्जे नाम के काले सिकिमी से भेंट हुई, जिसने एक मोटी रकम और हमने जितने व्यक्ति किराये पर लिये, उनके वेतन का दस प्रतिशत वसूल करके हमारा कारवा तैयार किया। वह छोटा, मोटा और हँसमुख व्यक्ति दोर्जे, जिसके सिर पर जूडा बधा था, हमे 'टेरी एन्ड दी पाइरेट' नाम के प्रहसन चित्र के अच्छे स्वभाववाले किन्तु छली 'चोपस्टिकस' नाम के चीनी की याद दिलाता था। हमेशा नम्र और झुककर बात करनेवाला रिनजिग दोर्जे एक चतुर प्रबन्धक निकला। कारवा की तैयारी करना उसकी विशेषता थी। यदि हमे उसके हिसाब मे कुछ गडबड मिलती तो दोर्जे परेशान नही होता था। वह केवल मुस्कराता और कधे उचकाकर कहता, "गलती हो गई। घटा दीजिए।"

सामान ले चलनेवाले छ. कुली, बोझा ढोनेवाले नौ खच्चर और सवारी के टट्टुओ के अतिरिक्त हमारी पार्टी के शेष कर्मचारियो को भी किराये पर लाने का दोर्जे ने प्रवन्ध किया। वह हमारे सिरदार अर्थात प्रधान बैरा को लाया, जो कि लेजर नाम का लेपचा था। यह वडा ही काम का आदमी था और थोड़ा-थोडा हर काम कर सकता था। दो

सिकिम-निवासी तिब्बती थे, सेवोग नोर्वू, यह एक अच्छा बावर्ची था और सेवोग नैमग्याल दुभाषिये का महत्वपूर्ण काम करनेवाला था। तिब्बत जानेवाले उन यात्रियो की कहानी दुखभरी ही होती है, जिनको अच्छे नौकर काम के लिए नही मिलते। किन्तु हमे साथ देनेवालो के रूप मे सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति मिले थे।

सिरदार और बावर्ची दोनो अमरीका के युद्धकालीन सैनिको की जाकेट और बूट शान से डाटे रहते थे और उन बुनी हुई टोपियो को लगाते थे, जो हमारी सैनाए अपने लोहे के टोप के नीचे पहना करती थी। समस्त एशिया और सुदूर तिब्बत तक हमारी सेना का वचा हुआ सामान दिखाई देता था। उन भागो तक मे, जहा अमरीकी सिपाहियो ने कभी पैर तक नही रक्खा, द्वितीय विश्व-युद्ध के ये स्मारक देखने को मिल सकते है। देशो के भीतरी भागो मे वहा के निवासी, अपने रग-विरगे और आकर्षक वस्त्रो का हमारी सेना के त्यागे हुए वस्त्रो के साथ विचित्र जोड वनाकर पहनते मिलते है। जहातक हमारा सवध था, हमने हिमालय की मानसूनी पेटी के भाग मे सयुक्त राज्य अमरीका की नौसेना वाले रवर के वने तूफानी सूट पहनकर और भी अनोखा वेश बना लिया था।

गगटोक के तीन दिन के निवास मे हमने श्री दयाल के आगन मे अपनी रसद को ठीक से लगाने और कलकत्ते मे वनवाये हुए लकडी के वक्सो को फिर से वनवाने मे घटो लगाये। यह पता चला कि ये वहुत वडे है। वोझा ढोनेवाला जानवर साधारणतया दुहरा वोझा लेकर चलता है। यदि आपके वक्स जरूरत से वडे हो गये तो वे तग रास्ते पर पहाड से टकराकर कलावाजी खाते हजारो फुट गहरी खाई मे जा गिरेंगे।

गगटोक मे हमने वैटरी से चलनेवाली अपनी मशीन द्वारा कुछ रिकार्ड भी तैयार किये। इस हलके यन्त्र का, वैटरी ट्यूव और छोटे ध्वनि-विस्तारक सहित लगभग दस पौंड वजन होता है। हम दोनो ने इसका प्रतिदिन उपयोग किया और इसने पूरे सफर मे हमे एक वार भी धोखा नही दिया। हमारें रिकार्ड किये हुए टेप के रील ससार के पार

न्यूयार्क को प्रसारित कर दिये जाते थे और डैडी के रेडियो वृत्त कार्यक्रम के रूप मे प्रस्तुत किये जाते थे। यह लामाओ के देश से कभी किया गया सर्वप्रथम स्थानीय प्रसारण कार्यक्रम था।

अन्त मे हम तैयार हो गये। सिरदार, प्रचड भूख को ध्यान मे रखकर हमारे लिए छोटे टमाटर, आलू, सोयावीन और अन्डो का मिश्रण रोटी के चौबीस टुकडो के साथ तैयार करके लाया। वोझा ढोनेवाले पशु, जिनके गले मे घटिया टनटन कर रही थी, कुली, दोनो थामस पिता-पुत्र और इस छोटे दल के शेष सदस्य चल पडने को तैयार हो गये। आखिर हमने पवित्र नगर को जानेवाले लवे कारवा के रास्ते से प्रस्थान कर दिया।

५ | हिमालय की दीवार पर

हमारे गगटोक से रवाना होने के पूर्व अतिथि-सत्कार करनेवाले भारत के राजनयिक अधिकारी श्री दयाल ने हमे कुछ लाभदायक निर्देग दिये। उन्होने कहा, "यह याद रखिये कि मार्ग मे आपको थोडे ही नगर और गाव मिलेगे। इनमे किसी-न-किसी मे शाम होते-होते पहुच जाना आवश्यक है। शेष समय आपको वीरान और निर्जन प्रदेग मे ही चलना है। यह कठिन यात्रा है। हर दूसरे या तीसरे दिन आपको वोझा ले चलनेवाले जानवरो का नया दल किराये पर लेना होगा।"

गगटोक से तिव्वत की राजधानी तक साधारणतया २१ दिन की यात्रा है। अपनी ल्हासा पहुंचने की उत्सुकता मे हम चाल तेज करके नियत समय मे से कम-से-कम पाच या छ दिन काट देना चाहते थे। किन्तु हम खच्चरो के स्वभाव को नही जानते थे। इस मस्ताने पशु को इसकी मनमौजी चाल से तेज कोई भी नही चला सकता। इसके अलावा

ल्हासा का रास्ता खतरनाक और धीमी चाल से पार करने योग्य ही है, क्योकि यह तग, घुमावदार और ऊची चढाई का रास्ता है, जो कि अनेक स्थानो पर लम्ब के समान सीधी दीवारो पर और तग पगडडियो पर से गुजरता है। तिब्बत के पठार पर निरन्तर झकझोरने वाली छुरे की धार-सी पैनी ठडी हवाए तथा अधिक ऊचाई के कारण विरल वायुमण्डल तेज रफ्तार से चलने मे वाधक होते है। हमे शीघ्र ही ज्ञात हो गया कि हिमालय को पार करके तिब्बत मे प्रवेश करते हुए खच्चरो के कारवा के लिए १५ मील प्रतिदिन चलना एक अच्छा औसत है।

५ अगस्त को हमने इस तीनसौ मील की यात्रा का आरभ किया था, जो पहले सिकिम के तर जगलो मे, फिर ऊचे हिमालय के ऊपर और अन्त मे तीव्र आधियो से आलोडित तिब्बत के ऊचे मैदानो के वीच होकर होनेवाली थी। भूमडल पर ल्हासा के इस प्रमुख मार्ग की वरावरी करनेवाले ऐसे थोडे ही व्यापारिक मार्ग हैं, जिनपर इतने अधिक समय से और इतना लगातार मनुष्य यात्रा करता चला आया हो। वे लोग जो चार पहियो की तेज सवारियो पर यात्रा करने के अभ्यस्त है, बडी कठिनता से विश्वास करेंगे कि यह सकरा मार्ग, जिसपर कि हम जानेवाले थे, वाह्य ससार से तिब्बत के व्यापार की प्रमुख कडी है। विगत धुधली शताव्दियो से इस व्योमस्पर्शी तग पगडण्डी से होकर अनेक कारवा ऊन, कस्तूरी और सुरागाय की पूछो से लदे भारत की ओर यात्रा करते आये हैं और इन्ही कष्टदायक, घुमावदार रास्तो से आज भी व्यापारी पूर्ववत यात्रा करते हैं।

हमारा सामान ढोनेवाले नौ खच्चर, आधा दर्जन सिकिमी कुली हमसे कुछ मिनट पूर्व चल दिये थे और अब मार्ग पर थोडे ही फासले पर खच्चरवालो की पुकारें और खच्चरो की घण्टियो की टन-टन आवाजे सुनाई दे रही थी।

ज्योही हम वास के जगलो मे घुसे और मानसूनी वर्षा से भरते गहरे दर्रों के झरनो पर निगाह डाली, तो यह साहसिक यात्रा एक स्वप्न जैसी ज्ञात होने लगी। हमारा दुभाषिया सेवोग नैमग्याल मुस्कराया और वोला, "काले ये आ।" मैंने पूछा, "इसका क्या मतलब है ?"

उसने उत्तर दिया, "जब भी कोई कारवां हिमालय के ऊपर प्रस्थान करता है, उसके लिए यह परपरागत तिब्बती विदाई है। इसका अर्थ है—"यदि तुम लौटना चाहते हो, तो धीरे चलो।"

हमारे साथ-साथ घोड़े पर चलते हुए दुभाषिये सेवोंग ने बताया कि उसका जन्म यातुग तिब्बत मे हुआ था, किन्तु उसका परिवार, जबकि वह छोटा ही था, गगटोक चला आया था। इस कारण उसने अपनी जन्मभूमि को बहुत कम देखा है। यह उसकी ल्हासा की प्रथम यात्रा है। बीस से दो-चार ही वर्ष ऊपर आयुवाले सेवोंग ने इलाहाबाद के एक अमरीकी मिशनरी कालेज मे कृषि-सम्बन्धी अध्ययन के कई वर्ष हाल ही मे पूरे किये थे और वह हमारी भाषा का सरलता से व्यवहार कर सकता था। हमारे साथ चल सकने की स्वीकृति पाने के लिए उसे राजनैतिक अधिकारी के पास पर्याप्त प्रयत्न करना पडा, क्योकि सरकार ने उसकी शिक्षा का प्रबन्ध किया था और उससे सिकिम मे कृषि-विशेषज्ञ के रूप मे कार्य करने की आशा की जाती थी। जैसाकि आगे चलकर पता चला, उसकी सेवाए प्राप्त कर सकने मे हम अत्यन्त भाग्यशाली रहे, क्योंकि हमारे दूसरे दो नौकर, बावर्ची नोर्बू और प्रधान बैरा लेजर यद्यपि बड़े उपयोगी व्यक्ति थे और अपने काम मे बेजोड़ थे, तथापि अग्रेजी के गिने-चुने शब्द ही बोल सकते थे और हमारे लिए अग्रेजी से तिब्बती भाषा और तिब्बती से अग्रेजी मे अनुवाद कर सकना निरन्तर आवश्यक था।

संकरे पथरीले मार्ग पर हम चढ रहे थे। वर्षा निरन्तर हो रही थी। बास के जंगलो से कुहरे के ऐसे बादल निकलते थे कि कभी-कभी हमारी टोली एक सिरे से दूसरे तक दिखाई भी नही देती थी। हिमालय की इन निचली पहाड़ियो पर साल मे २५० इच तक वर्षा होती है, जो कि मात्रा मे निकटवर्ती आसाम की पहाड़ियो की वर्षा से दूसरे स्थान पर है। इस वर्षा की इतनी बौछारे हमपर पडी कि रबर के बने जल-सेना के तूफानी सूट पहने होने पर भी हम तर-बतर हो गये।

हिमालय की दीवार के दक्षिणी और उत्तरी भाग मे कितना महान अन्तर है! एक तरफ घने जंगल हैं। दूसरी ओर वीरान पर्वत और

बजर पठार। यह सब उन जल से भरे बादलो के कारण है, जो बगाल की खाडी से उठते है और ५ मील ऊचे हिमालय से टकराकर अपनी अधिकतर नमी सिकिम पर गिरा देते हैं। चूकि इस महान रुकावट के कारण थोडे ही बादल उस पार जा पाते है, तिब्बत को १२ इच वार्षिक वर्षा से ही काम चलाना पडता है।

बास और लता-गुल्मो का विशाल जाल जैसा तग रास्ते के एक ओर हमारे सिरो के ऊपर खडा था, दूसरी ओर हजारो फुट गहरा गर्त था। उष्ण प्रदेशीय वर्षा के कारण अनेक छोटे-मोटे पर्वत-स्खलनो के चिह्न दीख पड रहे थे।

"मेरे मन मे विचार उठता है कि यदि कही तिस्ता घाटी के समान यहापर भी पहाड खिसक पडे तो क्या होगा?" मैंने कहा।

डैडी ने सलाह दी कि हमे दूसरी शुभ बातो पर ध्यान देना चाहिए। परेशानी का एक दूसरा स्थानीय कारण भी था। यह था जोके, छोटी और खून चूसनेवाली, जो घोडे के बाल के समान पतली और एक इच लम्बी होती हैं। हमारे कारवा की उपस्थिति का अनुमान करके या गन्ध लेकर वे हमपर ऊपर हरियाली से टपक पडती और यदि हम उन्हे फेंकने मे फुर्ती न करते तो वे छोटे से मार्ग से हमारे बूट या बरसाती सूट मे घुस जाती। डैडी और मैं भली प्रकार ढके होने के कारण इन शोषको को अपनी चमडी तक पहुचने से रोकने मे समर्थ रहे, किन्तु बेचारे कुली हमारी तरह भाग्यवान नही थे। उनके नगे पैर जोको के कारण लहू-लोहान हो जाते थे। जोको के नथुनो मे घुस जाने के कारण खच्चर तक बुरी तरह छीकने लगते थे।

दस मील की कठोर चढाई के उपरान्त हम कर्पोनाग पहुचे, जहा पहला डाक-बगला था। मूल रूप मे अग्रेजो द्वारा बनाये गए सिकिम के डाक-बगलो का प्रबन्ध यात्रियो के आश्रय के लिए भारत सरकार करती है। कर्पोनाग का डाक-बगला दस हजार फुट की ऊचाई पर चट्टान पर बना है, जहा नीचे सुन्दर झरना बहता है। चटकती हुई लट्ठो की आग के समीप पानी से निचुडते हुए कपडो को सुखाने और हाथ-पैरो को ढीला करने मे निराला आनन्द आता है।

अगले दिन हमारे कारवां ने सिकिम के अधिक ऊचे पहाडो का चक्कर काटा। सिर मे चक्कर पैदा कर देनेवाले ऐसे ऊचे रास्तो पर मैं पहली बार चल रहा था। फीते के समान सकरी इन पगडडियो पर घुड़सवारी करते हुए हम अथाह खाइयो को देखते थे, जिनकी गहराइया दिल दहला देनेवाली थी। डैडी का खच्चर बार-बार खाई से कुछ ही इचो के अन्तर पर पगडडी के बाहरी किनारो पर चलने लगता था। डैडी का स्वभाव उसपर झुक जाने का था और यह बात जानवर को अच्छी नही लगती थी। इससे उसकी चाल डगमगा जाती थी।[1] मेरे अपने घोडे की भी लगभग प्रत्येक भयानक गहराई के किनारे पर ठहर-कर किसी भी हरे पौधे पर मुह मारने की, दहला देनेवाली आदत थी। जो यह समझता है कि वह खच्चरो को ठीक कर सकता है, वह जरा हिमालय पर जाकर इन सिकिमी और तिब्बती टट्टुओ पर अपनी हिकमत आजमाये।

अगली दस मील की धीमी यात्रा और लगातार चढाई के बाद (१२६०० फुट तक) हम चागू झील के ठीक ऊपर स्थित डाक-बगले पर पहुचे, जिसकी गहरी और शान्त पानी की सतह बुरास के फूलो से लदे ढलवा किनारो से घिरी थी।

चागू तक अधिकतर रास्ता हमने खच्चरो से उतरकर पैदल तय किया। कुछ तो इस कारण कि गहरी खाइयो की दीवारो पर खच्चर की अपेक्षा पैदल चलना हमने अधिक सुरक्षित समझा और कुछ इस कारण कि अधिक ऊचाइयो पर पैदल चलने से उस जलवायु का शीघ्र अभ्यास हो जाता है। हम लोग सारे दिन धीरे-धीरे चढकर कुहरे और जोको से भरे बास के जगलो से पार हुए और अमरीका के राकी पर्वतो जैसे प्रदेश मे, जहा चीड के वृक्ष ही दीख पडते हैं, प्रविष्ट हुए। चट्टानो पर उगे झाडो से हमने स्ट्रॉबरी तोडी, जो अमरीकी किस्म से दुगनी-तिगुनी थी और लाल न होकर गुलाबी थी, किन्तु उतनी मीठी नही

---

१. अन्य पहाड़ी स्थानों पर भी सामान्यतया टट्टू किनारे पर ही चलने के आदी होते हैं।

थी। बीच-बीच मे हम फूलो की शोभा देखने को रुक जाते थे—बिना लटकन (दाढी) का गुलाबी आइरिस (फूल), चौडे पीले पॉपी, जो व्यास मे दो इच थे और घटी की आकृति के प्रिमुला (पीला सेवती का फूल) जिनकी प्राय ६० किस्मे होती हैं। सिकिम के पहाड इस ऋतु मे हजारो भिन्न-भिन्न प्रकार के फूलो से ढके थे, जिनमे जगली आर्किड (फूल) की ३५० से अधिक और बुरास की अनगिनत किस्मे थी। सयोग से हिमालय पर बुरास का वृक्ष होता हैं, झाडी नही। इनमे से अनेक वृक्ष ३० या ४० फुट तक की ऊचाई तक बढते हैं और इनका तना चार फुट मोटा होता है। वृक्ष के सिरे पर लाल-सुर्ख बुरास का फूल होता है।

कही-कही हमे एक कुरूप नीले हुड की जैसी आकृति का फूल देखने को मिला। इस विषैले पौधे से निचोडे हुए रस मे, सिकिमी और भूटानी, जो कि अक्सर परस्पर लडते रहते थे, अपने भाले और तीरो को डुबो लेते थे, जिससे कि उसकी एक ही खरोच मार डालने को पर्याप्त हो जाय। अन्त मे, अनेक व्यक्तियो के परस्पर सबन्धित होने के कारण सिकिमी और भूटानियो ने इस विष का उपयोग न करने का वादा कर लिया।

दूसरे दिन की यात्रा के अन्त मे हम दूर-दूर तक फैले पीले डेजी फूलो के पास से गुजरे, जिनसे एक विचित्र प्रकार की तीव्र गन्ध निकल रही थी। मार्ग मे मिले एक सिकिमी ने हमे बताया कि यदि हमे सिर मे दर्द का अनुभव हो—वास्तव मे हमे इसका अनुभव हो भी रहा था—तो उसका कारण ऊचाई नही, बल्कि यह गन्ध होगी।

सारे रास्ते एक-से-एक सुन्दर फूल नाचते मिलते थे, जिनके गलीचे जैसे बिछे रहते थे, जैसे कि प्रकृति ने हिमालय के शृगार के लिए अपना सबकुछ लगा दिया हो, हमे आल्पस पर्वत पर भी पाई जानेवाली फूलो की किस्मो ने विशेष मोहित किया था, जिनके असख्य प्रकार और रगो की विविध छाया सारे रास्ते मे मिलती रही। कुछ काई से ढकी चट्टानो पर चिपके होते थे और कुछ सूखे वृक्षो के तने पर मोतियो की तरह चमकते थे।

"किसी भी वनस्पति-वैज्ञानिक के लिए यह हिमालय प्रदेश स्वर्ग के समान है। खेद है कि हम पेड-पौधों के विषय मे अधिक नही जानते।" मैंने कुछ उत्सुकता से कहा, "देखिये, इनमे से अनेक फूल हमने पहले कभी नही देखे।"

"कई वर्ष हुए मेरा एक विलक्षण अग्रेज किगंडन वार्ड से परिचय हुआ," डैडी ने कहा,"जिसने अपना जीवन आर्किड (एक प्रकार के फूल) तथा हिमालय के फूलो की अन्य नई किस्मे खोजने मे लगा दिया था।"

डैडी ने मुझे कप्तान किगंडन वार्ड के विषय मे अधिक वताया। अब उनकी आयु ६० के ऊपर होगी और जहातक डैडी को मालूम था, वह अभी तक कलकत्ता मे अपना मुख्य निवास बनाये हुए है तथा अधिकतर हिमालय के अत्यन्त दुर्गम एवं जगली भागो मे पौधो और बीजो के नमूने एकत्र करते फिरते है। प्रारम्भ मे उनका पौधे इकट्ठा करनेवाला बनने का इरादा नही था। केम्ब्रिज से स्नातक बनने के उपरान्त वह शघाई मे अध्यापन-कार्य के लिए चले आये। किन्तु वन्य जीवन ने उनको उस समय आकृष्ट कर लिया, जबकि इंगलैण्ड से तिव्बत की सीमा पर—युनान से—पौधे एकत्र करने का निमन्त्रण मिला। वास्तव मे उन्होंने वनस्पतिशास्त्र का अध्ययन किया था और उसीमे पले भी थे, क्योकि उनके पिता हैरी मार्शल वार्ड कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे वनस्पति-शास्त्र के विख्यात प्रोफेसर थे।

डैडी ने वताया, "सन् १९१० मे जबकि किगंडन वार्ड ने बीस वर्ष की अवस्था पार ही की थी, पश्चिमी चीन और दक्षिण-पूर्वी तिव्वत मे पहाडो पर दो वर्ष व्यतीत किये। ल्हासा के पूर्व जगली पर्वतीय प्रदेश से वह प्रसिद्ध नीले पॉपी के पौधे लाया। यात्रा के सम्बन्ध मे उसकी प्रथम पुस्तक का नाम था 'नीले पॉपी का देश' (दी लैण्ड ऑव दी ब्ल्यू पॉपी)।"

इस पुस्तक में प्रकृतिविद के रूप मे तथा उस पर्वतीय इलाके के मूल-निवासियो के विषय मे आश्चर्यजनक अनुभवो का वर्णन है, जहां पश्चिम के निवासी शायद ही कभी गये हो।

उस समय के उपरान्त किगडन वार्ड के जीवन की दिशा उनके लिए

नियत हो गई तथा वह एशिया के बनस्पति-खोजी वन गये।

डैडी ने कहा, "उसने मुझे एक बार बताया कि वनस्पति की खोज एक गभीर कार्य है, जो वास्तविक अनुभव से ही किया जा सकता है। आल्प्स के जैसे पहाडी क्षेत्र मे वनस्पति-सग्रह करनेवाले को चुने हुए भाग मे अप्रैल से नवम्बर तक घाटियो मे पौधो पर फूल आने से लेकर बीजो के पकने तक छ या सात महीने व्यतीत करने पडते हैं।"

किगडन वार्ड वर्षो तक पौधो की खोज मे हिमालय पर घूमते रहे है और अनेक बार पश्चिमी चीन, दक्षिण-पूर्वी तिव्वत, आसाम और वर्मा की उत्तर-पूर्वी सीमा पर गये है। वह थाइलैण्ड और इन्डोचीन जैसे दूर देशो तक गये। इन अनेक भ्रमण-यात्राओ के पश्चात उन्होने कम-से-कम एक दर्जन पुस्तके तैयार की हैं। पुष्प-प्रेमियो को पता न होगा कि अनेक विलायती और अमरीकी उद्यान तथा वनस्पतिगृहो की शोभा बढानेवाले अनेक असाधारण और आकर्षक पुष्पो के लानेवाले वही है। उन्होने हिमालय तथा एशिया के अनेक पौधो की अनेक नई जातिया खोजी, जो वनस्पति-शास्त्रियो के परम्परागत लैटिन वर्गीकरण मे उनके नाम के साथ 'वार्डाई' कहलाती हैं।

"क्या वह कभी ल्हासा भी पहुचे ?" मैंने पूछा।

डैडी ने उत्तर दिया, "जहातक मेरा अनुमान है, नही, क्योकि वह जीवित देवताओ की अपेक्षा जीवित्त पौधो मे अधिक दिलचस्पी रखता था।"

अनेक महीनो वाद जवकि मैं किगडन वार्ड के विषय मे घर पर वैठा लिख रहा हू, भारत से प्राप्त एक प्रेस-विज्ञप्ति से पता चलता है कि वह तिव्वत और आसाम के हिमालयो मे, जहा प्रकृति का महान प्रलय हो रहा है, सपत्नीक खो गये है। विज्ञप्ति मे कहा है कि पर्वतो पर एक सप्ताह से भी अधिक समय तक भूकम्प आते रहे और वैज्ञानिको का विश्वास है कि भूमण्डल की छत पर पृथ्वी का रूप वदल रहा है। किगडन वार्ड-दम्पती का क्या हुआ, कुछ पता नही है।

इस उथल-पुथल का वेग ऐसा था कि ससार की एक विशाल नदी अपने मार्ग से हट गई है। ब्रह्मपुत्र, जो कि तिव्वत मे सापू कहलाती है,

एक प्राचीन नदी-मार्ग मे जा पडी है, जहां कि वह हजारो वर्ष पहले बहती थी।

जरा उन बाढो का अनुमान कीजिये, जब मिसीसिपी के समान विशाल नदी अकस्मात अपना मार्ग बदल दे। नई दिल्ली से प्राप्त अस्पष्ट समाचारों से पता चलता है कि आसाम और तिब्वत के जगली पहाडी प्रदेशो मे, जहा ब्रह्मपुत्र दक्षिण की ओर घूमती है और समुद्र की सतह से १२००० फुट की ऊचाई से बगाल की खाडी के लिए विशाल छलाग लगाती है, बहुत बडी सख्या मे जन-हानि हुई है। दस हजार से अधिक व्यक्ति बाढो के कारण इधर-उधर फसे है। लगभग दो सौ गाव जलमग्न हो गये है और निवासियो ने उद्धार की प्रतीक्षा मे वृक्षों पर शरण ली हुई है। भारत सरकार ने छोटी नावो का एक बडा समूह बाढ के पानी पर चलकर लोगो की जान बचाने के लिए भेजा है। प्रलयकारी बाढ से आक्रान्त हजारो जगली जानवरो—चीते, हाथी, एक सीग वाले गैंडो की लाशो के भयानक विवरण प्राप्त हुए है।

तिब्बत का आकाश रात के समय लाल-लाल चमकने लगा। नदियो का पानी गन्धक की लपट-सा हरा हो गया, जैसेकि वे नरक से निकली हो। वैज्ञानिको ने घोषित किया है कि हिमालय के शिखर, जो वर्षो से प्रसुप्त है, ज्वालामुखी के उद्‌गारो के रूप मे प्रस्फुटित हो रहे है।

भूगर्भ-वेत्ताओ का विश्वास है कि भूकम्प वर्षों तक चलते रहेगे। वे सन् १८९७ ई० के भूकम्पो का उदाहरण देते है, जो कि वर्तमान इतिहास मे भीषणतम थे और जिनके झटके १० वर्ष तक चलते रहे। वर्तमान जल-प्रलय भी उतना ही भीषण हो सकता है।

भारत के एक भूगर्भ-वेत्ता ने बताया कि वहा पृथ्वी की ऊपरी सतह चलायमान हो गई है। हिमालय लगभग गत दो शताब्दियो मे अधिक ऊचा हो गया है। सबसे ऊचा शिखर एवरेस्ट तीस वर्ष पूर्व की गणना के अनुसार २९००२ फुट ऊचा नापा गया था। हाल की नाप के अनुसार एवरेस्ट की ऊचाई २९२०० फुट है अर्थात् लगभग २०० फुट अधिक। इसी आधार पर यह अनुमान किया गया है कि वर्तमान भूडोलो मे हिमालय ऊचा उठ रहा है।

यदि किंगडन वार्ड और उसकी पत्नी प्रकृति के इस कोप से जीवित निकल आते है—मुझे विश्वास है कि वे अवश्य जीवित निकलेंगे—तो वे ससार को कैसी अनोखी कथा बतायेंगे ।[१]

उस शाम को चागू मे भुने मास, मटर और आलू का स्वादिष्ट भोजन करते हुए सिकिम के युवराज के साथ, जो कि वर्तमान शासक के पुत्र और हिमालयी राज्य के भावी शासक है, मनोरजक बातचीत हुई । वह मछली मारने के दौरान मे चागू के डाक-बगले पर अकस्मात ही आ गये थे । नौजवान सिकिमी राजकुमार ने, जो शिमला के महाराजाओ के पुत्रो के अग्रेजी स्कूल मे सात वर्ष पढने के उपरान्त, शुद्ध अग्रेजी बोलते हैं, हमे बताया कि हमारी पीठो को गर्म करनेवाली अगीठी की आग बुरास की आग है । उष्णता तथा भोजन पकाने के लिए किसी भी अन्य प्रकार की उष्ण प्रदेशीय जगली लकडी की अपेक्षा बुरास की लकडी को इस कारण पसन्द किया जाता है कि यह अधिक गर्मी देती है और २०० से २५० इच वार्षिक वृष्टिवाले प्रदेश के लिए सबसे अधिक महत्व की बात है कि यह गीली भी जल जाती है । उन्होने बताया कि वह स्वय तथा उनके पिता भी वनो के वृक्ष-विहीन होने से बचाने के लिए लोगो को बुरास काटने से रोकने का प्रयत्न कर रहे है, किन्तु उन्हे पर्याप्त सहयोग नही मिल रहा है । एक वर्ष पूर्व वन-विभाग का एक रेन्जर चागू प्रदेश मे शिखरो पर बुरास के पेडो को काटनेवालो का पीछा करने भेजा गया । उसने दो आदमियो को पकडा और उन्हे दड दिलवाने ला रहा था, लेकिन वह दड न दिलवा सका । उन्होने उसे उस कगार पर से, जिसे हम उस शाम को पार करके आये थे, धकेल दिया ।

जब हम प्रात.काल सोकर उठे, वर्षा बराबर हो रही थी और चागू की सुन्दर दृश्यावली पूर्णतया निगाह से ओझल हो रही थी । हम भी हिम्मत करके वर्षा मे चल पडे । ज्यो-ज्यो हम ऊपर चढ रहे थे,

---

१. वे वास्तव मे जीवित बच गये और उन्होने मार्च १९५२ के नेशनल ज्योग्राफिक मे भूकम्प के अपने संस्मरण प्रकाशित किये ।

सर्दी बढती जा रही थी। तीन घटे तक हमारी पार्टी पहाड पर चक्कर-दार रास्ते से चलती रही। हमारे खच्चर गीले पत्थरो पर फिसल जाते थे। हम एक बौद्ध धर्मचक्र के समीप से गुजरे, जो कि जलशक्ति से चल रहा था। यह गोल पीपे के आकार का धार्मिक चिह्नो से सुसज्जित था तथा इसके अन्दर कपडे और कागज पर लिखी प्रार्थनाए थी। यह पीपा तेजी से बहते स्रोत के कारण बराबर घूम रहा था। लोगो की मान्यता है कि प्रत्येक चक्कर के साथ वे प्रार्थनाए बुद्ध भगवान तथा तिब्बती धार्मिक क्षेत्र के उच्च देवो को प्रसारित हो रही है।

हम तिब्बत और भारत की सीमा पर नाथू ला पर चल रहे थे। 'ला' तिब्वती भाषा का दर्रे का पर्यायवाची शब्द है। दर्रे से पूर्व अन्तिम कुछ मील की यात्रा बड़ी कठिन थी और वर्षा बहुत ठडी थी। गर्मी लाने के लिए हमने रास्ते का अन्तिम मील काई से भरे हुए पत्थरो पर बुरास के बीच होकर दौडते हुए पार किया।

१४८०० फुट ऊचा नाथू ला यह अधिकतम ऊचाई थी, जहा कि हम अबतक पहुचे थे। वहांपर हमे कोई भी सैनिक या कस्टम की चौकी नही मिली, जैसेकि देशो की अधिकतर सीमाओ पर मिलती है। झब्बे-दार पूछवाले तीन याक ही, जिन्होने भागने से पूर्व ऊची चट्टान पर से हम लोगो की ओर सन्देहपूर्वक देखा, जानदार जीव थे, जो हमे भारत-तिब्बत की सीमा पर मिले।

जहा रास्ता समतल हुआ, और वर्जित देश मे प्रविष्ट हुआ, वहा हम याक के बालो की एक रस्सी के नीचे से गुजरे, जो दो चट्टानो पर बधी थी। इस रस्सी से कपडे के सैकडो झण्डे लटके थे, जिनपर प्रार्थनाए लिखी थी और जो तेज हवा मे खूब लहरा रहे थे। इनकी प्रत्येक लहर भी स्वर्ग को प्रार्थनाए उसी प्रकार ले जा रही थी, जैसे कि जलशक्ति से चलनेवाले पीपे का प्रत्येक चक्कर। ये झडे सौभाग्य के तावीजो के समान थे, जो कि लामाओ के बुद्धि के देवताओ का आवाहन कर रहे थे। ये देवता दीर्घ आयु प्रदान करनेवाले तथा दुर्घटना और बीमारी से बचानेवाले थे। अधिकतर भेंट देनेवाला व्यक्ति अपना नाम या जन्म का वर्ष झडे पर अंकित करा देता है और इसपर रहस्यवादी शब्द 'ओं मणि पद्म हु'

(कमल मे निहित मणि की जय हो)' जो तिब्बत मे एक सिरे से दूसरे सिरे तक गूंजते हैं अवश्य अंकित होते है।

सीमा पार करने पर हमने अपने टोप उतारे और तिब्बती रिवाज के अनुसार नमन किया। तब भूत-प्रेत आदि को भगाने के लिए चिल्लाकर पत्थर फेंके, और उस पत्थर के टीले पर अपने भाग का पत्थर भी शामिल कर दिया, जो दूसरे यात्रियो द्वारा चढाये गए पत्थरो के फल-स्वरूप ३० फुट की ऊचाई तक पहुच गया था। हमारी पार्टी के कुछ भक्त बौद्ध उन राक्षसो को, जो अन्य पहाडी दर्रों के समान नाथू ला पर भी रहते हैं, भगाने के लिए 'ओ मणि पद्म हु' मन्त्र को बार-बार दुहराते रहे।

तीव्र वर्षा की बौछार से प्रताडित होने और अत्यन्त ठड हो जाने के कारण, हम नाथू ला पर थोडी देर भी नही रुके और विशाल अपर-चुम्बी घाटी के कुछ नालो पर होते हुए नीचे को पैदल चलते रहे।

अपनी दाहिनी ओर बहुत ऊचाई पर हमने बर्फ के टुकडे देखे, जिनमे से पानी की पतली धारा निकल रही थी, जो कि घाटी मे गिरने तक काफी बडी हो गई थी। अपने नक्शो मे देखने पर पता चला कि यह छोटा-सा झरना ससार की अत्यन्त वेगवती नदियो मे से एक—ब्रह्मपुत्र—का उद्गम था। दर्रे मे, हवा से सुरक्षित दिशा की ओर आधा मील बढकर हमने बिस्कुट, पनीर और चाकलेट का भोजन शीघ्रता-पूर्वक किया और उसे गरम सूप और क्लोरिन मिले पानी से निगल लिया। हमारे कुली भी भोजन के लिए रुके। उन्होने छोटे लकडी के प्याले अपने कपडो के नीचे से निकाले और उन्हे जौ के सफेद आटे से, जिसे कि वे अपनी पेटी से बधी याक के चमडे की छोटी थैलियो मे रक्खे हुए थे, थोडा भरा, तब समीप के सोते से कुछ पानी मिलाकर कच्चे मिश्रण को गूथा। यह अब आलू के मलीदे के समान दीखता था। हरएक कुली इस गुथे आटे का टुकडा लेता था, उसकी गोली बनाता था और स्वाद से निगल लेता था। यह तिब्बत का प्रसिद्ध राष्ट्रीय भोज्य पदार्थ 'शम्बा' है। हमारे कुली सुबह, दोपहर और शाम शम्बा ही खाते थे और जहा सम्भव होता था उसमे 'चाग' (तिब्बत की जौ की

शराव) मिला लेते थे। जौ तिब्बत की मुख्य उपज है और साधारण तौर पर यही एक अन्न है, जो ससार की छत पर सफलतापूर्वक उगाया जाता है।

हम नाथू ला के तिब्बती भाग की ओर उतरने लगे थे। हिमालय पर थोडा भी ढाल अधिक होने पर घोडे से उतर लिया जाता है, क्योकि एक तिब्बती कहावत है, जो कि हमेशा ध्यान मे रखनी चाहिए, 'यदि वह तुम्हे ऊपर नही ले जा सकता, तो वह घोडा नही है। यदि तुम ढाल पर स्वय न उतरो तो तुम आदमी नही हो।'

अब हमारा रास्ता चीड और फर के जगलों से होकर तथा फूलो के गुच्छो के झुडो के बीच से होकर गुजर रहा था। उनके चित्र-विचित्र रग चारो ओर इन्द्रधनुषी समुद्र की जैसी लहरे फैला रहा था। अत मे वर्षा मे चलते-चलते दिन का गन्तव्य स्थान समीप आ गया। १३,३५० फुट की ऊचाई पर स्थित चम्पिथोग के आरामदेह डाक-बगले का हमने हर्षपूर्वक स्वागत किया।

आखिर मे हिमालय की रुकावट को पार करके हम तिब्बत मे पहुच गये।

अगली सुबह जब हमारे कारवा के आगे बढने का समय आया, हमने जान रावर्टस को बिदा दी, उसे यहा से वापस लौटना था। वह भारी हृदय से वापसी रास्ते पर चढता हुआ अदृश्य हो गया। हमने अबतक जितना टेप रिकार्डिंग किया था, उसके साथ भारत भेज दिया।

डैडी और मैं चुम्बी घाटी मे उतरते जा रहे थे और हमारा गन्तव्य स्थान था तिब्बत का चौथे नम्बर का सबसे बडा शहर, यातुग। अब सूर्य भी निकल आया और घाटी का आश्चर्यजनक दृश्य हमारे सामने था। आमू नदी सुनहरे और हरे खेतो तथा सफेद मकानोवाले छोटे गावो से होकर वह रही थी। हम जगलो से होकर उतर रहे थे, जहा प्रत्येक वृक्ष सुनहरी कोमल काई से ढका हुआ शोभित था। यह उस प्रकार की भारी और दबा देनेवाली काई नही थी, जैसी हमारे यहा धुर दक्षिण मे मिलती है।

इस जंगल मे हमे सबसे पहला तिब्बती वानर (लगूर) देखने को

मिला। यह आकार मे काफी बडा और सफेद था, पूछ लम्बी थी और चेहरा काला था, जिससे वह बूढे तिव्बती के समान दीखता था। वह हमारे ऊपर देवदार के पेड पर बैठा हुआ पगडडी से जाते हुए हमारे कारवा को उदासीन भाव से देखता रहा। तिव्बत ऐसे वानरो (लगूर) के लिए स्वर्ग है। पुनर्जन्म मे दृढ विश्वास होने के कारण तिव्वती लोग पशु-पक्षी और मछलियो तक को नही मारते है। वे यह भी मानते है कि जो व्यक्ति पवित्र जीवन व्यतीत करता है, मृत्यु के उपरान्त उच्च योनि मे जाता है। जिसका जीवन धर्मानुसार नही व्यतीत हुआ है, वह निचली योनि मे जन्म लेता है। कौन जाने, वह वडा वानर किसी तिव्वती का धर्म-भ्रष्ट लकडदादा हो। जो हो, डार्विन द्वारा अपने सिद्धान्त की स्थापना से अनेक शताव्दी पूर्व ही तिव्वतियो ने वानर से वशानुक्रम स्थापित कर लिया था। प्राचीन कथाओ के अनुसार एक वानर, जो चैरेजी—दया के देवता—का अवतार था, एक राक्षसी से मिला, जो अपने पिछले जन्म के पापो के कारण दुर्दशाग्रस्त थी। दया के वशीभूत होकर वानर ने उससे विवाह कर लिया। इस सयोग के फल-स्वरूप छः बच्चे हुए। पिता ने पवित्र अन्न का भोजन कराके उनकी पूछ और लम्वे वालो से छुटकारा दिला दिया। उसी प्राचीन कथा के अनुसार ये वच्चे ही तिव्वत-निवासियो के पूर्वज थे।

चुम्बी घाटी के नीचे उतरते हुए हमने दर्रे की चोटी से लगभग ५ या ६ मील का चक्कर लिया। ठीक नीचे उभरी हुई चट्टान पर, मार्ग मे सर्वप्रथम बौद्ध मठ काग्यू गोम्पा की, जो रक्ताबर भिक्षु समुदाय का घर है, सुनहरी छतें चमक रही थी। रक्ताबर भिक्षुओ मे अविवाहित रहना आवश्यक नही है। अनेक भिक्षु विवाह करके वाल-वच्चे वाले वन जाते है। वहुतो को बिना विवाह किये भी वच्चे होते है। एक समय था जवकि वे तिव्वत पर शासन करते थे, पर अब वे अल्प-सख्या मे है। ज्यो-ज्यो हम पहाड से सटी हुई बुर्जवाली भारी दीवारो की इस इमारत के समीप पहुच रहे थे, आगन मे एकत्र होती हुई भिक्षुओ की भीड हमे दीखने लगी। द्वार के समीप चट्टान पर एक वृद्ध पुजारी, बुद्ध की ध्यान-मुद्रा मे बैठा था। जब हमने उसकी ओर अपने कैमरे घुमाये, वह

मुस्कराया और चित्र लेने पर उसने कोई आपत्ति नही की। सुनहरी टोपी-वाले एक बड़े पुजारी के साथ अनेक भिक्षु मुख्य द्वार पर आये और हम-से रात को ठहरने के लिए आग्रह किया। हम निर्धारित समय से पिछड गये थे, इस कारण अनिच्छापूर्वक उनके आमन्त्रण को अस्वीकार करना पड़ा। किन्तु भारी, महाकाय पत्थरों के उस मठ ने हमे यह अनुभव करा दिया कि हम वास्तव मे रहस्यपूर्ण तिब्बत मे हैं।

समस्त तिब्बत-निवासियो के दैनिक जीवन मे धर्म और कर्मकाड का क्या स्थान है, यह समझे बिना तिब्बत मे कुछ मील चलना भी सभव नही है। लगभग एक-चौथाई पुरुष भिक्षु हैं। यद्यपि विदेशी सभी भिक्षुओ को साधारण तौर पर लामा कहते है, किन्तु 'लामा' शब्द सही अर्थ मे शरीर-धारी देवताओ के लिए, जो धर्मशासको मे सबसे प्रमुख है, तथा महात्मा-पुजारियो के लिए, जो धार्मिक शिक्षा देने के अधिकारी है, प्रयुक्त होता है। साधारण कोटि के भिक्षु 'त्रपा' कहलाते है। गगन-चुम्बी विशाल मठो मे दो लाख से भी अधिक भिक्षुओं का शेष ४० लाख जनता द्वारा पालन-पोषण होता है।

दलाई लामा, प्रमुख लामाओ, प्रधान पुजारियो और कुछ चुने हुए अभिजात वशो के साथ संसार के इस एकमात्र धर्माश्रित राज्य पर शासन करते हैं। इस देश तथा इसके अनोखे व्यक्तियो का, जो मशीन युग से सदियो परे है, कोई भी परिचय, इसके धर्म के विषय मे कुछ जानकारी प्राप्त किये बिना, पूर्ण नही हो सकता। अनेक प्रसिद्ध विद्वानो को, जिन्होने इस विषय के शोध मे सम्पूर्ण जीवन लगा दिया है, ध्यान मे लाते हुए, मेरा इस विषय मे कुछ कहना दुःसाहस ही होगा, फिर भी अत्यन्त नम्र भाव से तिब्बत मे आगे यात्रा से पूर्व, मैं सक्षेप मे इसकी धार्मिक पृष्ठ-भूमि बताने का प्रयत्न करूंगा।

ईसा की प्रारंभिक शताब्दियो मे तिब्बत-निवासी लड़ाकू जन-जाति के थे और परस्पर साधारण सम्बन्ध रखनेवाले फिरको से बने थे। उन्होने अनेक विजयी युद्ध लडे और अपने मध्य एशियायी पडोसियो को जीता। उनका धर्म जो बोन या पोन कहलाता था, एक प्रकार का ब्रह्मवाद ही था। वे विश्वास करते थे कि आत्माएं पहाड, चट्टान, झील

नदी और वृक्ष, यहातक कि ऊपर आकाश तथा पृथ्वी के नीचे भी निवास करती हैं। वे शुभ आत्माओ की पूजा करते थे और दुष्ट आत्माओं की शान्ति करते थे। वे जादू-टोने और टोटको की शरण भी लेते थे। उन दिनो भिक्षु, मठ या मन्दिर नही थे। जादू और जादूगरो का धार्मिक क्षेत्र पर आधिपत्य था।

सातवी शताब्दी के मध्य मे जबकि भिन्न-भिन्न फिरके मिल गये थे, तिब्बत मे सोंग-सेन-गाम्पो नाम का शक्तिशाली राजा हुआ। उसकी सेनाओ ने पश्चिमी चीन और उत्तरी भारत के कुछ भागो को जीत लिया। तब सोग-सेन-गाम्पो ने एक चीनी राजकुमारी और नेपाल के राजा की पुत्री को अपनी पटरानिया बनाया। ये दोनो बौद्ध थी। चीनी राजकुमारी अपने साथ भारत के चन्दन की बनी हुई बुद्ध की बहुमूल्य एव सग्रहणीय मूर्ति लाई। नेपाल की राजकुमारी भी अपने दहेज मे तीन बहुमूल्य बुद्ध मूर्तिया लाई। दोनो रानियो ने अपने सम्मिलित प्रयत्नो से राजा को बौद्ध धर्म का उत्साही अनुयायी बना लिया। नव-निर्मित राजधानी ल्हासा मे दोनो रानियो ने अपनी मूर्तिया स्थापित कराने के लिए मन्दिर बनवाने की इच्छा की। चीनी रानी ने 'रामोशे' मन्दिर बनवाया, जो अभी तक खडा है और वहा उस भक्त महिला की मूर्ति भी स्थित हैं। नेपाली रानी के लिए सोग-सेन-गाम्पो ने प्रसिद्ध 'जो-काग' मठ बनवाया, क्योकि वह इतनी धनवान न थी कि स्वय बनवा सकती। सोग-सेन-गाम्पो अत्यन्त उत्साही भक्त बन गया और उसने न केवल बौद्ध धर्म को तिब्बत मे प्रेरणा दी, बल्कि भिक्षु सम्प्रदाय की भी स्थापना की। इस महान शासक से पहले तिब्बत की कोई लिपि नही थी। भारत से लाये हुए बौद्ध धर्म-ग्रन्थो को अनुवाद कराने की उत्कण्ठा से उसने अपने एक मन्त्री को अध्ययन के लिए और तिब्बती वर्णमाला को तैयार कराने के लिए भारत भेजा। सस्कृत की शैली पर आधारित लिखित वर्णों का आविष्कार किया गया। वर्तमान तिब्बत मे सोग-सेन-गाम्पोकी चेन्रेजी के अवतार के रूप मे, जो तिब्बत का सरक्षक दया का देवता है, भारत का अवलोकितेश्वर है और चीन तथा जापान का कृपालु क्वान्यिन है, पूजा की जाती है।

बौद्ध धर्म के दो मुख्य विभाग है—हीनयान और महायान। हीनयान बुद्ध की वास्तविक शिक्षाओ के अनुसरण का दावा करता है तथा बौद्धिक और विचार-सम्वन्धी पक्ष पर जोर देता है। यह बुद्ध को ईश्वर न मान-कर एक महान शिक्षक और ऋषि के रूप मे मानता है। महायान बौद्ध मत की अधिक रहस्यवादी व्याख्या करता है और बुद्ध की स्वर्गीय आत्मा के रूप मे पूजा करता है। यह विश्वास और प्रेम तथा ज्ञान के द्वारा मुक्ति का आश्वासन देता है। महायान मुख्य रूप से दक्षिण एशिया और हीनयान उत्तर मे फैला।

अपेक्षाकृत सरल और आशावादी महायान बौद्ध धर्म तिब्वत मे प्रवृत्त हुआ, जिसने श्रद्धा के द्वारा मुक्ति का आश्वासन दिया और जो पुराने मत के समान कट्टर और अनुसरण मे दुरूह नही था। यही क्रमशः तिब्बत मे फैल गया। बोन पूजक तथा शक्तिशाली बोन जादूगरो ने बौद्ध धर्म के प्रसार का भयानक रूप से विरोध किया, किन्तु आठवी और नवी शताब्दी के एकाधिक राजाओ ने इसको आश्रय दिया। इनमें सबसे प्रमुख थे ति-सोग-देत्सन और रैल्पाशन, जिन्होने बौद्ध धर्म के साथ ही सैनिक विजयो को भी सम्मिलित किया। सोग-सेन-गाम्पो के साथ वे तिब्वत मे आजतक तीन धार्मिक सम्राट और शक्तिशाली मनुष्य के रूप मे पूजे जाते है। ये तीनो राजा मध्य एशिया मे महान सैनिक शक्ति के रूप मे तिब्बत के विगत काल के प्रतिनिधि है। ज्यो-ज्यो तिब्बत मे बौद्ध धर्म के अनुयायी बढे, उनकी योद्धा प्रवृत्ति कम होती गई। स्वर्गीय सर चार्ल्स बैल का, जो तिब्बत पर प्रामाणिक अंग्रेज लेखक हैं, मत है कि आक्रमण होने पर तिब्बतियो को अपने पवित्र धर्म के नाश का सबसे अधिक भय है और इस वात का भी कि उसकी रक्षा के लिए भिक्षुओ से लडने की आशा की जायगी। मै १९३१ मे प्रकाशित उनकी पुस्तक 'तिब्बत का धर्म' (रिलीजन ऑव तिब्बत) से एक मनोरजक उद्धरण देता हूं:

"इसके अनेक सकेत मिलते है कि यद्यपि तिब्बतियो की लडाकू शक्ति का बौद्ध धर्म से ह्रास हो गया है तथापि वह नष्ट नही हुई है। यह निश्चित है कि बाद मे तिब्बत अपने धर्म के लिए अवश्य लड़ेगा।

आपने कभी तिब्बती पुस्तको मे 'शम्भाला' नाम के देश के विषय मे पढा होगा। जब लोग इसके विषय मे बात करते हैं, वे इसे साधारण तौर पर 'उत्तर का शम्भाला' कहते है और इसे एक रहस्यपूर्ण देश बताते है, जो अब से तीन या चार शताब्दी के उपरान्त भयानक और निर्णायक युद्ध का क्षेत्र होगा। तिब्बती घरो मे इस लडाई के चित्र भी देखने को मिलते है। बोधिसत्व भी लडाई मे शमिल दिखाये गए हैं। वास्तव मे वे ही उसका निर्णय करनेवाले है। शम्भाला कही तिब्बत के उत्तर-पश्चिम मे है। रूसी मगोलिया के प्रभावशाली मगोल दोर्जीफ का, जो ल्हासा मे दर्शनशास्त्र का अध्यक्ष था, मत है कि शम्भाला रूस ही है।"

ति-सोग-दे-त्सन के समय मे विख्यात तान्त्रिक पद्मसभव भारत से बुलाया गया। यह विश्वास था कि उसके अन्दर दुष्ट आत्माओ तथा राक्षसो को दवाने की दैवी शक्ति है। अपने जादू के मन्त्रो और आश्चर्य-पूर्ण कृत्यो के कारण तन्त्रमत ने तिब्बतियो पर बडा प्रभाव डाला, क्योकि यह उनकी प्राचीन प्रकृति-पूजा और राक्षसो के भय से भी मिश्रित था। पद्मसभव ने, तिब्बत मे समाये पर, जो ल्हासा से दक्षिणपूर्व कुछ मील पर है, प्रथम विशाल मठ ७७७ ई० मे स्थापित किया। पद्मसमव द्वारा प्रचारित तान्त्रिक बौद्ध धर्म, मूल बोन मत की विशेषताओ से युक्त था और लामावाद के रूप मे फैला। रक्तावर भिक्षु समुदाय, जो तिब्बत के आदिम बौद्ध धर्म के अनुयायी है, उसे अपना प्रधान सन्त मानते है।

यद्यपि भारत मे बौद्ध धर्म अब लुप्त-सा ही हो गया है, तथापि यह उस समय समस्त बौद्ध देशो का प्रेरणा-स्रोत था। एशिया के भिन्न-भिन्न देशो से भिक्षु और धार्मिक मनुष्य वहा बौद्ध धर्म का ज्ञान प्राप्त करने जाते थे। तिब्बती भिक्षू भी उन तत्ववेत्ताओ के चरणो के निकट ज्ञान-प्राप्ति के लिए तथा प्राचीन धर्मग्रन्थो का तिब्बती भाषा मे अनुवाद करने गये। तिब्बतियो के लिए, जो स्वास्थ्यप्रद पर्वतीय प्रदेशो मे रहने के आदी थे, भारत की उष्ण जलवायु लगभग असह्य थी। बहुत-से लोग मर गये, किन्तु कुछ अपने बहुमूल्य अनुवाद लेकर लौटे। शाक्य के विद्वान भिक्षुओ ने तिब्बती बौद्ध धर्म-व्यवस्था का सर्वप्रथम प्रामा-

णिक संस्करण सग्रहीत किया। 'काग्यूर,' जो 'तिब्बत का बाइबल' ही है, १०८ भागो मे है, 'तेग्यूर' अर्थात टिप्पणी-भाष्य २२५ भागो मे है। तिब्बती अनुवाद मूल सस्कृत के ऐसे विश्वस्त अनुवाद है कि उनमें से अनेको के भारत मे नष्ट हो जाने के कारण बौद्ध विद्वान तिब्बती मठों के पुस्तकालयो मे उन अलभ्य कोशो के अध्ययन की अनुमति पाने के लिए प्रयत्न करते है।

रक्तावर भिक्षुओ का अनेक शताब्दियो तक प्रभाव रहा, किन्तु धनवृद्धि के साथ वे अपने कर्तव्यो की उपेक्षा करने लगे और उन्होने अनेक कुरीतिया शामिल करली, जिन्हे उच्च विचारोवाले पुरोहित वर्ग ने घृणा से देखा। चौदहवी शताब्दी के मध्य के लगभग तिब्बत का सबसे प्रसिद्ध धर्म-सुधारक सोग-कापा (प्याज के देश का मनुष्य) चीनी सीमा के समीप आम्दो प्रान्त मे पैदा हुआ। उसकी धार्मिक शिक्षा सक्या मे हुई और उसने धर्म के पवित्र रूप मे पुनरुत्थान का दृढ निश्चय किया। उसके पुजारी अविवाहित रहते थे, शराब नही पीते थे और सरल तथा भक्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। उसने अमिताचार एव विषयासक्तिपूर्ण तन्त्रो का बहिष्कार किया और तान्त्रिक मत की केवल सस्कारपूर्ण शिक्षाओ को स्वीकार किया। सोग कापा ने ल्हासा के निकट गैन्डन मठ की नीव डाली, जो आज भी तिब्बत मे सबसे बडा तृतीय मठ है। सुधार के उपरान्त निर्मित सम्प्रदाय गेलुग्पा—सदाचारी मार्ग—कहलाया। इसके अनुयायी अपने सिर पर ओढे गये पीले कपड़े के कारण पीताम्बर कहलाये। यह नाम उन्हे असशोधित सम्प्रदायवाले रक्तावर के विरोध मे दिया गया। रक्तावरो से कुछ समय तक विरोध और बाधाओ का सामना करने के उपरान्त पीताम्बरो ने प्रभुता प्राप्त कर ली, जोकि आजतक उन्हीके हाथ मे है। रक्तावरो की सख्या निरन्तर क्षीण होती गई। उनके कुछ मठ अब भी है और कभी-कभी वे पीताम्बरो के साथ शान्तिपूर्वक मठो मे रहते पाये जाते है।

महान सुधारक के उत्तराधिकारी ने, जो एक गडरिये का लडका था, ताशी-लुन्पो मठ (आशीर्वाद का पर्वत) की स्थापना की, जिसे बनाने मे सात वर्ष लगे। उसकी अपनी साधुता दूर-दूर तक

प्रसिद्ध थी। दुर्भाग्य से हम इस मठ को नही देख सके, क्योकि यह शिगात्से के समीप, ल्हासा से २०० मील पश्चिम मे है, जो कि राजधानी को जानेवाले हमारे सीधे मार्ग से वहुत अलग पडता था। यह पणछेन लामा का, जिसे तिब्बत-निवासी 'पणछेन रिम्पोरी' कहते है, परपरा-प्राप्त निवास है। पणछेन लामा पद मे दलाई लामा से द्वितीय है और आध्यात्मिक मामलो मे उन्हे लगभग उनके समान ही माना जाता है। किन्तु दलाई लामा धार्मिक एव सासारिक दोनो मामलो मे शासन करते है। वास्तव मे ल्हासा मे इस दैवी शासक के किसी निर्णय का कोई विरोध नही कर सकता। १९२४ ई० से, जबकि यह जीवित देवता तेरहवें दलाई लामा से गम्भीर मतभेद के कारण चीन भाग गया, ताशी-लुन्पो मे पणछेन लामा का अवतार नही हुआ है, स्वय निष्कासित पणछेन लामा का १९३७ ई० मे देहान्त हो गया। हाल ही मे चीनी साम्य-वादियो ने उत्तर-पश्चिम चीन मे एक बारह वर्ष के तिब्बती लडके को ग्रहण कर लिया है और उसे स्वर्गीय पणछेन लामा का अवतार कहकर आगे किये हुए हैं। चीनी साम्यवादी इस लडके को तिब्बत मे विद्रोह फैलाने के लिए उपयोग मे लाना चाहते है।

लामा धर्म के लम्बे और सश्लिष्ट विवरण मे रुचि रखनेवाले पाठक को किसी प्रामाणिक पुस्तक की सहायता लेनी चाहिए। बाद मे साधारण तिब्बतियो से वार्तालाप करके, दलाई लामा और उनके समीपस्थ व्यक्तियो से भेंट करके और मठो के दर्शन करके, वर्तमान दैनिक तिब्बती धर्म को मेरे पिता ने और मैंने जैसा भी पाया, उसका यत्रतत्र वर्णन करने का प्रयत्न करूगा।

६ | दलाई लामा का पारपत्र

रक्ताम्बर मठ को छोडने के बाद हम तालीश पत्र के वन से होकर नीचे उतरे। यातुग के मार्ग पर हमने तीव्र धारावाली गरजती आमू नदी को चलकर पार किया। यह ब्रह्मपुत्र की अनेक सहायक नदियों मे से एक थी, जिन्हे हमे पार करना था। यहा अनेक ऊचे खम्बे थे, जिनपर प्रार्थना के अनेक झंडे हवा मे लहरा रहे थे। आगे बढने पर हमे मार्ग मे प्रत्येक तिब्बती गाव के समीप पत्थर के पगोडा के आकार के धर्म-स्थान मिले, जो चैत्य (चौर्टेन) कहलाते है। ये मार्गवर्ती पूजा-स्थान है। इनमे प्राचीन स्मारक और मूर्तिया भी मिलती है। दूसरे, साधारण मार्गवर्ती पूजा-स्थान 'मणि' या 'प्रार्थना-भित्ति'[1] है। ल्हासा के मार्ग पर सर्वत्र, विशेष रूप से गाव और मठ के समीप, यात्रियो को सीमेन्ट और राजगीरी द्वारा निर्मित ये नीची भित्तिया मिलती है, जिनमे लगाये गए पत्थरो पर सर्वप्रिय पवित्र पाठ 'ओ मणि पद्म हु' अधिकतर खुदा रहता है। धार्मिक तिब्बती लोग इन भित्तियो को बनवाते रहते है और मन्त्रो को खुदवाते रहते है, जिसमे उनका बौद्धधर्म का पुण्य बढता जाय। प्रार्थना-भित्ति, चैत्य, मठ, समस्त पवित्र वस्तुएँ, स्थान और यहातक कि पुण्यात्मा व्यक्तियो तक के समीप से उनका सम्मान करने के लिए उनको दाहिनी ओर करके पास से निकलना चाहिए। तिब्बत मे एक कहावत प्रसिद्ध है कि अपनी बाईं ओर स्थित राक्षस से सावधान रहो।

यातुग के बाह्य प्रदेश मे एक नवयुवक चीनी ने, जो काले घुडसवारी के बूट, सफेद स्वेटर और चौडे किनारोंवाला १० गैलन का टोप (बहुत

---

१. इस प्रकार की भित्तियां अक्सर चौथाई मील या और अधिक दूरी तक चली जाती हैं।

बडा) पहने था, शुद्ध अंग्रेजी मे मुझे सबोधित किया, "कहिए, आप लोग कहा जा रहे हैं ?"

मुझे उससे पता चला कि वह उन चीनियो मे से एक था जो, जैसा कि मैं पिछले अध्याय मे बता चुका हूं, तिव्वत से इस तथ्य के पुष्टीकरण के लिए निकाल दिये गए थे कि तिव्वत चीनी या अन्य विदेशी प्रभाव से पूर्णतया स्वतन्त्र है। वह चीन जा रहा था। मुझे पता चला कि यातुग मे पचास या साठ चीनी थे, जो ल्हासा से भगाये गये थे।

"कितने चीनियो को तिब्बत छोडने की आज्ञा मिली है ?" मैंने उसमे पूछा।

"सभीको, जो व्यापारी नही है।" उसने उत्तर दिया।

"तुम क्या हो ?"

"मैं एक व्यापारी हू।"

"तुम किस चीज का व्यापार करते हो ?"

"ऊन तथा दूसरी चीजो का।"

"यदि तुम व्यापारी हो, तो तुम्हे क्यो जाना पड रहा है ?"

"मैं नही जानता।" उसका उत्तर स्वाभाविक नही जान पडा और उसने बलात् हँसने का प्रयत्न किया। बाद मे हमे पता चला कि वह तिव्वत सरकार का कर्मचारी था।

"तुमने इतनी अच्छी अग्रेजी बोलनी कहा से सीखी ?"

वह फिर अव्यवस्थित-सा जान पडा। "ओह ! समझ लो, मैंने भारत मे सीखी।"

आगे चलकर हमे पता चला कि वह मूल रूप से मध्य मगोलिया का निवासी था, जो कि सोवियत साइबेरिया से सलग्न है और उसने शिक्षा पाने के लिए जापान मे पाच या छ वर्ष व्यतीत किये थे।

यातुग इतनी गहरी घाटी मे स्थित है कि वहा दोपहर से पहले सूर्य नही निकलता और फिर तीन घटे बाद छिप जाता है, किन्तु आमू नदी के किनारे-किनारे चित्र-विचित्र मुख्य सडक, उद्यान और फूल तथा गुर्राते हुए विशाल कुत्तोवाला यह तिव्वत का चौथा नगर हमारी आशा से कही अच्छा था। यह एक समृद्ध व्यापारिक केन्द्र है और इसके अनेक

निवासी काफी धनवान है।

चीनी से मुलाकात के वाद हमारी खच्चरों की टोली पथरीली सडक पर बढती गई और हम लकडी के तख्तो मे बने मकान पर पहुंचे, जो भारत के व्यापारिक एजेंट का निवासस्थान था। लम्वे और ढीले कपडो-वाला एक सिक्किम-निवासी हमारे स्वागत के लिए फाटक पर खडा था। यह सरल स्वभाव का अग्रेजी-भाषी हमारा मेजवान रायवहादुर सोनाम था।

उनके घर पर शाम को भोजन के समय तिव्वत-निवासियो के प्रति दृष्टिकोण के विषय मे वात चल पडी।

रायवहादुर महोदय ने हमे वताया कि तिव्वत मे परिवर्तन की इच्छा नही है। जनता अपनी जीवन-शैली को यथावत रहने देना चाहती है। वे सोचते है, विदेशियो के पास उनको देने के लिए वहुत कम है और वास्तव मे उसका वुराई पैदा करनेवाला ही प्रभाव होगा। हमारे मेजवान के मतानुसार आधुनिक नगरो की प्रगतिपूर्ण कार्यप्रणाली केवल 'विकृत चूहो की दौड' जैसी ही है। तिव्वती इसमे भाग लेना नही चाहता। वह वाहरी ससार के पागलपन से दूर रहना और अपने पर्वतो के एकान्त मे वौद्धो का जैसा धार्मिक जीवन व्यतीत करना चाहता है। वह विश्वास करता है कि यही अन्त मे उसे पुनर्जन्म के चक्र से छुडा-येगा और वौद्धो के धार्मिक ससार मे निर्वाण—मोक्ष—लाभ करायेगा।

तिव्वत मे सांसारिक की अपेक्षा धार्मिक कार्यो पर अधिक जोर है। तिव्वती अपनी सुविधानुसार जीवन-शैली को सुरक्षित वनाये रखने के लिए दोषी नही कहे जा सकते। शायद उनके पास इसका उत्तर भी है। यह ससार के लिए कदाचित अच्छा ही होता, यदि तिव्वत को ज्यों-का-त्यो छोड दिया जाता—"एक राष्ट्र, जहां जीवन आदिम समय से लेकर वर्तमान काल तक अपरिवर्तित चलता रहता।"

फिर भी आधुनिक हस्तक्षेप ऐसे स्वप्न को उडा देने पर तुले है। हमारे यातुंग के मेजबान ने कहा "कुछ देश अन्य देशो के काम मे हस्तक्षेप करना चाहते हैं और तिब्बत पर भी उनकी निगाह है।" हमे

आश्चर्य है कि क्या किसी भी राष्ट्र के लिए, चाहे वह कितना ही सुदूर हो, चाहे ऊचे पर्वतो से कितना ही पृथक किया हुआ हुआ हो, इस तीव्र गति, ऊचे उडते वायुयान, रेडियो-तरग और अणुशक्ति के युग मे अपनेको विश्व की समस्याओ से अलग रखना सभव है ।

हमारा तिब्वत का पारपत्र—लामयिक—प्राप्त करने के लिए रायवहादुर सोनाम ने हमे स्थानीय तिब्वती व्यापार एजेन्ट, घोमू-निवासी ओमो ओची से परिचित कराया। वह पूर्ण शासकीय पोशाक मे अर्थात वह एक लवा नीला चोगा, जो लाल कामदार रूमाल से वधा था, पहने हुए मिले। उनकी काली चोटी सिर पर जूडे के रूप मे बधी थी और उनके वाये कान से चार इच का सोने और फिरोजे (मणि) का एक लटकन लटक रहा था। इन सबके ऊपर पश्चिमी मुकुट था। (एक पश्चिमी वस्तु, जिसकी ओर तिब्वती अत्यन्त आकर्षित है, वह है 'फैल्ट हैट')।

इस प्रभावशाली सज्जन के साथ उपहार लिये हुए तीन नौकर थे। एक के हाथ मे एक ट्रै था, जिसमे लगभग सौ या अधिक कुछ ताजे और कुछ पुराने अडे भरे थे। चीन की तरह लामाओ के देश मे भी दोनो प्रकार के ही पसन्द किये जाते हैं। दूसरे नौकर के पास याक का विशाल कन्धा था, जो कि काटकर सुधारा हुआ था। तीसरे के पास याक के मक्खन का वहुत वडा प्याला था। ये उपहार वहुत पसन्द किये गए, विशेष करके हमारे नौकरो के द्वारा, जो याक के गन्धपूर्ण मक्खन को तिव्वत के राष्ट्रीय पेय, याक के मक्खन की चाय के लिए खुशी से काम मे लाते थे।

जव घोमू का ओमो ओची हमारे समीप पहुचा, उसने वारी-वारी से हमारी ओर अपनी जीभ निकाली और सिसकारी भरी। विश्व की छत पर ये दोनो चेष्टाए अच्छे व्यवहार और शिष्टाचार के चिह्न है। जव हमने मिलने के लिए अपना हाथ आगे फैलाया, तो उसने हमारे फैले हुए हाथ मे सफेद सिल्क का रूमाल या काटा दे दिया। अपूर्व तिव्वती शैली मे आगतुक के स्वागत का यह हमारा प्रथम अनुभव था।

हमने इस सुशीलता का उत्तर सिकिम से लाये हुए अपने स्टाक मे

से उसी प्रकार के बड़े रूमाल की भेंट करके दिया। इसके उपरान्त हमने अपने उपहारों के बक्स मे से उसे दलाई लामा के एजेन्ट की हैसियत में एक स्वयंचालित सुनहरी पत्तरवाली पैन्सिल दी, जो कि व्यवस्थित करने पर चार रगो मे लिख सकती थी। चाय की चुसकियो के बीच, हमारे अंग्रेजी बोलनेवाले आतिथेय के द्वारा कही गई हमारी वातो की स्वीकृति प्रकट करने के लिए वह सिसकारी भरता जाता था।

एजेन्ट ने हमारे अमरीकी पारपत्रो पर तिब्बती लिपि मे कुछ लिखकर तथा उसपर ल्हासा सरकार की प्राचीन मोहर लगाकर हमे असाधारण सम्मान दिया। हमे बताया गया कि यह प्रथम अवसर था, जबकि किसी पारपत्र पर इस प्रकार पृष्ठाकन किया गया था। त्रोमो त्रोची ने जो कुछ लिखा वह कुछ इस प्रकार था:

'मि० लावेल थामस, एक अमरीकी नागरिक, को तिव्वत सरकार ने ल्हासा आने की अनुमति दी है। धोमू के त्रोमो त्रोची ने मोहर लगाई: दिनाक भूमि-वृष वर्ष के तिब्बती महीने का १७ वा दिन।'

तिब्बत ने एक अनोखे पचाग का निर्माण किया है, जो सहस्रो वर्षों से प्रचलित है। पाच पदार्थ बारह जीवो के साथ वर्षो का नाम रखने के लिए संबद्ध किये जाते है।

हर ६० वर्ष मे एक चक्र पूर्ण होता है। पदार्थ है भूमि, लौह, जल, काष्ठ और अग्नि और प्रत्येक पदार्थ दो वार आता है, एक बार नर और दूसरी बार मादा रूप मे। बारह जीव श्वान, वराह, मूषक, वृष, सिह, शशक, नाग, सर्प, अश्व, मेष, वानर और पक्षी प्रतिवर्ष बदलते रहते है। इस प्रकार सन् १९४९ वर्ष भूमि-वृष का वर्ष था, १९५० भूमि सिंहली वर्ष है और १९५१ लौह-शशक वर्ष होगा।

यातुग मे हमे सिकिम से लाये हुए खच्चरों के झुड को बदलना था। यहा से वे सेवक और खच्चर दोनो, जिन्होने हमारी नाथू ला के पार लाने की सेवा की थी, गगटोक लौट गए। अब हमे यात्रा के दूसरे चरण के लिए तिब्बत के भारवाही पशुओ का दल तैयार करना था। यह यात्रा फारी नगर तक दो दिनो की थी।

अगले प्रातः जब हम सोकर उठे, तो हमे हमारा नया परिवहन लादे

जाने के लिए तैयार मिला। हमारे सामान के ३७ वक्सो को ले जने के लिए १६ भारवाही पशु और ५ सवारी के खच्चर थे। यहा से हमारे सेवक, बावर्ची नोवू, खानसामा लेजर और दुभाषिया से-वोग भी सवारी पर ही चले। किन्तु चलने से पूर्व हमे लामयिक के आने की प्रतीक्षा करनी पडी। इस आज्ञा-पत्र के बिना कोई भी यात्री तिब्बत मे और अन्दर नही घुस सकता।

सुवह के नाश्ते के उपरान्त ही त्रोमो त्रोची ने हमे वह पारपत्र लाकर दे दिया। यह २ फुट × ३ फुट आकार के भोज-पत्र के टुकडे पर बास की कलम से तिब्बती लिपि मे, जो सस्कृत जैसी लगती थी, लिखा था। जब त्रोमो त्रोची ने इस मुट्ठे को खोला, हम उसके चारो ओर एकत्र हो गए। सेवोग ने उसका इस प्रकार अनुवाद किया·

"धोमू (यातुग) से लेकर ल्हासा तक सब लोग सरकारी कर्मचारी तथा अन्य लोगो को विदित हो कि तिब्बत सरकार से एक सन्देश मिला है कि दो अमरीकी यात्रियो को एक दुभाषिये और नौकरो के साथ ल्हासा जाने की अनुमति है। उन्हे १६ भारवाही खच्चर और ६ सवारी के पशु तथा जरूरत पडने पर कुली भी दिये जाय। ढुलाई का हिसाव उनके साथ के सशस्त्र रक्षक चोगयोन नीमा ग्यावू द्वारा स्थानीय दरो पर तय किया जायगा। मार्ग मे निवासस्थान की तैयारी, रसोई के लिए नौकर, नदी पार करने के लिए खाल की नावें तथा अन्य आवश्यक वस्तुए जैसे दूध, अन्डा और शाक आदि उन्हे प्रचलित दर पर ही दिया जाय। दोनो अमरीकियो की इच्छाए सूचना पाते ही तत्काल पूरी की जाय। इस यात्रा मे उन्हे प्रत्येक वस्तु निश्चयपूर्वक मिल जानी चाहिए, क्योकि अमरीकी तिब्बत के वहुत अच्छे मित्र हैं। यदि वे यात्रा के प्रत्येक मुकाम पर पहुचने के उपरान्त तुरन्त आगे बढना चाहे तो उनकी इच्छा पूरी की जाय।" जब दलाई लामा का पारपत्र हमारे सामने फैलाया गया तो मेरे मन मे यह विचार आये बिना न रह सका कि अनेक पश्चिमी अन्वेषक, जो ल्हासा पहुचने मे असफल रहे, ऐसे आलेख पत्र को, जिससे उन्हे राजधानी के यात्रा-मार्ग मे सुरक्षा और रसद प्राप्ति की गारटी मिलती हो, कितना वहुमूल्य समझते।

डब्लू-वुडविल रौकहिल का ही, जो १९१४ ई०मे चीन से लौटने पर होनोलूलू मे अपने देहान्त तक एक अमरीकी कूटनीतिज्ञ के रूप मे विख्यात रहे, उदाहरण लीजिए। वह सयुक्त राज्य अमरीका के चीन तथा अनेक बाल्कन राज्यो के मन्त्री रहे, रूस एव तुर्की मे राजदूत रहे तथा अनेक अन्य महत्वपूर्ण पदो पर कार्य करते रहे। एक प्राच्य विद्या विशारद और तिब्बत के मामलो मे विशेषज्ञ के रूप मे उनके कार्य का अब भी बडा सम्मान है। अपने लडकपन से ही वे तिब्बती बौद्ध धर्म मे दिलचस्पी रखते थे। पीकिंग मे हमारे दूतावास के नवयुवक सचिव के रूप मे उन्होने चीनी और तिब्बती भाषा के अध्ययन की ओर ध्यान दिया। उनका दोनों मे सहज रूप मे प्रवेश था। तिब्बत के अज्ञात भागो के अन्वेषण तथा ल्हासा जाने की उनकी हार्दिक इच्छा थी, इसलिए रौकहिल ने सन १८८८ मे राजनयिक सेवा के पद से इस्तीफा दे दिया और दिसम्बर मे पीकिंग से कोकोनूर के मार्ग से चल पड़े और अगले वसन्त मे सीमावर्ती प्रदेश के समीप साईदाम बैसिन मे पहुच गए। वे चीनी सरहदी, मगोल या तिब्बती की तरह रहते और पोशाक पहनते थे।

अप्रैल तक वह पर्वत-श्रेणियों को पार करके तिब्बत के काफी अन्दर राजधानी के मार्ग पर थे। वे ६० पौड चांदी के और २० पौड सोने के सिक्के अपने कपडो में सीकर चले थे, किन्तु अव उनका धन समाप्त हो चला था और साथ ही उनके जानवर, पथ-प्रदर्शक और रसद भी। इसलिए उन्हे ल्हासा की सडक छोडनी पडी और खाम देश मे होकर चीन को वापस लौट जाना पडा।

उन्होने स्वीकार किया—"मैं भूख से लगभग अधमरा हो चला था और अनेक वार बर्फ के कारण अन्धा-सा हो जाता था। मुझे पूर्वी तिव्वत के शत्रुतापूर्ण लामाओ से जान बचाकर भागना पडा और मैंने सौगन्ध ली कि मैं फिर ऐसा मूर्खतापूर्ण दु.साहस नही करूगा।

किन्तु एक वर्ष भी नही बीता था कि रौकहिल तिव्वत के वीरान प्रदेश मे अपना भाग्य आजमाने के लिए तैयारी करने लगे। उनका विचार ल्हासा मे प्रवेश करने और फिर भारत होकर लौटने का था। वह राजधानी से केवल सौ मील ही थे कि उन्हे लौट जाने की आज्ञा

मिली ।

दुर्भाग्य से रौकहिल की पवित्र नगरी को देखने की आकाक्षा कभी पूरी नही हुई । किन्तु उनकी तिब्वत-यात्राए विज्ञान के लिए बहुमूल्य सिद्ध हुई । अभी तक अज्ञात बजारो और पहाडी फिरको के विवरण के अलावा, उन्होने लगभग ३५०० मील भू-भाग का सर्वेक्षण किया, ६९ दर्रे पार किये, सौ विन्दुओ के वृत्त के छटे भाग की नाप देनेवाले यन्त्र से नाप किया और तीन चार-सौ के लगभग नृवश-शास्त्र, वनस्पति-शास्त्र और भूगर्भ-शास्त्र के नमूने एकत्र किये ।

दूसरा, स्वीडन-निवासी मध्य-एशिया और तिब्वत का अन्वेषक डा० स्वेन हैडिन था, जिसने अपनी प्रथम तिब्वत-यात्रा रौकहिल से कुछ वर्ष वाद ही की थी और उसके हृदय मे अमरीकी के समान ही ल्हासा पहुचने की लालसा थी । वह हमारे पारपत्र का कैसा स्वागत करता ! सन् १८९९ ई०के ग्रीष्म मे हैडिन ने तिब्वत के उतर-पूर्व आजकल सिन-क्याग के विशाल ताक्ला-मैकान नाम के रेगिस्तान मे स्थित, खोतान के मरुद्यान मे अपना मुख्य अड्डा वनाया । इस खुशनुमा नखलिस्तान मे उसने कारवा तैयार किया । वे ऊचे दर्रो को पार करके विशाल उत्तरी तिब्वती पठार की चोटी पर पहुचे और तेज आघी, ओलो और वर्फ के तूफान तथा काटनेवाली हवाओ का सामना करते हुए आगे बढते रहे ।

इन वीरान उत्तरी मैदानो मे उन्हे ५५ दिन तक एक भी मनुष्य नही मिला । चरागाह भी कम होते चले गए और जानवर एक-एक करके गिरने और मरने लगे । उनका भोजन भी लगभग समाप्त हो चुका था, जवकि वे एक घाटी मे पहुचे, जहा कि मगोल याको के झुन्ड को चरा रहे थे । वडी वीरतापूर्वक इस यात्रा पर चलनेवाले पशुओ मे से केवल ३ ऊट, ३ घोडे और एक गधा जीवित रह गया था । यात्रा-दल ने मैत्री-पूर्ण मगोलो के साथ कुछ दिन आराम किया, जिन्होने उनके हाथ घोडे तथा अन्य रसद वेची ।

नवीन रूप मे सुसज्जित तथा उत्साहपूर्ण होकर वे पूर्व की ओर निरन्तर वढते रहे । आधी जमी याक नदी को पार करने के उपरान्त, कारवा कोकोनूर (नील झील) पर पहुचा, जिसके विषय मे हैडिन ने

लिखा है—"इसकी छाया एक प्रकार के शानदार पीतहरित वर्ण से दूसरे वर्ण मे निरन्तर बदलती रहती है।"

अब नवम्बर आ चुका था, जबकि दक्षिण को ल्हासा की ओर खतरनाक दर्रो से होकर यात्रा करने के लिए बहुत देर हो चुकी थी, और स्वेन हैडिन, जिसे मध्य एशिया के अज्ञात प्रदेशो तथा उत्तरी तिब्बत मे खोज करते चार वर्ष हो चुके थे, अब धन की कमी का अनुभव करने लगा था। उसने चीनी सीमा पर कारवां का भुगतान किया और पीकिंग होता हुआ यूरोप चला गया। उसकी प्रथम तिब्बत-यात्रा का मुख्य फल यह हुआ कि तेईस झीलो की श्रृंखला की खोज हुई, जिन्हे हैडिन ने एशिया के मानचित्र मे अंकित किया। वह अब उन बाधाओं को जान गया था, जो तिब्बत जाने मे उसके सामने आ सकती थी। "मैं जान गया था कि मनुष्य की ज्ञानवृद्धि तथा शोध के कार्यो के लिए तिब्बत पर विजय प्राप्त करना संसार के समस्त देशो की अपेक्षा कठिन है।"

किन्तु बाधाए इस स्वीडन-निवासी अन्वेषक के लिए कुछ अर्थ नही रखती थी। उसने ल्हासा पहुचने का निश्चय कर रखा था, जिसे सन् १८४६ई०मे फ्रासीसी लेजारिस्ट पादरी हक और गैबेट के उपरान्त किसी भी यूरोपियन ने नहीं देखा था। मध्य एशिया के मरुस्थल मे दबे हुए प्राचीन नगर लाउ-लान की सनसनीदार खोज के उपरान्त वह अपनेको अधिक नौजवान, उत्साही और विजयी अनुभव कर रहा था और अब तिब्बत की दूसरी यात्रा के लिए उसकी लालसा अत्यन्त तीव्र हो गई थी। सन् १९०१ ई० मे उसने पुनः प्रयत्न किया, अनेक विपत्तिया झेली किन्तु नम्र और दृढ निश्चयी सरकारी कर्मचारियो द्वारा पुन लौटा दिया गया।

सन् १९०३ ई० मे तिब्बत ने हैडिन को तीसरी बार फिर आकर्षित किया। उसकी ल्हासा के संबन्ध में दिलचस्पी कम हो गई थी, क्योंकि अंग्रेज यंगहस्बैन्ड का दल वर्जित नगर मे पहले ही प्रविष्ट हो चुका था। हैडिल ऐसा अन्वेषक था, जो सर्व-प्रथम होने का ही श्रेय लेना पसन्द करता था, द्वितीय या तृतीय होने का नही। अब उसे आकर्षित करने-वाली वस्तु मुख्यतया सापू अर्थात ब्रह्मपुत्र के उत्तरी प्रदेश मे स्थित,

तिब्बत के मानचित्र पर दिखाये बडे-बडे सफेद धब्बे थे। हैडिन, सब प्रकार से सुसज्जित यात्रा-दल को लेकर, जिसके साथ अध्ययन के लिए समस्त वैज्ञानिक यन्त्र भी थे, लेह और १७६०० फुट ऊचे चाग ला के मार्ग से तिब्बत मे दो वर्ष रहकर उसने भारत की दो पवित्र नदियो (ब्रह्मपुत्र और सिन्धु) के उगद्मो की खोज की, शून्य और वीरान उत्तरी मैदान चाग ताग का विस्तारपूर्वक पता लगाया और अज्ञात झीलो की गहराइयां तथा नापो का हिसाब लगाया। तिब्बत के सरकारी कर्मचारियो द्वारा बराबर पीछा किये जाने के कारण उसे एक प्रकार से लाभ ही हुआ, क्योकि इससे उसे उन पर्वतो की महान श्रृखला को, जिनका नाम उसने 'ट्रान्स हिमालय' रक्खा, आठ वार आठ भिन्न-भिन्न दर्रो से पार करने का अवसर मिला। यह वडा महत्त्वपूर्ण कार्य था, जिससे अनेक नवीन खोजें हुई। ल्हासा कभी न पहुच सकने के सान्त्वना-पुरस्कार-स्वरूप उसे ताशी लुनपो मे पणछेन लामा का व्यक्तिगत अतिथि होकर छ सप्ताह व्यतीत करने का अवसर मिला।

कोई यह न समझे कि तिब्बत मे और रेगिस्तानो मे पडी विपत्तियो और कष्टो के कारण, जिनसे वह बाल-बाल बचा, श्वेन हैडिन का स्वास्थ्य असमय ही नष्ट हो गया होगा। इसके विपरीत ऐसा ज्ञात होता है कि इससे उसे अतिरिक्त जीवन-काल मिला। उसने स्टाकहोम मे फरवरी १९५० मे अपनी ८५ वी वर्षगाठ मनाई और अपने मध्य एशियाई अन्वेषण-सबधी वैज्ञानिक रिपोटो के विशाल ग्रन्थो पर अभी तक अत्यन्त व्यस्ततापूर्वक जुटा है। दोनो विश्वयुद्धो मे जर्मनी के प्रति पक्षपात-पूर्ण विचारो के कारण उसने अपने अनेक मित्रो और सहयोगियो को अपना विरोधी वना लिया, किन्तु खेदजनक राजनैतिक विचार वर्तमान काल के एक महान अन्वेषक के रूप मे प्राप्त उसकी प्रसिद्धि को नष्ट नही कर सकते।[1]

---

१. श्वेन हैडिन का ८७ वर्ष की अवस्था मे नवम्बर, १९५२ में देहान्त हो गया। वह अंतिम समय तक अपनी रिपोर्ट पर काम कर रहा था, जिसके ३७ भाग प्रकाशित हो चुके हैं और २३ भाग शेष हैं।

७ | ब्रिटेन और तिब्बत

अपने पारपत्र के अनुसार यातुंग से ल्हासा तक के शेष २५० मील के लिए हमे सरकारी पथ-प्रदर्शक, तिब्बत सेना का चोग-पोन (कारपोरल) नीमा ग्यावू मिल गया था। वह अत्यन्त महत्वपूर्ण पारपत्र को अपनी काठी मे लगे याक की खाल के बने थैले मे लिये था। कारपोरल अपने चित्र-विचित्र सजे खच्चर पर, गरजती हुई एमू नदी के किनारे-किनारे, सबसे आगे चल रहा था। उसकी पीठ पर कन्धे से होकर राइफल लटकी थी, जिसकी नली पर लाल याक के कपड़े का टुकड़ा लगा था। उसके कूल्हे पर एक वहनीय वेदी, उसका पूजा का चांदी का बक्स, जिसमे बुद्ध प्रतिमा थी, लटका था। अपनी लम्बी चोटी को इधर-उधर, राइफल और पूजा के बक्स पर लहराता हुआ, चोग-पोन त्वरित गति से चल रहा था और उसके खच्चर पर बधी अनेक घटिया घाटी मे गूज रही थी।

जिस मार्ग पर हम चल रहे थे उसीपर तार और टेलीफोन भेजने का तार भी चल रहा था, जो कि ल्हासा को गगटोक और बाहरी दुनिया से जोड़ता है। मूलतः अग्रेजो द्वारा लगाई गई यह तार की लाइन तूफान और तेज हवाओ से अक्सर बेकार हो जाती थी। जब यह सबसे पहले लगाई गई, जगली लोग इसके टुकड़े काटकर अपने उपयोग के लिए ले जाते थे। इसके लिए हाथ काटने की सजा घोषित कर दी गई। तबसे ल्हासा को जानेवाली उस एकान्त लाइन को मनुष्य द्वारा क्षति पहुचना लगभग समाप्त हो गया।

उस दिन हम यातुंग से १२ मील तक लगभग १३,५०० फुट की ऊंचाई पर धीरे-धीरे चढे। अपने चारो ओर तथा नीचे की शानदार दृश्यावली का हम सबसे पहली बार अब आनन्द ले सके, क्योकि हमारी प्रारम्भिक यात्रा मे वर्षा और मानसून के द्वारा उत्पन्न घना कुहरा

समाप्त हो चुका था। हम घडघडाती एमू के किनारे-किनारे चल रहे थे। इसका अनेक झरनो और प्रपातो से मथित पीला-हरा पानी दूधिया हो रहा था। इससे कनाडा के चट्टानी पर्वतो पर कुछ वर्ष पूर्व की गई यात्रा का स्मरण हो आया। उस समय मैं बैनफ के पश्चिमी पहाडो पर स्की[1] करने मे निपुण, नार्वे निवासी अर्लिग स्ट्रॉम नामक मित्र के साथ एसीनोब्याइन पर्वत के नीचे स्थित उसके कैम्प की ओर घोडे पर यात्रा कर रहा था। वहा भी हम ऐसे ही देवदार के जगल से गुजरे थे, जहा एमू का जैसा पहाडी स्रोत भी बह रहा था। मुख्य अतर यह था कि यहा दक्षिणी तिब्वत मे हमे ऊन से लदे याको के कारवा यत्रतत्र मिलते रहते थे और चट्टानी पर्वतो पर लट्ठो के बीच से बारहसिंगे हमारी ओर झाकते मिलते थे।

हिमालय की सास उखाड देनेवाली विकराल चढाइयो पर ६ दिन की यात्रा के उपरान्त हम पहाडी दीवार पर सात मील ऊपर चढते विशाल मध्य एशियाई पठार पर पहुच गये। तब उस सबसे ऊचे पठार पर, जैसा कि मैंने पहले कभी नही देखा था, अगले सात मील चले। उस शाम हम बराबर १४,००० फुट से अधिक ऊचाई पर, जो कि हमारे चट्टानी पर्वतो की सबसे ऊची चोटी से अधिक है, यात्रा करते रहे। उन ऊचे तिब्वती रास्तो मे मोड पर घूमते समय अकस्मात किसी कार या गाडी से भिड जाने का भय नही है और न भोपू की चीखें ही हैं, केवल कारवो की कर्ण-सुखद घटियो की टन-टन ही सुन पडती है।

अन्य लोग, जो तिब्बत की ऊची सडक पर गये है, वे सास उखडने, चक्कर, मतली आने और बैठने की स्थिति के अलावा नीद न आने की शिकायत करते हैं। लेकिन पहाड की बीमारी ने, जो अधिक ऊचाई पर चढनेवालो को परेशान करती है, हमे कुछ कष्ट नही दिया। शायद अपने यहा अक्सर की गई स्की यात्राए और काफी ऊचाई पर भी पर्याप्त श्रम-साध्य व्यायाम हमारी इस सुरक्षा का कारण था।

अपने खच्चरो पर लगभग १४,५०० फुट की ऊचाई पर जाते हुए

---

१ पैरो पर लंबी पटरी बांधकर वर्फ पर फिसलने का खेल।

हम चारों ओर पर्वत-शिखरों से घिरे थे, जो हमसे ३ से ६ हजार फुट तक ऊंचे थे।

डैडी मेरी ओर घूमकर बोले, "तुम स्की द्वारा इन ढालों पर नीचे जाना पसन्द करोगे?"

"मैं सोच ही रहा था कि यह बड़ा अच्छा खेल होगा।" मैंने कहा, "मैं शर्त लगाता हूं कि यहा संसार के २० लाख स्की खेलनेवालो के लिए पर्याप्त स्थान है और वे सब बिना 'ट्रैक' के लिये चिल्लाते हुए एक साथ सनसनाते नीचे उत[illegible]कते हैं।"

ज्योंही हम चक्कर काटकर एमू के सकुचित मार्ग को पार करके बड़े पठार मे पहुचे, हमारा कारवा सवारी से उतरा। हम एक दुर्भाग्य-युक्त स्थान पर पहुंच गये थे और दानवो को सन्तुष्ट करने के लिए रुके थे। उस स्थान पर दो चैत्य (चोर्टन) थे। बड़े चैत्य मे, जो हमारे सामने घाटी पर था, तांबे का एक पात्र था। बहुत वर्ष हुए, जबकि चैत्य बनाया गया था, लोग बुरी तरह से प्राचीन बोन अन्ध-विश्वासो और कर्मों से चिपटे थे, उस पात्र मे रक्त भरा जाता था। आठ वर्ष के एक लड़के और लड़की की बलि दी गई और उनके शरीर इसमे रक्खे गए। तिब्बतियो ने हमसे कहा कि किसी राक्षस ने रक्त और शवों को सूंघा होगा। उस दुष्ट आत्मा ने वहां अपना प्रभाव जमा लिया और निकटवर्ती स्थानों को मनुष्यो के लिए विपदजनक बना दिया। राक्षस के प्रभाव का प्रतीकार करने के लिए घाटी की दूसरी तरफ दूसरा चैत्य बनाया गया। यहां हमारे पूरे दल ने बुद्ध की प्रार्थना की और उस स्थान के सरक्षक पुजारी के पास भेंट समर्पित की। यद्यपि हमारी खच्चरो की रेल दलाई लामा का आशीर्वाद पाकर हिमालय पार कर रही थी और हम नियमपूर्वक हरेक पर्वत, दर्रे, नदी और चैत्य पर, उन आत्माओ के सम्मान के लिए रुकते थे, जो वहा अनादिकाल से निवास करते बताये जाते थे, तो भी शायद हम उन्हे पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नही कर सके। उन्होंने धृष्टता-पूर्वक प्रवेश करनेवाले अमरीकियो से बदला लिया ही। जब घर लौटते हुए डैडी का कूल्हा आठ जगह से चटखा तो मुझे आश्चर्य हुआ कि शायद पवित्र चोमोल्हारी तथा वर्फ के अन्य दानव ही

निवासी इसकी चिन्ता नही करते थे कि पानी कभी उनकी चमडी का स्पर्श करता है या नही। गन्दगी की पर्ते उनकी उस हवा से रक्षा करती हैं, जो सदैव फारी के मैदान मे विशेष रूप से सर्दियो मे चला करती है।

फारी की सडको पर सर्दियो की गन्दगी और कूडे के अम्बार लगे रहते है और इस कूडे-करकट के बीच से रास्ता पाना असम्भव हो जाता है। यह बिल्कुल उपयुक्त है कि फारी का अनुवाद 'शूकर-पहाडी' किया गया है। यदि फारी ससार का सबसे गन्दा शहर है तो इसे ससार मे सबसे ऊचा डाकखाना, १४,७०० फुट की ऊचाई पर, रखने का भी गर्व है।

फारी मे जिले के तिब्बती गवर्नर, रिमशी डोटे ने, जो लगभग सात फुट लम्बा था (तिब्बत मे हमे मिलनेवाले व्यक्तियो मे सबसे लम्बा) हमारा स्वागत किया। दो सफेद रूमालो के अतिरिक्त, रिमशी डोटे ने हमे एक बडा बोरा जौ और वध की हुई भेड भेट मे दी। फारी के हमारे स्वल्प निवास का विशिष्ट कार्यक्रम गवर्नर और उसकी पत्नी के साथ व्यतीत की गई सध्या थी। उनके आकर्षक पूर्वी आवास मे, जो हमारे डाकबगले के समीप ही था, हम रिमशी-दम्पती के साथ तिब्बती चीते की खाल पर बैठे और सर्वप्रथम याक के मक्खन की चाय पी, जो कोई खास बुरी नही थी।

तिब्बत मे चाय असाधारण रूप से पौष्टिक तथा तिब्बती भोजन का मुख्य आधार मानी जाती है। अधिकतर इसे घर की युवतिया तैयार किया करती है। लकडी के खोखले बेलन के आकार के बर्तन मे, जो लगभग तीन फुट ऊचा तथा तीन इच व्यास के छेद का होता है, डाल-कर चाय को खूब मथा जाता है। इस लोकप्रिय तिब्बती पेय को उबले पानी, सोडा (तिब्बत की झीलो से प्राप्त), चीनी चाय, याक के मक्खन के बडे-बडे गोले, जो कभी-कभी सडा हुआ होता है, मिलाकर तैयार किया जाता है। इस समस्त मिश्रण को लकडी के सिलेंडर मे यहातक मथा जाता है कि इसमे गाढापन आ जाता है और यह भारी सूप या गाढी यखनी के रूप का हो जाता है।

चाय के तुरन्त बाद ही फारी के रिमशी ने हमे स्वादिष्ट दावत के लिए आमन्त्रित किया। हम जानने लगे थे कि यद्यपि साधारण तिब्बती,

जौ के आटे और मक्खनी चाय पर गुजर करता है तथापि सम्भ्रान्त परिवारो के व्यक्ति—सर्वाधिक प्रभावशाली २०० परिवार—चीन का श्रेष्ठ भोजन करते हैं। उस शाम को भोजन के अगणित दौर हुए। हमने हाथी दात की खपाचियो से जैसे भी हो सकता था खाने का प्रयत्न किया तथा अपने अजीव किन्तु सच्चाई-पूर्ण प्रयत्नों द्वारा होनेवाले मनोरजन मे भी भाग लिया। हम रिमशी डोटे से यह जानने को उत्सुक थे कि युद्ध के आरम्भ मे पाच अमरीकी उडाको को, जिन्हे अपने बम-वर्षक से, तिब्बत के दूरस्थ कोने मे उतरने को बाध्य होना पडा था, क्या उसने ही बचाया था ?

अमरीकी हवाई जहाज का तिब्बत मे टूटकर गिरना इण्डियाना, मैसाचुसेटस, ओक्लाहोमा, टैक्सास और राक-विले सैन्टर, लाग आइलैंड निवासी नौजवानो के लिए, जिनमें दो, लैफ्टिनैंट, दो कार्पोरल और एक प्रथम श्रेणी का सैनिक था, एक नया अनुभव था। वे चीन मे रसद पहुचाने के उपरान्त भारत-स्थित अपने अड्डे को रात मे लौट रहे थे। ऊंची हिमालय की चोटिया मटर के सूप के समान गाढे कुहरे मे छिपी थी। एक बार घने बादलो की दरार से उन्होने रोशनी देखी और अनुमान किया कि वे किसी भारतीय शहर के ऊपर है। उन्होने रेडियो-स्तम्भ को सकेत देने के लिए चक्कर लिया, पर कोई उत्तर नही मिला। न मिलना ठीक ही था। वहा हवाई अड्डा था ही नही। उनकी गैस समाप्त हो चुकी थी और क्षण-मात्र शेष था, जब वे पैराशूट से अन्धकार में कूद पडे। पथरीली चट्टानो पर उतरने के कारण वे बुरी तरह टकराये और घायल हुए, यहातक कि एक-आध के हाथ-पैर भी टूटे। उन्होने देखा कि वे एक बडी नदी के किनारे पर है। उन्होने इसे ब्रह्मपुत्र समझा और उनका यह समझना ठीक ही था। केवल इतना ही अन्तर था कि वे समझे थे कि वे आसाम की घाटी मे हैं, पर वास्तव मे थे नही।

विभ्रान्त और व्याकुल पाचो बहादुर उडाके दो दिन तक नदी के किनारे-किनारे लडखडाते चलते रहे, तब वे एक नगर के पास पहुचे। एक उडाका कुछ हिन्दुस्तानी बोल सकता था और एक गामीण भी कुछ बोल सकता था। स्तम्मित उड़ाको को पता चला

कि वे तिब्बत मे ल्हासा के समीप सेताग नगर मे हैं और पवित्र नगर के ऊपर उडनेवाला उनका हवाई जहाज इतिहास मे सर्वप्रथम है। मैत्री और सत्कार-पूर्ण ग्रामीणो ने उन्हे रहने का स्थान दिया, विचित्र भोजन कराया और 'चाग', तिब्बती जौ की शराब, से उनका सम्मान किया। वे उनके विषय मे इस प्रकार चर्चा करते थ जैसे कि वह दूसरे ग्रह से आये हो तथापि उनके अतिथियो ने उनके वाहर निकलने की कोई आशा नही दिलाई, क्योकि दिसम्वर के हिमपात से दर्रे बन्द हो चुके थे और पहाडियो पर लुटेरे खुले रूप से घूमने लगे थे।

किन्तु विना टेलीफोन के भी तिब्बत मे समाचार वडी शीघ्रता से फैलते है। थोडे ही समय मे अग्रेज दूतावास से सिकिमी डाक्टर उन्हे ल्हासा ले जाने के लिए आ गया किन्तु जाने से पूर्व उनके ग्रामीण मित्रो ने उन्हे केवल, फर के कपडे, फर के अस्तर वाले वूट भेट मे दे कर सम्मान सहित विदा किया। ल्हासा के निवासी भी मैत्रीपूर्ण रहे। यद्यपि यह धर्म-विरुद्ध था तथापि उन्होने उनकी पवित्र नगर की उडान पर क्रोध प्रकट नही किया। फसे हुए वैज्ञानिको ने अग्रेजी गवर्मेंट हाउस मे पाच दिन व्यतीत किये, जहापर अग्रेज मेजर शैरिफ और उनकी पत्नी ने उनका शाहीतौर पर मनोरजन किया और घर की जैसी तमाम सुविधाए उपलब्ध कराईं।

उडाको से अच्छा व्यवहार किया गया, क्योकि तिब्वत सरकार जानती थी कि अमरीका का कोई दूरस्थ या शत्रुतापूर्ण अभिप्राय उनके देश के प्रति नही है। साथ-ही-साथ चालको को तिब्वत से वाहर जितनी जल्दी हो सका धकेल भी दिया गया। तिब्वत निवासी वाहरी ससार से कम-से-कम सम्वन्ध रखना चाहते है। यह उनके शासको की इच्छा है कि प्रत्येक वस्तु वैसी ही रहे जैसी कि शताब्दियो पहले थी।

फारी की गन्दगी, पुराने किले (जौग) की मध्य-कालीन शोभा, इसकी मोटी पत्थर की दीवार तथा खिडकियो की तग झिरकियो के कारण कुछ घटी ज्ञात होती है। चारो ओर के मैदान की अपेक्षा ऊची भूमि पर वना हुआ जौग मीलो तक समस्त दृश्य तथा अपने नीचे सिमटे छोटे नगर पर आधिपत्य-सा किये हुए है।

यहा से कुछ दूर पर ही यंगहस्बैन्ड के दल ने १९०४ ई०मे तिब्बती सेना को हराया था। किन्तु उस झगड़े की कहानी, जिससे यह स्थिति उत्पन्न हुई, जानने के लिए भारत के अंग्रेजी राज्य तथा तिब्बत के पिछले कुछ वर्षों के सम्बन्धों पर नजर डालनी पड़ेगी।

सन् १७७४ई०मे अंग्रेजी राज्य के प्रथम गवर्नर जनरल वारेन हैस्टिंग्स ने भारत और तिब्बत के बीच व्यापारिक सपर्क तथा पडोसी के सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया। उसने ईस्ट इडिया कम्पनी के कर्मचारियो मे से एक नौजवान चतुर मिलनसार और व्यवहार-कुशल जार्ज बोगल नाम के व्यक्ति को इस मिशन पर भेजा। भूटान से होकर तिब्बत मे प्रवेश करके बोगल ने चुम्बी घाटी और फारी से होकर ग्यान्त्सी तक वही रास्ता पकड़ा जिससे हम चल रहे थे। उसका उद्देश्य पणछेन लामा से भेंट करना था। यह मालूम होने पर कि वह तिब्बती धर्मगुरु शिगात्से मे स्थित अपने ताशी ल्हुनपो मठ मे भयानक चेचक (महामारी) के कारण तीन वर्षों मे नही गये है, वह सापू को पार करके ल्हासा के समीप एक शहर मे पहुचा, जहां पणछेन लामा अस्थायी रूप से निवास कर रहे थे। महान लामा ने बोगल का अत्यन्त स्निग्ध रीति से स्वागत किया और दो-चार भेंटो के उपरान्त उस नौजवान अंग्रेज से बिना औपचारिक शिष्टाचार के मिलने लगे। वास्तव मे उनमे घनिष्ट मित्रता हो गई।

जब एक मास उपरान्त पणछेन लामा ताशी ल्हुनपो को वापस लौटे तो बोगल से भी वहा चलने का आग्रह किया और उसे जीवित देवता के समीप ही निवास-स्थान दिया गया। वह अनेक महत्वपूर्ण तिब्बतियो से मिला और सबकुछ ठीक चल रहा था, किन्तु ल्हासा मे दलाई लामा बालक थे, और सरक्षक, पिलिंगी (यूरोप निवासी) लोगो का विरोधी था। उसने हठ किया कि पणछेन लामा बोगल को निकालने का कोई उपाय खोजे। भारत मे लौटने पर बोगल पणछेन लामा से मैत्रीपूर्ण पत्र-व्यवहार करता रहा। इससे पूर्व कि बोगल तिब्बत के साथ अधिक सम्पर्क स्थापित कर सके, उसका मित्र पणछेन लामा पीकिंग मे चेचक से मर गया और कुछ समय बाद स्वयं बोगल की कलकत्ता में जीवन-लीला समाप्त हो गई।

उन्नीसवी सदी के प्रारभ मे कई साहसी अंग्रेजो ने स्वेच्छा से तिब्वत की यात्राए की। उनमे थामस मैनिंग नाम का एक अर्धविक्षिप्त व्यक्ति भी था, जिसके दो प्रसिद्ध मेमनो चार्ल्स और मेरी को छोडकर थोडे ही मित्र थे। उसे चीनी भाषा सीखने की तीव्र उत्कण्ठा थी। कैन्टन मे चीनियो मे तीन वर्ष रहने के उपरान्त उसे तिब्वत जाने की सूझी। चीनियो-जैसे वस्त्र पहने अपने चीनी नौकर के साथ वह फारी तक पहुच गया, जहा भेद खुल गया और उसे रोक लिया गया। लेकिन उसका चिकित्सा का प्रारम्भिक ज्ञान सहायक सिद्ध हुआ। फारी मे उसे एक चीनी जनरल मिला, जिसके साथ के कुछ सैनिको का उसने सफलतापूर्वक इलाज किया। जनरल आभार मानकर उसे ग्यान्तसी ले गया और मैनिंग को राजधानी आने देने के लिए ल्हासा को लिखा। आश्चर्य यह हुआ कि उसे स्वीकृति मिल गई। दिसम्वर १८११ ई० को मैनिंग ने ल्हासा मे प्रवेश किया और अधिकारियो ने उसका सत्कार-पूर्वक स्वागत किया। चिकित्सा-सम्वन्धी उसके स्वल्प ज्ञान जिसका वह निरन्तर उपयोग करता था तथा गैरसरकारी स्थिति ने उसे प्रिय अतिथि बना दिया। वह दलाई लामा के सम्मुख तक उपस्थित किया गया, जिसकी अवस्था केवल सात वर्ष की थी।

मैनिंग ल्हासा मे चार महीने ठहरा। उसमे बोगल का जैसा आकर्षक व्यक्तित्व या रिपोर्ट भेजने का विशेष गुण नही था, इस कारण वह इस असाधारण परिस्थिति का पूरा लाभ नही उठा सका। यह दुर्भाग्य ही था, क्योकि वह ल्हासा मे प्रवेश करनेवाला सर्व प्रथम अग्रेज था और १७४५ ई० मे कैपुच्चिन पादरियो के राजधानी से निकाले जाने के वाद राजधानी मे पहुचनेवाला यूरोप-निवासी था। भारत मे लौटने के बाद वह शीघ्र ही इग्लैन्ड वापस चला गया और इस एक महान साहसिक यात्रा के उपरान्त शेष जीवन को शान्तिपूर्वक व्यतीत करने मे सन्तुष्ट रहा।

लगभग उसी समय जब मैनिंग ने ल्हासा की यात्रा की, इडियन सिविल सर्विस के थामस मूरक्रोफ्ट को हिमालय पार करके पश्चिमी तिव्वत मे प्रवेश की, भारत सरकार से दो उद्देश्यो को विचार मे रखकर आज्ञा मिली। पहला, कश्मीरी शाल वनाने की ऊन के नमूने प्राप्त करना

और दूसरा, पवित्र कैलास पर्वत तथा उसकी तलहटी मे स्थित मानसरोवर झील के निकटवर्ती क्षेत्र का सर्वेक्षण। व्यापारी के छद्मवेश धारण करने तथा राजधानी मे प्रवेश का विचार न होने के कारण उसे कठिनता नही हुई। बारह वर्ष बाद फिर व्यापारी के छद्मवेश में ट्रैबेक नामक जर्मन के साथ वह दूसरी अन्वेषण-यात्रा पर गया। १८२५ मे ट्रैबेक ने सूचना दी कि मूरक्रोफ्ट रास्ते मे बुखारा के आसपास मर गया। किन्तु १८४६ मे जब प्रसिद्ध यात्री एवं हक ल्हासा मे था, उसे बताया गया कि १८२६ मे मूरक्रोफ्ट नाम का एक विदेशी मुसलमानो की जैसी पोशाक मे राजधानी मे आया था। हक ने मूरक्रोफ्ट के विषय मे पहले कभी नही सुना था, इसलिए यह कथा सत्य हो सकती है। फ़ारसी-हिन्दी मिश्रित उर्दू बोली को धारा-प्रवाह बोलनेवाले मूरक्रोफ्ट ने कश्मीरी मुस्लिम व्यापारियो तक को, जिनके साथ वह रहता था, धोखे मे डाल दिया था। खरीदारी की भेंटो के झुंड-के-झुंड के निरीक्षण के लिए वह देश मे स्वतन्त्रता-पूर्वक आता-जाता था और रेखा-चित्र तथा भौगोलिक चार्ट बनाता था।

ल्हासा मे बारह वर्ष रहकर मूरक्रोफ्ट लद्दाख और भारत को रवाना हुआ, किन्तु मार्ग मे लुटेरो ने उसे मार दिया। ल्हासा के अधिकारियो ने लुटेरो को पकड लिया और मूरक्रोफ्ट के सामान को खोजने पर उसकी योजनाए तथा नक्शे प्राप्त किये।

इन प्रमाणों से तिब्बती इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उन्होंने पवित्र नगर के मध्य मे एक खतरनाक विदेशी को स्थान दे रखा था। आधुनिक विज्ञान से अपरिचित होने के कारण तिब्बत-निवासी, विदेशियों की उनके देश के अन्वेषण और नाप की उत्सुकता को, भविष्य मे विजय की बुरी भावना के अतिरिक्त और किसी रूप मे नही समझ सकते थे। इसलिए वे तिब्बत मे यात्रा का प्रयत्न करनेवाले सभी यूरोपवासियो की ओर अविश्वासी और सन्देह-पूर्ण हो गये।

यद्यपि भारत-स्थित अंग्रेजो ने विजय की अभिलाषाओ को पूर्णतया अस्वीकार किया था तथापि उन्हें हिमालय की दीवार के उत्तर मे स्थित, वर्जित देश के नक्शे मे अनेक रिक्त स्थानो को ठीक-ठीक भरने की

उत्सुकता-पूर्ण वैज्ञानिक और भौगोलिक रुचि थी। तिव्वत मे गुप्त सर्वे मानचित्र वनाने के लिए यह निश्चय किया गया कि ऊपर हिमालय के वुद्धिमान निवासियो को, जो हिन्दुस्तानी और तिव्वती दोनो वोली जानते हो, प्रशिक्षित करके सेवा मे रक्खा जाय। कर्नल टी० जी० मौन्टगुमरी के निपुण निर्देशन मे और उसकी मृत्यु के उपरान्त कप्तान (बाद मे जनरल) हैनरी ट्राटर के अधीन प्रावैधिक अन्वेषण-कार्य मे, जैसे परकार द्वारा स्थिति का ग्रहण, अक्षरेखा का अवलोकन, ऊचाई पर क्वथनाक का अकन तथा विशिष्ट नक्षत्रो की पहचान, करने के लिए अनेक व्यक्ति देहरादून मे प्रशिक्षित किये गए।

देशी अन्वेषक, धर्मात्मा तीर्थ-यात्रियो के वेश मे यात्रा करते थे। भूमापक, साधारण तौर से प्रयुक्त प्रार्थना-चक्र को हाथ मे लिये, जो रम्य (सिलेंडर) आकृति का धुरे के चारो ओर घूमनेवाला खोखला तावे का वक्स होता है, प्रार्थना की पुस्तक के स्थान मे कोरे कागज की लम्बी पट्टिया रखता था, जिसपर वह अपनी दिक्स्थिति तथा निरीक्षण नोट करता था। वौद्ध विधि के अनुसार नियत १०८ दानो की माला के स्थान पर वह १०० दानो की माला रखता था और हर दसवा दाना कुछ वडा होता था, जिससे दूरी को एक सौ या एक हजार पगो मे सुविधा-पूर्वक गिना जा सके। अक्षरेखा प्रार्थना मे चक्र मे निहित षष्ठक[1] नापी जाती थी और अन्य तिव्वतियो के जैसे लकडी के प्याले मे पारे को रखकर कृत्रिम क्षितिज वनाया जाता था। अन्य आवश्यक यन्त्र एक मजवूत वक्स के गुप्त खाने मे छिपाकर ले जाये जाते थे।

इस प्रकार परिपूर्ण और प्रशिक्षित ये विलक्षण व्यक्ति साहस, दृढ-निश्चय और अनेक विपत्तियो के सम्मुख अपूर्व धैर्य के साथ अपने विविध मिशनो पर चल दिये। उनमे एक ने अनेक पर्वतो को पार करने मे २५०० मील तक जितने भी पग उठाये, सव गिने और एक दूसरे ने २०८० मील तक। इसी प्रकार काम आगे वढता रहा। वे समस्त वस्तुओ को, जिनके समीप से गुजरते थे, जैसे मठ, किले, यहातक कि

---

१. वृत्त का छठा भाग नापने का यन्त्र।

पर्वत-शिखर, सांकेतिक परकार से नापते थे ।

यह हिमालय के पहाड़ी, गुरखे, तिब्बती, सिकिमी और भूटानी लामाओ का तथा भारतीय सेना से लिये गए भूमाप विशेषज्ञ और भूम्याकार मापको का बहुत ही छोटा समुदाय था । उन सबके कारनामो का वर्णन करने पर एक पूरी पुस्तक ही बन जायगी । एक घटना उन देशी अन्वेषको की अदम्य दृढता का उदाहरण देने के लिए पर्याप्त होगी । भारतीय सीमान्त के प्रसिद्ध भौगोलिक कप्तान हारमन ने भारतीय सेना के भूमापन विभाग मे प्रशिक्षित किन्थुप (या के० पी०) नाम के एक सिक्किमी को एक चीनी लामा के साथ तिब्बत की यात्रा करने और ल्हासा से सापू नदी के बृहत मोड तक जाने के लिए चुना । यह निश्चय-पूर्वक पता चलाने के लिए कि सापू भारत की ब्रह्मपुत्र मे गिरती है या नही, उसे नदी मे इस स्थान पर विशेष चिह्नो से युक्त हलकी लकडी के लठ्ठे गिराने थे । आसाम मे उन लठ्ठो पर निगाह रखने के लिए पहरेदार नियत थे ।

चीनी लामा ने अवसर पाते ही के० पी० को विश्वासघात करके एक धनी तिब्बती के हाथ बेच दिया । दो वर्ष की गुलामी के बाद अन्त मे के० पी० सापू की ओर निकल ही गया । वहा उसने ५०० लठ्ठे तैयार किये और उन्हे नदी मे आसाम की सीमा से लगभग ३५ मील दूरी पर गिराया । उनमे से दो लठ्ठे, जो सरलता से पहचाने जा सकते थे, आसाम मे ब्रह्मपुत्र-लोहित के तट पर फेंके हुए कई वर्ष बाद पाये गए । इनसे लगभग निश्चय हो गया कि सापू आसाम मे बहकर आती है और महान ब्रह्मपुत्र का एक भाग है । यह तथ्य बाद मे असदिग्ध रूप से स्थापित हो गया । इन अन्वेषणो के फल-स्वरूप तैयार किये गए ये सूक्ष्मता मानचित्र अनिश्चित काल तक गुप्त नही रखे जा सकते थे और इन्होने भारतस्थित अग्रेजो को, सशयालु और सवेदनशील तिब्बती अधिकारियो का प्रिय नहीं बनाया । भारत और तिब्बत के व्यापारिक आदान-प्रदान तथा सीधे सम्पर्को मे भी एक शताब्दी पूर्व वारन हेस्टिग्ज द्वारा किये गए असफल प्रयत्नो से आगे कोई प्रगति नही हुई थी । किन्तु जब तिब्बतियो ने सिकिम पर आक्रमण किया और इसकी सरहद के

अठारह मील अन्दर एक किले और एक पहाडी पर अधिकार कर लिया तव ब्रिटिश राज ने निश्चित कार्रवाही करने का निश्चय किया। इसकी पृष्ठभूमि पर यह तथ्य हमेशा झाकता रहता था कि तिब्बती और भारतीत सीमाए काश्मीर से वर्मा तक, लगभग दो हजार मील तक, एक-दूसरे को छूती थी। यदि कोई शक्तिशाली और विरोधी देश तिब्बत पर अधिकार करले तो क्या होगा ?

अग्रेजो ने तिब्बती आक्रमणकारियो को फौरन हट जाने को कहा। जव न तो चीनी और न तिब्बती सरकार ने इसपर ध्यान दिया तो उन्हे निकालने के लिए सेनाए भेजी गईं। माग यह थी कि सिकिम पर अग्रेजो का सरक्षकत्व स्वीकार किया जाय, तिब्बत और सिकिम सीमा का निर्धारण हो जाय तथा भारत-तिब्बत व्यापार को प्रोत्साहन दिया जाय। १८९० ई० मे चीन से सन्धि हुई, जिसमे सिकिम भारत सरक्षित राज्य माना गया और तिस्ता नदी का जल विभाजक सिकिम और तिब्बत की सरहद माना गया। फिर व्यापारिक सन्धि हुई, जिसके अनुसार यातुग मे भारत के लिए व्यापार-हाट स्थापित हुआ। तिब्बतियो ने इस आधार पर कि उन्होने सन्धियो पर हस्ताक्षर नही किये है, इन सन्धियो को मानने से इन्कार कर दिया। यातुग मे, जोकि व्यापार के लिए सन्तोष-प्रद स्थान भी नही था, तिब्बतियो ने तग घाटी के आरपार तिब्बती और भारतीय व्यापारियो को मिलने से रोकने के लिए एक दीवार खीच दी। सिकिम-तिब्बत की सीमा पर बनाये गए खम्भे तोड डाले गये। तत्कालीन वाइसराय लार्ड कर्जन ने तिब्बत से सीधा सम्पर्क स्थापित करने का प्रयत्न किया। उसके दलाई लामा को भेजे गये पत्र विना खोले ही वापस कर दिये गए।

परिस्थिति सकटापन्न हो गई, जव अग्रेजो को पता चला कि दलाई लामा ने एक विशिष्ट राजदूत रूस भेजा है। इस राजदूत और उसके तिब्बती परिजन का जार और उसके मन्त्रियो ने आदर सहित स्वागत किया। यह इस प्रकार हुआ। दोर्जीफ नाम का मगोल एक वडा लामा था। वह वचपन मे तेरहवें दलाई लामा का शिक्षक था और उसपर बहुत प्रभाव रखता था। रूसी साइवेरिया मे जन्म लेने के कारण दोर्जीफ

ज़ार की प्रजा भी था। वह तिब्बती मठों के लिए चन्दा मागने कई वार रूस गया था। उसने दलाई लामा पर इस प्रकार का असर डाला कि उत्तरी शक्ति से मैत्री रखना लाभप्रद ही नही है, वल्कि जार की प्रजा अधिकाधिक सख्या मे वौद्ध भी होती जा रही है, यहातक कि ज़ार स्वयं वौद्ध धर्म मे दिलचस्पी रखता है और धर्म-परिवर्तन करने को तैयार है। विशिष्ट राजदूत दोर्जीफ दलाई लामा के लिए अनेक भेटे लेकर लौटा, जिनमे रूसी युद्ध-सामग्री और सुन्दर कढाई वाला रूसी चर्च का परिधान भी था। अंग्रेजो की व्याकुलता को वढाने के लिए तीव्र अफवाहे फैलाई गई कि रूस और तिव्वत ने एक गुप्त सन्धि की है। रूस ने दृढता-पूर्वक तथा सरकारी तौर पर भी ऐसे किसी भी समझौते से या तिव्वत पर कोई भी सोद्देश्य दिलचस्पी से इन्कार किया।

फिर भी अंग्रेजो ने निश्चय किया कि अव कार्रवाई का समय आ गया। लार्ड कर्जन ने कर्नल फ्रांसिस यगहस्वैड (वाद मे सर फ्रांसिस को) दो सौ आदमियो के सैनिक आरक्षी दल के साथ अंग्रेजी-भारत और तिव्वत के सवधो की समस्या पर विचार करने के लिए, चीनी अम्वन और तिव्वती कर्मचारियो से मिलने सिकिम से कुछ दूर तिव्वती सीमात के पार कम्पाजोग नाम की छोटी वस्ती तक भेजा। यगहस्वैड अपने विशेषज्ञ और सैनिक आरक्षी दल के साथ कम्पाजोग मे जुलाई से नवम्बर १६०० ई० तक विना सपर्क प्राप्त किये प्रतीक्षा करता रहा। तिव्वतियो ने केवल इतना ही कहा कि सिकिम वापस जाओ। उन्होने वार्तालाप करने से मना कर दिया। तव ब्रिटिश गृह सरकार ने आगे वढने की स्वीकृति दे दी। ब्रिगेडियर जनरल मैकडानल्ड की कमान मे लगभग २५०० अंग्रेज और भारतीय सैनिको ने चुम्वी घाटी पर अधिकार कर लिया और इन्ही कुछ सैनिक दलो के संरक्षकत्व मे यगहस्वैड-मिशन ग्यान्त्सी को चल दिया। मैकडानल्ड से अधिक सैनिक सहायता पाकर वे यातुग और फारी को भी विना किसी झझट के पार कर गये। उन्होने ताग ला को कठोर और काटनेवाली जनवरी की सर्दी मे पार किया और समुद्र की सतह से १५००० फुट ऊपर तुना के छोटे गांव के पास दर्रे की दूसरी ओर अपने खेमे गाड दिये।

दो महीने तक यगहस्वैंड ने फिर वार्तालाप करने का प्रयत्न किया, किन्तु तिब्बतियो ने एक इच भी खिसकने से इन्कार कर दिया और भिक्षु उनके साथ शत्रुतापूर्ण व्यवहार करने लगे तथा धमकिया देने लगे। मार्च के अन्त के लगभग मैंकडानल्ड, सेना की लगभग सात कपनिया, दो १० पौंड की और एक ७ पौंड की तोप लेकर आगे बढा, यग-हस्वैंड ने तिब्बतियो को घोषित कर दिया कि वह ग्यान्त्सी मे ३१ मार्च को पहुचेगा और अपने रास्ते मे बाधा डालनेवालो को सख्त चेतावनी दे दी। जब दल ने मैंदान को पार करना शुरू किया तो उन्होने गुरु के समीप पहाडी पर बनाये गए अवरोधो के पीछे तिब्बतियो को देखा। यगहस्वैंड ने वार्तालाप के लिए एक बार फिर असफल प्रयत्न किया। उसने कह दिया कि यदि १५ मिनट के अन्दर वे रास्ते को रोकनेवाली स्थितियो से नही हटे तो उन्हे बलपूर्वक हटा दिया जायगा।

जनरल मैंकडानल्ड के साथ केवल १०० अग्रेज और १२०० हिन्दुस्तानी थे, लेकिन उन्होने पहाडी पर आगे बढते हुए कई हजार तिब्बती सेना के मोर्चो पर गोली न चलाने के आदेश का पालन किया। प्रत्यक्ष रूप से तिब्बती भी गोली चलाना नही चाहते थे। अग्रेज-हिन्दुस्तानी सेनाए धीरे-धीरे पार्श्व से होकर आगे बढी और वे वास्तव मे तिब्बती सैंनिको को शान्ति-पूर्वक पीछे हट जाने के लिए फुसलाना चाहते थे। अकस्मात एक तिब्बती जनरल ने, जो हिन्दुस्तानी सिपाहियो के बीच मे था, रिवाल्वर निकाला और एक सिपाही को गोली मार दी। यह युद्ध का सकेत था। तिब्बती जनरल तुरन्त मार डाला गया। बाद मे यह कहा गया कि जनरल को एक कट्टर पन्थी लामा ने ल्हासा प्रेरित किया था। मैंकडानल्ड की सेनाओ की स्थिति अच्छी थी और उनकी बन्दूकें भी श्रेष्ठ थी, किन्तु तिब्बती अपनी पुरानी बन्दूको और छुरो से बहादुरी से लडे। सघर्ष के बाद मैंकडानल्ड के चिकित्सक कर्मचारियो ने घायल तिब्बतियो की भी देखभाल की, किन्तु अनेक व्यक्ति मारे गये। जैंसा यगहस्वैंड ने कहा, "यह भयकर और विकराल दृश्य था।"

यगहस्वैंड का दल ग्यान्त्सी पर बढ चला। उसने फिर एक बार तिब्बतियो से बात चलाने का प्रयत्न किया, किन्तु फिर भी किसी भी हल

पर पहुंचने के सभी प्रयत्न व्यर्थ ही रहे। ग्यान्त्सी में अधिक लडाई हुई और मैकडानल्ड ने अधिक शक्तिशाली कुमुक को लेकर महान जोग दुर्ग पर धावा कर दिया। यह कष्टसाध्य किन्तु सफल प्रयास रहा। अब यगहस्बैंड को कम्पाजोग आये हुए एक वर्ष हो गया था। अधिक प्रतीक्षा नही की जा सकती थी। यगहस्बैंड का दल सेना की सहायता से ल्हासा की ओर बढ चला और वहा ३ अगस्त १९०४ ई० को पहुच गया। दलाई लामा उर्गा को, जोकि तीसरे जीवित देवता का निवास-स्थान है, भाग गया और अत्यन्त सम्मानित वृद्ध लामा ताई रिम्पोशे को, जो तिब्बत का धर्मशास्त्र और आत्मतत्वज्ञान का महान आचार्य था, सरक्षक बनाकर अपने पद की मोहर सौप गया। चीनी रेजीडेन्ट, नेपाली प्रितिनिधि और तोगसा पैनलोप, बाद मे महाराजा भूटान, की सहायता से तिब्बत और ग्रेट ब्रिटेन के बीच ७ सितम्बर १९०४ को एक सन्धि हुई। यगहस्बैंड ने तिब्बत में अग्रेजो के मान को दृष्टि मे रखते हुए यह हठ किया कि सन्धि पर पोटाला मे हस्ताक्षर किये जाय। महान दरबार हाल मे तिब्बती, चीनी, भूटानी, अग्रेज और हिन्दुस्तानी अफसर पक्ति-बद्ध खड़े हुए। सरक्षक, चीनी रेजीडैन्ट और यगहस्बैंड पूर्वोक्त अधिकारी की मेज पर, जिसके ऊपर भारत के वाइसराय का झडा फहरा रहा था, बैठे। सन्धि-पत्र की पांच प्रतिया चादी के थाल मे लाई गईं। इस प्रकार सन्धि पर हस्ताक्षर और मोहर लगाने का प्रभावशाली और रग-बिरगा उत्सव हुआ।

सन्धि पर हस्ताक्षर करते हुए तिब्बत ने चीन के साथ की गई पिछली सन्धि मे उल्लिखित सिकिम और तिब्बत की सीमा स्वीकार की, पश्चिमी तिब्बत मे यातुंग, ग्यान्त्सी और गंगटोक मे व्यापार-केन्द्र खोलने स्वीकार किये, जिनमे अग्रेजी और तिब्बती प्रजा को आने-जाने की सुविधा होगी, ल्हासा को सशस्त्र सेनाए भेजने मे किया गया व्यय और ब्रिटिश मिशन की आक्रमणो से सुरक्षा की क्षतिपूर्ति देना स्वीकार किया और चुम्बी घाटी पर भुगतान की जमानत के रूप मे अग्रेजो का अधिकार स्वीकार किया।

विशेष महत्वपूर्ण विधान यह था कि बिना अग्रेज सरकार की

स्वीकृति के तिब्बत का कोई भी भाग किसी विदेशी शक्ति को हस्तान्तरित नही किया जायगा और न अन्य प्रकार से अधिकार के लिए दिया जायगा, किसी भी विदेशी शक्ति को तिब्बत के मामलो मे हस्तक्षेप की अनुमति नही दी जायगी और न किसी विदेशी शक्ति का प्रतिनिधि तिब्बत मे अगीकृत होगा। क्षतिपूर्ति की शर्तों को तिब्बत पर बहुत कठोर समझकर अग्रेजो ने उन्हें पर्याप्त शिथिल कर दिया और वे चुम्बी घाटी मे केवल तीन वर्ष ही रहे। वे ल्हासा मे भी नही ठहरे। यगहस्बैड को वाइसराय ने बधाई दी, सम्राट ने सर की उपाधि दी और लोकसभा ने उसपर 'हत्याकाड' का लाछन लगाया। कुछ वर्षो मे उसने पूर्व पर अनेक पुस्तकें लिखी और १६४२ ई० मे ७६ वर्ष की आयु मे उसका देहान्त हुआ।

चीन-सरकार सन्धि से परेशान हुई और तिब्बत मे अपनी क्षीण शक्ति को पुन स्थापित करने को चिन्तित हुई। १६०६ ई० मे उन्होने पीकिंग मे ग्रेट ब्रिटेन के साथ हुई नई सन्धि का प्रबन्ध किया, जिसके अनुसार तिब्वत की अखण्डता चीन पर निर्भर रही और चीन के अतिरिक्त किसी भी शक्ति को तिब्वत मे सुविधाए पाने का अधिकार नही रहा। इसने एक प्रकार से तिब्वत को चीन के अधिकार मे दे दिया और चीन ने इस अवसर से लाभ उठाने मे कोई देर नही की। अग्रेजो की शक्ति कम हो गई और १६०४ ई० मे तिब्वत मे हस्ताक्षरित सन्धि का कुछ महत्व नही रहा। पीकिंग मे नीचा दिखानेवाले अनुभवो के उपरान्त दलाई लामा १६०६ ई० मे ल्हासा लौट आये। चीनियो ने अधिकाश पूर्वी तिब्वत पर अधिकार कर लिया, अनेक मठो को भ्रष्ट किया और तिब्बतियो की हत्या की। १२ फरवरी १६१० को चीनी सेनाए लोगो पर गोलावारी करती ल्हासा मे पहुच गई। अगली रात्रि को अपने मन्त्रियो और मुट्ठी भर सैनिको को साथ लेकर दलाई लामा रात-दिन यात्रा करके सिकिम सीमा को पार करके दार्जिलिग पहुच गये।

भारत मे अपने निवास की अवधि मे दलाई लामा के साथ उनके पद-मर्यादा के अनुकूल, विनय और सम्मान का व्यवहार किया गया।

दो वर्ष की निष्कासन की अवधि में भारत मे किये गए अतिथि-सत्कार को वह कभी नही भूले। इस अवधि में उन्हे अग्रेजो के विषय मे यग-हस्बैंड के दल के समय, जिससे कि वह बचकर भागे थे, वनाई हुई धारणा को वदल देना पड़ा। वास्तव मे उन्होने ब्रिटिश सरकार से चीनी आक्रमण के विरुद्ध सहायता की प्रार्थना की और वह ब्रिटिश संरक्षकता मे रहना पसन्द करते, किन्तु वह ब्रिटिश नीति के अनुकूल न था।

तिब्वत निवासियो ने अत्यन्त उत्तेजित होकर वढी सख्या मे चीनियो के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और उन्हे मध्य तिब्वत से निकालने मे सफल हो गए। दलाई लामा जून १९१२ मे तिब्वत लौटे। उस समय तक चीनी अपनी आतरिक समस्याओ मे फस गये थे और बाद मे जापान के साथ पूर्ण रूप से युद्ध मे सलग्न हो गये। उनके पास तिब्वत पर चीन की प्रभुता को वनाये रखने के लिए, जिसका तिब्वती विरोध कर रहे थे, अतिरिक्त शक्ति नही थी। तथापि उन्होने चीन के पश्चिमी सीमान्त के समीपस्थ तिब्वत के पूर्वी भागो पर, जो एतिहासिक भौगोलिक और जातीय दृष्टिकोणो से तिब्वत का अभिन्न भाग हैं, कभी अपना अधिकार नही छूटने दिया।

जहातक अग्रेजो का सबध है, उनकी स्थिति तेरहवें दलाई लामा के अपनी राजधानी मे लौट आने से अधिक मजबूत हो गई, किन्तु उन्होने तिब्वत के आन्तरिक मामलो मे कभी हस्तक्षेप नही किया। उन्होने व्यापार के स्थानो पर अपने अत्यन्त व्यवहार कुशल एव मैत्रीपूर्ण अधिकारी भेजे, जिनमे से अनेक, तिब्वती जीवन और रिवाजो से खूब परिचित थे तथा तिब्वतियो के लिए वास्तविक स्नेह रखनेवाले थे। और ब्रिटेन की, अन्य शक्तियो के लिए 'दूर रहो' की नीति तिब्वत के लिए अत्यन्त रुचिपूर्ण थी।

१९४७ ई० मे भारत की स्वतन्त्रता के उपरान्त भारत की राजनैतिक एवं प्रशासकीय सेवाओ मे अग्रेजो का स्थान भारतीयो ने ले लिया है। मिशन का अत्यन्त योग्य और लोकप्रिय अधिकारी ह्यू रिचर्डसन ल्हासा मे भारतीय वैदेशिक सेना का अन्तिम अंग्रेज था। यह लम्वा, गहरे भूरे वालोवाला, स्काटलैंड निवासी हमारे लिए अत्यन्त सहायक

सिद्ध हुआ । उसने हमारी तिब्बत सम्बन्धी अनेक उलझनो को सुलझाया । उसका तिब्बत से प्रथम सम्पर्क १२ वर्ष पूर्व हुआ, जबकि वह गगटोक मे ब्रिटिश राजनैतिक अधिकारी नियुक्त हुआ । दलाई लामा की सरकार के साथ अपने दीर्घकालीन और घनिष्ठ सबधो के कारण रिचर्डसन आधुनिक तिब्बत के विषय मे सभवतः किसी भी विदेशी से अधिक जानदार है । अपने निवास के मुख्य स्थान सिकिम के गगटोक नगर मे उसने पिछले दशक का जितना समय व्यतीत किया है, उतना ही ल्हासा मे भी व्यतीत किया है ।

किन्तु रिचर्डसन स्थायी रूप से हिमालय के पीछे ही रहना नही चाहता था । अगस्त १९५० मे उसने अपना राजनैतिक अधिकारी और व्यापारिक अभिकर्ता का पद दिल्ली मे विदेश मन्त्रालय के डा० एस० सिन्हा के लिए छोड दिया ।

रिचर्डसन कहता है, "मेरा अधिकतर सेवाकाल तिब्बत मे व्यतीत हुआ है और मुझे ल्हासा छोडने मे दुख होगा । इस देश का आकर्षण अत्यन्त वशीभूत करनेवाला है और तिब्बती धर्म, इतिहास, रीति-रिवाज और वन्य जीवन मे अभिरुचियो का कोष भरा है ।

जब ह्यू रिचर्डसन ने मेरी इस पुस्तक को लिखने के इरादे को सुना तो उसने आशा प्रकट की कि "यह इस विश्वास को अनेक मस्तिष्को मे दृढ करने मे सहायक होगी कि तिब्बत को अपने ढग का जीवन बनाये रखने का अधिकार ही नही है, बल्कि शान्ति और आध्यात्मिक उत्तराधिकार तिब्बत की ऐसी विशेषताए है, जो इस ससार की विरोधी वृत्तियो के सम्मुख रखने की वस्तु है ।

भारत की नवीनतम नीति, जैसी हाल की सूचनाओ से ज्ञात हुआ है, तिब्बत के मामलो मे या तिब्बत और चीन के पारस्परिक सबधो मे हस्तक्षेप करने की नही है ।

८ | ल्हासा से आधे रास्ते पर

यगहस्वैंड की तरह किन्तु पूर्णतया दूसरे उद्देश्य से हम फारी से ग्यान्त्सी, जो लगभग १०० मील दूर है, चल पड़े। थकावट से भरे कई दिनो तक हमारा कारवा हिमालय के एक प्रमुख भाग के समानान्तर चलता रहा। बादलो के मध्य से हमे कभी-कभी पवित्र चोमोल्हारी—'पर्वतो की देवी' के दर्शन हो जाते थे, जोकि गौरव के साथ २४,००० फुट ऊचा खडा था। इसकी पथरीली छतो पर नया बर्फ गिरा था और कई बड़े ग्लेशियर टूटते हुए इसकी चोटी से नीचे गिर रहे थे। अन्य अनेक शिखर (सब २० हजार फुट से ऊपर) छिपे हुए थे, केवल निचले भागो से अगणित हिमजिव्हाए जैसी निकली दीखती थी।

तिब्बत का पठार, जिसे हम पार कर रहे थे, हर दिशा मे चलती तेज हवाओ के लिए प्रसिद्ध है। ग्रीष्म मे, जबकि हम यात्रा कर रहे थे, वे हवाए अपरान्ह तक आधी की जैसी तेजी तक पहुंच जाती थी। शीत-काल मे हिमालय-शिखरो से होकर चलनेवाली हवाए १४ हजार फुट ऊचे मैदान पर इतनी तेज हो जाती है कि मनुष्य काले पड जाते है और वे नितान्त आवश्यक कार्य होने पर ही बाहर निकलते है। यह विशाल सुनसान घाटियो का प्रदेश है और व्योमिंग, उटाह और निवेदा के मैदानो के (अमरीका मे) समान लगते है, यदि आप इन प्रदेशो को इनकी असली ऊचाई से तिगुनी-चौगुनी और पचगुनी उठी हुई अनुमान कर सके। जिन झीलो के पास से हम गुजरे वे अत्यन्त शान्त और कृत्रिम-जैसी लगती थी।

कभी-कभी हमे किसान अपने पथरीले खेत आदिकालीन, लोहे की नोकवाले लकडी के हल से, सर्वत्र सुलभ याक द्वारा, जोतते हुए दीख जाते थे। एक खेत को एक साथ जोतती हुई छ जोडियो का फोटो-खीचने के लिए हम रुके। जब हमारे दुभाषिये ने किसान से पूछा कि

वह खेत के एक कोने से दूसरे कोने की ओर टेढा-मेढा क्यो जोत रहा है, तो उत्तर मिला कि प्रत्येक खेत मे विद्यमान भूतो को फसाने के लिए। अन्त मे उन्हे एक कोने मे धकेलकर खेत के वाहर कर दिया जायगा और इस तरह अच्छी फसल उगेगी।

चोमोल्हारी के ठीक नीचे हमने १५ हजार फुट ऊचे ताग ला को पार किया, जो ल्हासा की सडक पर दूसरे नम्वर का सवसे ऊचा दर्रा है। यगहस्वैंड का दल भी इसी दर्रे के ऊपर से आया था। गाव, सुन्दर और एक-जैसे दीख पडते थे। सभी की इमारतें सुपरिचित पत्थर और मिट्टी की ईंटो की मोटी दीवारोवाली थी, जिनपर तेज हवा से प्रार्थना के झडे फरफरा रहे थे। फारी की छतो से ग्यान्त्सी तक डवल कूच के वे दिन वडे सख्त वीते—एक वार मे २५ से तीस मील तक, कभी खच्चरो पर कभी छोटे टट्टुओ पर, हमारे वैठने के स्थानो पर काठी के घाव हो चले थे।

प्रथम दिवस के अन्त मे हम तुना के वात-प्रकपित नगर मे पहुचे, जहा यगहस्वैंड का दो महीने डेरा रहा। अगले दिन हमने अपने को काला मे पाया, जो इसी नाम की झील पर वसा है, तीसरे दिन खान्गमा पर और चौथे दिन सोगाग पर।

प्रात काल हमने सोगाग के छोटे गाव और वीरा-वृक्षो द्वारा सुन्दरता से आच्छादित डाक वगले को छोडा और न्याग-चू की कटानो से होकर चले, जो सापू[१] की दूसरी सहायक नदी है। चौडी, उपजाऊ घाटी से वाहर आकर हमने एक सुदूर दुर्ग देखा, जो मैदान से ऊपर चट्टान पर स्थित एकाकी और निषेध करता-सा लगता था। हम जान गये कि प्रसिद्ध ग्यान्त्सी जौंग था और नीचे सिमटा हुआ ग्यान्त्सी, तिब्बत का तीसरे नम्वर का शहर था, यद्यपि यह दृष्टि से अभी काफी दूर ही था। दुर्ग के समीप पहुचने से आधा मील पूर्व हमने एक नदी को पुल से पार किया, जो वायु से उडते प्रार्थना झडो से भरा था।

भारत, नेपाल, भूटान और लद्दाख से आने-जानेवाले कारवाओ

---

१. [illegible]

के लिए तथा तिब्बत की भीतरी यात्रा के लिए भी ग्यान्त्सी केन्द्र-विन्दु है तथा व्यापार की चहल-पहलवाली मण्डी भी है। सफेद चपटी छतो वाले मकान पहाड की ऊर्ध्व भूमि पर फैले है और चारों ओर से झुके-झुके अर्ध-चन्द्राकार दीखते हैं। ग्यान्त्सी पूरी तौर से जौग और इसके नीचे स्थित विशाल मठ से, जो वाजार के समीप है, दवा हुआ लगता है। ग्यान्त्सी का वाजार रग-विरगा तथा मनुष्यो के लिए आकर्षक और चहल-पहल से पूर्ण है। सामान जमीन पर या भद्दी मेजो पर फैला रहता है और सौदागर अधिकतर वडे-वडे छाते या चदोवो के नीचे वैठते हैं, जहा वे जितना वेचने मे उतना ही गप लड़ाने मे आनन्द लेते हैं। यहा पर चीनी, चाय के ढेर, तिव्वती नमक और सोडा, मेवे, जवाह-रात, रग, हाथ के वुने तिव्वती कम्वल और भूटान से लाई गई सफेद वर्फ की लकडी के वने प्याले विकते हैं।

ग्यान्त्सी मे कोई कही भी चला जाय, जौंग सर्वत्र दृश्य पर शासन करता-सा दीखता है। अपनी भारी दीवारो और प्रभावशाली स्थिति के कारण उस जमाने मे जव चीनी और तिव्वती मध्यकालीन अस्त्र-शस्त्रो से लडते थे, यह निश्चय ही अजेय रहा होगा। यगहस्वैंड के सैनिक दल को भी अपनी १० पौंड की तोप के द्वारा दीवार मे प्रवेश-मार्ग वनाने मे तथा ढालू चट्टानों पर धावा करने मे वडी कठिनता हुई। दुर्ग के सकरे मोखो से नीचे देखकर कोई भी भली भाति समझ सकता है कि तिव्वती अपने को अभेद्य स्थिति मे समझते हुए कितने निश्चिन्त रहे होगे और वे नीचे की ओर स्थित छोटी अग्रेज सेना को कितनी सरलता से पराजेय समझते रहे होगे। यह पचास वर्ष पूर्व की वात है। आज अणुवम, हवाई जहाज, टैंक और राकेट के युग मे ज़ोग केवल सग्रहालय के एक श्रेष्ठ नमूने की भांति रह गया है।

डाकवंगले मे हमारा सामान उतरने के तुरन्त वाद ही एक दूत यह सन्देश लेकर आया कि ग्यान्त्सी के एक सर्वोच्च अधिकारी, जो भिक्षु होते हुए भी साधारण जन के पद पर कार्य करते हैं, हमसे मिलने आने-वाले हैं। भिक्षु के लिए यह असाधारण वात नही है, क्योकि अनेक भिक्षु धार्मिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में सम्मिलित रूप मे पद-ग्रहण किये

रहते है ।

एक घटे बाद खेनचग लामा आया । यह लामा एक प्रभावपूर्ण और विलक्षण व्यक्ति था । सुनहरा रेशमी चोगा, जिसपर अजदहे कढे हुए थे, पहने और दो छज्जोवाला सुनहरा टोप, जो लैम्पशेड की तरह दीखता था, लगाये और अनेको नीलमणि और सोने के गहने पहने, मैं अनुमान करता हू, वह वैसा ही दीखता था, जैसाकि चगेजखा या कुवलईखा दीखते रहे होगे । उसका कनिष्ठिका का नाखून एक इच लम्बा था और प्राचीन काल के उच्चवर्गीय चीनियो के समान उसके लम्बी चोटी भी थी । लामा ने हमे सदैव की तरह रूमालो की भेंट दी और उसके नौकरो ने हमारे पशुओ के लिए एक बोरा अन्न और एक सौ ताजे और पुराने अडो से लबालब भरी ट्रे भेंट की ।

साधारण शिष्टाचार के व्यवहार के पश्चात हम तिब्बती आदर्शो पर वार्तालाप करने लगे, जिनका दुभाषिये के माध्यम से सरलता-पूर्वक स्पष्ट कर सकना बडा कठिन था, क्योकि वह मूर्त की अपेक्षा अमूर्त की ओर ही अधिक झुकता था । लामा अत्यन्त धार्मिक तथा अपने तिब्बती बौद्ध क्षेत्र मे पूर्ण ज्ञानवाला तथा सुसस्कृत मालूम होता था । वह श्रेष्ठ वक्ता भी जान पडता था, जैसाकि उसके तिब्बती भाषा के सरल प्रवाह से अनुमान होता था । यह भाषा मेरे लिए अबोध्य थी, जबतक कि उसका कुछ छोटे वाक्यो मे अनुवाद न हो जाय और यह हमे असन्तुष्ट ही छोड देता था, क्योकि वह केवल उसकी बात का भावमात्र ही बता पाता था । वह मुझे बताना चाहता था कि तिब्बती नेता अपना लगभग सम्पूर्ण समय आध्यात्मिक मनन और ध्यान मे ही लगाते है ।

"किन्तु अन्य साधारण ५० लाख तिब्बतियो के विषय मे आप क्या कहते हैं ?"

उसने कुछ क्षण तक विचार किया और दृढता-पूर्वक स्पष्ट किया, "सभी तिब्बती बुद्ध के विचारो, निर्वाण और उनके अगले अवतार पर एकाग्रचित्त रहते हैं । इसलिए पश्चिम के विचार, विज्ञान या आविष्कारो का कोई भी आयात छिछला और तुच्छ है तथा हमारे लिए महत्व नही रखता ।"

सेवोग, हमारा दुभाषिया, जो भारत के एक सर्वश्रेष्ठ कृषि कालिज का स्नातक था, वोला, "लामा के विचार मेरे लिए अन्यन्त गूढ है।" हमने भी यही समझा था।

ग्यान्त्सी अपने स्वरूप निवास मे हम जौग के नीचे बाजार के समीप स्थित बड़े मठ मे भी गये। धुधले प्रकाश वाले प्रार्थना के विशाल हाल मे लगभग एक सहस्त्र बौद्ध भिक्षु पचास फुट ऊची सुनहरी बुद्ध प्रतिमा के सम्मुख मन्त्र पाठ कर रहे थे। हमने कुछ बोद्ध भिक्षुओ के साथ ऊपर के कमरे मे याक के मक्खन की चाय पी और मठ की छतो तथा छज्जो पर लगभग आधा मील टहले। विस्मय-पूर्ण होकर हमने देखा कि एक तीर्थ-यात्री बुद्ध प्रतिमा के सामने मुह के बल पडा था, वह प्रार्थना की ही मुद्रा मे उठा और फिर आगे को मुह के बल गिर पडा। वह इस क्रिया को एक सप्ताह से कर रहा था और विना रुके एक मास तक करते रहनेवाला था, प्रतिदिन प्रातः काल से सन्ध्या पर्यन्त।

मुझे स्मरण हुआ कि दो प्रसिद्ध यात्रियो ने ग्यान्त्सी मे कुछ समय व्यतीत किया था और इसी मठ का अत्यन्त रोचक विवरण लिखा था। एक था विलियम मोन्टगुमरी मैकगोवर्न, जो छद्मवेश मे ल्हासा गया तथा दूसरा था थियोस बर्नार्ड, सरकारी तौर पर आमन्त्रित तथा ल्हासा पहुचनेवाला तीसरा अमरीकी।

अब कई वर्षों से डा० मैकगोवर्न नार्थ वैस्टर्न विश्वविद्यालय मे राजनीति-शास्त्र के प्रोफेसर है। अपनी युवावस्था मे वह जापान मे रहा और महायान वौद्ध धर्म मे गम्भीरता-पूर्वक मग्न रहा, यहांतक कि उसे क्योतो के महान वौद्ध मन्दिर से सम्मानार्थ वौद्ध धार्मिक विधान भी मिला। प्रतिभाशाली और अकाल प्रौढ वीस वर्ष की ही अवस्था में वह लन्दन विश्वविद्यालय के पौर्वात्य अध्ययन विद्यालय के निकाय मे नियुक्त हो गया। तिव्वती भाषा और व्यवहार के सैद्धान्तिक ज्ञान के कारण उसे तिव्वत और वहा के निवासियो के वैज्ञानिक सर्वेक्षण के लिए जानेवाले चार विशेपज्ञो के दल मे सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रित किया गया। यह १९२२ ई० मे हुआ। लन्दन के इडिया आफिस और भारत सरकार ने पार्टी को ग्यान्त्सी तक जाने की अनुमति

दे दी, जहा से वे ल्हासा तथा तिब्बत सरकार से भीतरी भागो मे जाने की अनुमनि के लिए प्रार्थना कर सकते थे। उन्होने तिब्बत मे नाथू दर्रे से प्रवेश किया और उसी रास्ते से चले, जिससे हम ग्यान्त्सी आये थे , किन्तु वे अपने निरीक्षणो के लिए बहुत धीरे-धीरे यात्रा करते थे।

डेविड मैकडानल्ड जिसकी माता सिकिमी थी, उस समय ग्यान्त्सी मे ब्रिटिश व्यापार एजेन्ट था। उसने दल का सत्कार किया और उनका प्रार्थना-पत्र ल्हासा को भेज दिया। तीन सप्ताह तक वे ग्यान्त्सी और उसके आसपास व्यस्त रहे तथा स्थानीय अधिकारी और लामाओ को अपने प्रति सद्भावनापूर्ण बनाते रहे, किन्तु उन्हे ल्हासा से आगे बढने की आज्ञा प्राप्ति की चिन्ता-पूर्वक प्रतीक्षा थी। अन्त मे उत्तर आया और यह निश्चयात्मक निषेध था। यह समझकर कि पार्टी की सख्या घटाने पर ही अवसर मिल सकेगा, तीन व्यक्ति भारत लौट गये। कैप्टिन जे०ई० एलम, दल का सहायक नेता और मैकगोवर्न ग्यान्त्सी मे ल्हासा के अधिकारियो को दूसरा प्रार्थना-पत्र भेजने को रुक गये। यदि ल्हासा नही तो क्या वे शिगात्से जा सकते है ? यदि शिगात्से नही तो क्या वे अपना शोधकार्य जारी रखने के लिए ग्यान्त्सी मे कुछ महीने और रुक सकते है ? उत्तर पूर्णतया निश्चित शब्दो मे आया कि उन्हे तुरन्त तिब्बत से वाहर चले जाना है।

मैकगोवर्न अत्यन्त निराश हुआ। वह तुरन्त अपनी ओर से 'वेश वदलकर और गुप्त रूप से' यात्रा का प्रयास करना चाहता था। किन्तु उसे गगटोक मे ब्रिटिश राजनैतिक अधिकारी को दिया हुआ वचन कि आज्ञा न मिलने पर वह भारत लौट आयगा, याद था। अत उसने एलम के साथ दार्जिलिग लौट आना निश्चय किया। एक वार दार्जिलिग लौट आने पर उसने अनुभव किया कि अव वह अपने दिये हुए वचन से मुक्त हो चुका है और अव वह नये कार्य के लिए तुरत प्रयत्न करने लगा, क्योकि "मैंने निश्चय कर लिया था कि कुछ भी क्यो न हो, मैं वौद्धो के पवित्र नगर मे प्रवेश का एक प्रयत्न और करूगा, चाहे आवश्यकता पडने पर चोरी और छद्मवेश ही क्यो न धारण

करना पडे ।"

मैकगोवर्न को तैयारी मे एक महीना लग गया । वह तीन खच्चर और तीन टट्टू खरीदने के लिए गुप्त रूप से कालिम्पोग गया और चार सिकिमी नौकर दार्जिलिग मे किराये पर तय किये । पहले को, जो स्थानीय व्यक्ति और उसका सेक्रेटरी था, 'शैतान' की उपाधि दी गई, वह आगे चलकर मैकगोवर्न से किये गए व्यवहार के कारण इस नाम के लिए सर्वथा उपयुक्त था । (मैकगोवर्न को तिब्बत मे उसका नौकर वनकर रहना पडा) । खानसामा ल्हातान, जो पिछली यात्रा मे मैकगोवर्न के साथ ग्यान्तसी तक गया था, फिर साथ हो लिया । इसके अलावा एक साईस जानवरो की देखभाल के लिए और एक अर्धविक्षिप्त-सा लडका, साधारण कार्यो के लिए था । चूकि दार्जिलिग से, जोकि ससार का अधिक वकवासी नगर है, गुप्त रूप से जा सकना असम्भव था, मैकगोवर्न ने यह खबर फैलादी कि वह सिकिम के पर्वतो पर भूगर्भशास्त्र सबधी शोध करने के लिए दो महीने की यात्रा पर जा रहा है ।

१० जनवरी १९२३ को यह छोटा-सा दल दार्जिलिग से चला । यह समय वर्फ से अवरुद्ध पर्वतो को पार करने के लिए सबसे भयानक था । मैकगोवर्न को सिकिम होकर जानेवाला और चुम्वी घाटी से ग्यान्तसी को जानवाला तिब्बत का पुराना मार्ग छोडना पडा, क्योकि वहा जाना हुआ होने के कारण उसके पहचान लिये जाने का भय था । सब प्रकार की कठिनाइया, कप्ट और बीमारी सहते हुए, सिकिम के अपरिचित पर्वतो पर वर्षा, हिम और वर्फ के तूफानो का सामना करते हुए, और मौका मिलने पर गन्दी, उजाड और तग झोपडियो मे ठहरते हुए यह छोटा दल तिब्बत मे विना भेद खुले पहुच ही गया। वे कम्पा जौग की छोटी बस्ती मे पहुचे, जहा यगहस्वैंड १९०३ ई० मे पाच महीने तक तिब्बत से सन्धि करने के लिए व्यर्थ ही ठहरा रहा ।

सीमान्त को पार करते ही मैकगोवर्न ने अपना छद्मवेश धारण कर लिया । उसके भूरे वाल रगे गये । प्रात काल की अत्यन्त तीव्र ठडी वायु मे नगे होकर उसने ल्हातन से अपने पूरे शरीर पर अखरोट के रस और आयोडीन के विशेष मिश्रण को पुतवाया । मैकगोवर्न की भूरी आखें भी

विशेष समस्या थी। उसने उनमे नीबू का रस निचुडवाया। यह अत्यन्त वेदनाकारक था, पर यह समझा गया कि इससे आखो का रग गहरा हो जायगा। अतिरिक्त सुरक्षा के विचार से उसने पलको के नीचे हिमान्धता के कारण निकलनेवाले स्राव का अनुकरण करने के लिए मरहम थोप लिया और अत मे गहरा धूप का चश्मा पहन लिया। उसने अपनी यूरोपीय पोशाक एक चट्टान के नीचे दवा दी और अपने साथ लाये हुए तीन तिव्वती कुलियो जैसी पोशाक पहन ली। यही अवसर था, जव 'शैतान' ने अपने को सिकिमी अमीर की ठाठदार पोशाक मे सजाया। उस क्षण से शैतान मालिक था और मैकगोवर्न नौकर। मैकगोवर्न को अपनी अधीनता की स्थिति भूलने का मौका भी नही दिया जाता था।

कम्पा जौंग के उत्तर से उसने बहुत कम यातायात वाले मार्ग को पकडा। यह ग्यान्त्सी के साधारण यात्रा-मार्ग से, जिससे वह स्वभावत. बचना चाहता था, काफी पश्चिम की ओर था। छोटा कारवा शिगात्से से होकर निकला और तब पूर्व को ल्हासा के लिए छोटे रास्ते पर मुड गया, जिसपर डाक-हरकारे तो अवश्य जाते थे, पर यात्री और कारवा कभी नही। मैकगोवर्न के पैरो मे छाले पड गये थे और उनसे खून वह रहा था, मोटा खाना उसे पच नही रहा था, इस कारण पेचिश हो गई थी और पतले कुली के कपडो मे ठडी हवा उसे काटती थी। वह कही न मिल सकनेवाली शक्कर को पाने के लिए उसी प्रकार लालायित था, जैसे कि शरावी वोतल के लिए। ऊपर से यह विपत्ति आई कि वह नदी के पतले बर्फ जैसे पानी मे फिसल पडा और कूल्हे पर चोट आगई। उसकी वडी इच्छा हुई कि वह ल्हासा जाने का प्रयास छोड दे, पर उन सव विपत्तियो और कष्टो को याद करके, जो वह अभीतक सहन कर चुका था, उसने दृढता-पूर्वक निश्चय किया और चलता ही गया।

जिन तिव्वतियो से वह मिला, उनसे उसे ज्ञात हुआ कि यह अफवाह जोरो से फैली हुई है कि मैकगोवर्न नाम का एक विदेशी तिव्वत मे है और ल्हासा की ओर वढ रहा है। स्थानीय अधिकारियो को विदेशी के लिए पैनी निगाह रखने की आज्ञा मिली हुई है। जव वह उस

स्थान पर पहुचा, जहा किनारेवाली सड़क ग्यान्त्सी से ल्हासा जानेवाली मुख्य सडक से मिलती थी, उसके लिए कोई विकल्प नही रह गया। वह उसी मार्ग पर चल पड़ा। यह उसका आश्चर्य-जनक सौभाग्य था कि वह १६ फरवरी १९२३ को अपने साथियो सहित सीधे ल्हासा पहुंच गया। यह तिब्बती वर्ष का अन्तिम दिन था और नये वर्ष के तीन सप्ताह चलनेवाले उत्सव प्रारम्भ होने को थे। ल्हासा उस समय, क्रिसमस के अवसर पर अमरीकी नगरो से भी अधिक भरा था, किंतु विश्वासपात्र ल्हातन ने यह कहकर कि उनका धार्मिक सिकिमी तीर्थयात्रियो का छोटा दल है, रात के लिए निवास मांग लिया। थककर चूर मैकगोवर्न एक छोटे बाहरी कमरे मे जा गिरा। जब परिवार के छोटे कुत्ते ने सभवत. विदेशी की गध पाकर बुरी तरह भोकना शुरू कर दिया, उसने अपने को प्रकट करने का निश्चय कर लिया।

भीतर के कमरे मे वह गृहपति से मिला। यह सोनाम था, जो भारत और तिब्बत के बीच नवीन सचार-प्रणाली का प्रभारी अधिकारी था। सोनाम ने ही मैकगोवर्न के सबंध मे विशेष खोज रखने की आज्ञा जारी की थी। स्वभावत दोनो ही इस अप्रत्याशित और नाटकीय भेंट से चौक उठे, किन्तु सोनाम ने अच्छा व्यवहार किया। उसने अर्धरात्रि मे भोजन का प्रबन्ध किया और मैकगोवर्न को अपना आरामदेह कमरा दिया और अगले दिन उसके पहुचने की सूचना दलाई लामा को गुप्त रूप से देने की योजना बनाई। मैकगोवर्न को अन्य कर्मचारियो के सामने उपस्थित होना पडा, किन्तु उससे अच्छा व्यवहार किया गया।

चूंकि परम्परा यह थी कि नये वर्ष के तीन सप्ताहो के उत्सव के अवसर पर ल्हासा का शासन-प्रबन्ध ड्रैपग मठ के दो भिक्षुओ के हाथ मे देदिया जाता था और इस समय कट्टर भिक्षुओ और यात्रिओ की अगणित सख्या ल्हासा आती थी, मैकगोवर्न के लिए यह अधिक उचित समझा गया कि वह बिना सड़को पर निकलने का साहस किये, चुपचाप सोनाम के घर मे छिपा रहे। किन्तु वह किसी भी प्रकार कैदी नही कहा जा सकता था। अपनी पुस्तक 'छद्मवेश में ल्हासा तक' मे उसने एक उत्तेजित भीड का वर्णन किया है, जो उसके ठहरने के स्थान

पर इकट्ठी होकर पत्थर और डडे फेक रही थी तथा 'विदेशी को मौत' के नारे लगा रही थी।

ज्योही नये वर्ष के उत्सव समाप्त हुए और भिक्षुओ की भीड विदा हुई, वह अनेक पर्यटनो पर आनन्द से गया और २४ मार्च को उसे आवश्यक आज्ञापत्र, सवारी के लिए ताजे पशु, विश्राम-गृहो के लिए अनुमति-पत्र और भारत की सीमा तक के लिए सैनिक रक्षा-दल दिया गया।

एरिजोना[1] से तिव्वत वहुत दूरी पर है, किन्तु थियोस वर्नार्ड के लिए यह दूरी कुछ भी नही थी। अमरीका की सबसे दर्शनीय पश्चिमी राज्य एरिजोना मे उत्पन्न वर्नार्ड के विषय मे सभी का यही विचार होगा कि उसका दृष्टिकोण वहा के निवासियो जैसा ही होगा। किन्तु अपने माता-पिता से, जिन्होने लम्बे अरसे तक एशिया के धार्मिक और दार्शनिक सिद्धान्तो का अनुकरण किया था, उसने पूर्वी दर्शन मे अपनी रुचि वढाली थी और भारत तथा सिकिम मे, विशेपरूप से वौद्ध धर्म की शिक्षाओ का अध्ययन किया।

१९३७ ई० मे उसने तिव्वत जाने का निश्चय किया। मेकगोवर्न की तरह उसे भी ग्यान्तसी तक जाने की अनुमति मिल गई और वहा उसे तिव्वत मे प्रवेश के लिए अपना प्रार्थना-पत्र अधिकारियो को प्रेषित करना था। उस समय तेरहवे दलाई लामा का कई वर्ष पुर्व देहान्त हो चुका था और नये दलाई लामा का अवतार अभी प्राप्त नही हुआ था। वर्नार्ड कई सप्ताह ग्यान्त्सी मे रुका रहा और अपना मन मठो मे, लामा धर्म मे, और उन हँसी-खुशी की पार्टियो मे लगाये रहा, जो ग्यान्त्सी मे व्यापारिक मिशन के प्रधान अग्रेज आयोजित करते रहते थे। तिव्वतियो से कहा गया कि वर्नार्ड उनके धर्म के विषय मे अधिक जानकारी मे रुचि रखता है तथा स्वय योग का अभ्यास करनेवाला है। कुछ सप्ताह वाद वर्नार्ड को उत्तर मिला—यह शासक रीजेन्ट और कशग से, जो ल्हासा की प्रधान प्रवन्धक समिति थी, राजधानी आने का निमन्त्रण था।

---

१. अमरीका का एक राज्य।

स्वभावत: वह हर्ष से नाच उठा और इसपर कौन न नाचने लगता ! बर्नार्ड का तिब्बती अधिकारियो ने प्रेम से स्वागत किया, राजसी दावतें दी और विदा के समय बहुमूल्य भेट दी। वह अनेक मठो मे गया और अनेक फोटोग्राफ लिये। अमरीका लौटने पर उसने कई व्याख्यान-यात्राएं की, चित्र दिखाये और योग के पाठ भी सिखाये।

बर्नार्ड की वास्तव मे तिब्बत लौटकर जाने की प्रबल लालसा थी। चूंकि उसको दूसरा निमन्त्रण नही मिला था, उसने अवश्य गुप्त रूप से प्रवेश का प्रयत्न किया होगा। नवम्बर १९४७ के आरम्भ मे नई दिल्ली से प्राप्त समाचारों से विदित हुआ कि बर्नार्ड और उसके नौकरो को हिमालय पर कबाइली आक्रमणकारियो ने मार डाला। किन्तु १७ नवम्बर को समाचार-पत्रो ने घोषित किया कि बर्नार्ड के अमरीकी-प्रकाशक को श्रीमती बर्नार्ड का कलकत्ता से ५ नवम्बर का पत्र मिला, जिसमे लिखा कि यद्यपि कबाइलियो ने नौकरो को मार डाला, उनका पति सुरक्षित है। उसने कहा कि उनका वर्तमान अता-पता मालूम नही है। इस देश मे थियोस बर्नार्ड के विषय मे प्राप्त यही अन्तिम शब्द है। क्या वह जीवित है ? क्या वह किन्ही उन तिब्बती मठो मे लुप्त होगया जिनका उसने वर्णन किया है कि धार्मिक मनुष्य गुफा सरीखे आश्रमो मे अपने को शेष जीवन के लिए बन्द कर लेते है ? यह एक रहस्य ज्ञात होता है और चित्रपट के लिए एक रोमान्चकारी कथा ही है।

जब हम ल्हासा मे थे, हमने उसके विषय मे अपने तिब्बती मित्रों से पूछताछ की। सब इसपर एकमत थे कि बर्नार्ड मारा गया। उसके नौकरो के शरीर पाये गए।

यद्यपि उसका शरीर नही पाया गया, वे कहते है कि वह भी नि सन्देह मारा गया। तिब्बती लोगो ने हमसे कहा कि बर्नार्ड ल्हासा मे जिस प्रकार निरन्तर वस्त्र परिवर्तन करता रहता था, उससे वे लोग विस्मय और भ्रम मे पड जाते थे। एक दिन वह तिब्बती सभ्रान्त नागरिक के कपडे पहनता था तो दूसरे दिन वह मठ के पुजारियो के परिधान मे दिखाई देता था। किन्तु सबसे अधिक भ्रम मे उन्हे इस बात ने डाला कि अमरीका लौटने पर वह अपने को 'श्वेत लामा' कहने लगा।

९ | तिब्बती परिवारों में

ग्यान्त्सी तक हम राजधानी के लिए आधा मार्ग तय कर चुके थे। यहा भारत से आनेवाला व्यापार-मार्ग दो शाखो मे बट जाता है। मुख्य मार्ग उत्तर-पूर्व की ओर ल्हासा को चला जाता है और दूसरी सडक उत्तर-पश्चिम की ओर शिगात्से को, जो तिब्बत का दूसरे नबर का शहर और ताशी ल्हुनपो, पणछेन लामा के विशाल मठ का अधिष्ठान है, जाती है। हमे शिगात्से की यात्रा का लालच हो रहा था, पर दिन बडी जल्दी निकल रहे थे। हम आगे बढने को उत्सुक थे और लामा धर्म के पवित्र नगर मे अधिक-से-अधिक समय व्यतीत करना चाहते थे।

ग्यान्त्सी उस पक्ति का अन्त भी है, जहातक भारतीय या पश्चिमी प्रभाव रहता है। यहातक भारतीय डाक की भी पहुच है और इसके आगे तिब्बत के भीतर धार्मिक तीर्थ-यात्री और एशियायी व्यापारियो के अलावा बहुत-थोडे यात्रियो को जाने की अनुमति मिलती है। ग्यान्त्सी से ल्हासा तक वे आरामदेह डाक-बगले भी मिलनेवाले नही थे, जो दिनभर की यात्रा के अन्त मे अत्यन्त सुखद दीखते थे। अब हमारे रात्रि के विश्राम तिब्बती ग्रामीणो के घरो मे होने थे। ग्यान्त्सी छोडने के उपरान्त हम, ससार के सबसे दूर स्थित और एकाकी देश के मध्य मे पहुचने की उत्तेजना का आनन्द लेने लगे थे।

तिब्बती गृह का परिचय एक अविस्मरणीय अनुभव है, यह अनुभव हमे ग्यान्त्सी मे से पहले दिन की यात्रा के अन्त मे गौब्शी के ग्राम मे हुआ। यहा हमे एक दुमजिली पत्थर की इमारत मे ले जाया गया। तिब्बत के उन अधिकाश घरो मे जो याक के बालो के तम्बुओ मे नही है, नीचे की मजिल कारवा के पशुओ और मालिक के याक, गाय, बकरी और मुर्गियो के लिए सुरक्षित रहती है। सब जगह दीखनेवाला भयावना, गुर्राता हुआ, झबरा कुत्ता, जो तिब्बती घरो की रक्षा करता

है, याक की रस्सी के सिरे से आंगन मे बधा हमपर भौकने लगा।

रहने के स्थान पर पहुंचने के लिए हमे एक पुरानी सीढी से चढ़ना पड़ा, जिसने हमे ऊपरी मजिल पर पहुचाया। उसमे सब कमरे धूल और गन्दगी से भरे थे। एक धुआभरी रसोई थी, जिसमे चिमनी के स्थान पर छत मे एक रोशनदान था, दूसरा अधेरा, तंग कमरा था, जिसमे तिब्बती बुद्ध मूर्तियां रक्खी थी, जो पूजा के समय जलाये जानेवाले याक के मक्खन के दीपकों को रखने के लिए धातु की तश्तरियो से घिरी थी। निवास-स्थान फर्नीचर से शून्य थे, केवल दो नीचे दीवान और प्रत्येक छोटे कमरे में एक लाल वार्निश की मेज थी। स्वच्छता का प्रबन्ध भी अत्यन्त असन्तोषजनक था। फर्श पर एक मोखा खोल दिया था और नीचे गन्दगी का ढेर लगा रहता था। यह सब वास्तव मे बडा कष्टप्रद था, किन्तु इससे रात की तेज हवाओ से सुरक्षा तो मिलती ही थी।

हमारे रसोइये नोबू ने पुरानी रसोई मे अपने को शीघ्र ही अभ्यस्त कर लिया और याक के गोबर की दो जगह आग जलाकर और हमारे कोलमैन प्राइमस स्टोव पर, जो मिट्टी के तेल से जलना था, शीघ्र भोजन तैयार कर दिया।

जब नोबू ने उस स्टोव को जलाया, तिब्बतियो की आखे आश्चर्य से बाहर निकल आईं। उसकी तेज लौ उन्हे जादू-जैसी मालूम होती थी। लेकिन मेरे लिए विस्मयजनक यह था कि उसने उस प्रकाशर-हित, धुआभरी रसोई मे इतना अच्छा भोजन कैसे बनाया ? वह वास्तव मे हमारे जैसे यात्रादलो के लिए अत्यन्त उपयोगी व्यक्ति था और वह तिब्बती पाक-विद्या में निपुण था। रसोई की दीवार के सहारे ही ईंधन (गोबर के उपले) रक्खा हुआ था। एक छोटी लड़की गोलाकार खोखले लकडी के नल मे, जिसकी ऊंचाई ४ फुट थी, मक्खन मथ रही थी और मथानी ऊपर-नीचे करते हुए गाती जाती थी।

हमारे गोब्शी के मेजमानों ने हमे सबसे। बडा और सबसे अच्छा कमरा, जो ऊपरी मंजिल के एक ओर था, उपयोग के लिए दिया। इसका फर्श कच्चा था, किन्तु दीवारो पर कई पर्दे थे और कमरे के छोरो पर रक्खे दीवान तिब्बती कम्बलो से ढके थे। हमने उन्हें धन्यवाद

दिया और छत पर तम्बू लगाकर अपनी सैनिक चारपाइयो पर सोना पसन्द किया।

अगली सुबह हम पौ फटते ही घर के मुर्गे के साथ ही उठ वैठे। हमने तावे के तसले मे हाथ-मुह धोया और अपने दातो पर ब्रुश फेरते हुए छत की मुडेर से नीचे थूकते रहे। अपनी अन्य प्राकृतिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए हमे चट्टानो के बीच दूर जाना पडा। दलिया और अण्डे का नाश्ता करने के उपरान्त अपने टट्टुओ पर सवार हुए और तग रास्ते पर १८ मील दूर रालुग को चल पडे।

यात्रा के अवसर पर उनके अपने शब्दो के अनुसार, मेरे पिता ने ल्हासा के मार्ग पर किये गए भोजनो मे अधिक नही तो, उतने ही स्वाद से आनन्द लिया जितना कि नाप-तौलकर काम करनेवाली अमरीका की गोर्मेट सोसायटी द्वारा तैयार किये हुए आनन्दकर भोजनो मे। उन्हें अनेक वर्षो के वाद छुट्टी मिली थी और उनका अपने अनुभवो से पूरा आनन्द उठाने का अपना अनोखा ढग है। मैं स्वीकार करता हू कि डैडी मेरी अपेक्षा अधिक अच्छे स्काउट हैं। यद्यपि हम उन कई प्रथम यूरोपीय यात्रियो द्वारा, जिन्होने वर्जित देश तिब्बत मे प्रवेश का साहस किया, उठाये गए भयानक कष्टो की अपेक्षा बडे आराम से यात्रा कर रहे थे, तब भी मुझे कहना पडता है कि हमारा भोजन वहुत कुछ नीरस था। मैं अनेक वर्षों तक सूखे बेर या सेव की शकल तक नही देखना चाहता

ल्हासा की यात्रा मे परोसे गये भोजन के विषय मे उनकी प्रतिक्रिया का कुछ अनुमान देने के लिए मैं डैडी की डायरी मे से ही कुछ उद्धरण देता हू ·

"हम तिब्बती रसोई मे अन्य दस व्यक्तियो के साथ वैठे है। एक कोने मे दो स्त्रिया पत्थर और मिट्टी के वने चूल्हे मे याक के गोवर की आग जलाने का प्रयत्न कर रही है। एक स्त्री वडे जोरो से पुराने जमाने की वकरे की खाल की धोकनी को ऊपर-नीचे चला रही है। अन्य छ व्यक्ति सेवोग नोर्वू को देख रहे है, जोकि लावेल जूनियर के स्टोव को जला रहा है।

"दर्शक, जोकि रोविन हुड के आपेरा(नृत्यनाटक) के डाकुओ जैसे दीख रहे है, मेरे चारो ओर वैठे है और सर्वव्यापी चाय पी रहे है, जिसमे जौ और याक का सडा मक्खन मिला है। एक वूढी औरत और वूढे गृह-स्वामी की आखें स्टोव को जलते देखकर चमक उठती है। वे समझ नही पाते कि लपट कहा से आ रही है। निस्सन्देह वे समझते है कि वृद्ध अपरिचित व्यक्तियों द्वारा विस्मयजनक काम करा रहे है।

"तीन और आदमी अन्दर आ गये है। मैं धुए के कारण उन्हे कठिनता से देख पा रहा हूं। छतो मे रोशनदान के अतिरिक्त चिमनी न होने के कारण तिव्वती रसोइया काली और दमघोटू होती हैं। वे हमेशा दूसरी मंजिल पर ही होती है, क्योकि निचली मजिल पर जानवरो, मुर्गियों और कीचड का राज्य रहता है।

"सूयडम कटिग के निर्देशो और माउन्ट वाशिगटन पर डार्टमाउथ-आउटिंग-क्लव के साथ अलास्का मे, लावेल जूनियर के भोजन तैयार करने के पिछले अनुभवों और उसकी तुर्की और फारस के पिछड़े देशो की हाल की यात्राओ के कारण, जहातक हमारे भोजन का संवध है, हम ल्हासा की यात्रा मे विल्कुल ठीक थे। भोजन का ऐसा विभाग था, जिसमे हम चमक रहे थे और हमारा भोजन अन्तर्राष्ट्रीय भी था। यह लगभग सभी जगहो से एकत्र किया गया था।

"सुवह का नाश्ता लीजिये। हम भारत से लाये गए सेव के सूखे गोल टुकडो या आस्ट्रेलिया के सूखे वेरो या समीप ही भूटान से लाये गए सताल् के टुकडो से प्रारम्भ करते है। दूसरी चीज है गेहूं का सत, जिस पर अनेक भापाओ के लेवल लगे हैं। पता नही, कहा का है। या तिव्वती जौ का दलिया या अपने अमरीका के क्वेकर ओट। फिर रास्ते मे पकाई गई रोटी, जो आस्ट्रेलिया के आटे की वनी है, आस्ट्रेलिया का टीनवन्द मक्खन, जो कटिवन्धीय प्रदेशो के लिए विशेप रूप से वन्द किया गया है, आस्ट्रेलिया की वनी कुछ भेद-भरी वस्तु, जिसपर वेकन (सुअर का मांस) का लेवल लगा है, और तिव्वती अ:। हमारा इस नाश्ते का पेय था भारत की चाय।

"दोपहर का खाना हम सदा यात्रा के मध्य मे ही ब्रह्मपुत्र की किसी

सहायक नदी के सामने ओर चारो ओर १६,००० से २१,००० फुट तक ऊची पर्वत-चोटियो से घिरे किसी चट्टान के समूह पर बैठकर करते थे। यह भोजन अधिकतर इग्लैड के मुलायम विस्कुट, नार्वे की सार्डीन मछली, स्विटजरलैन्ड के पनीर, इग्लैड के विना चीनी के चावलेट, फारस के खजूर और तिब्वत का वर्फ का पानी, जिसमे यदि याको का समूह पास मे चरता हो तो पर्याप्त मात्रा मे क्लोरीन भी मिला होता था।

"कोयले की आग के चारो ओर तिब्वत के कम्वलो पर बैठकर, पुराने समय के मिट्टी के बने तेल के दीपक के प्रकाश मे हम अधिकतर रात्रि के भोजन मे दावत का आनन्द लेते थे और यह मीनू रहता था।

"कैनाडा की डिव्वावन्द मछली, जिसे मैकआर्थर के सहायक कमान्डर जनरल विलोवी ने टोकियो से भेजा था, दूसरा स्विटजरलैड का मटर सूप, जिसे गाढा करके एक वर्ग इच के टुकडो मे जमाया गया था, उसके वाद माससार सहित गोश्त और सब्जी की प्लेट या तिब्वत का मटन जो जौगपोन[1] का उपहार था, जिसे ताजे शलजम, गोभी, चुकन्दर, गाजर—सव स्थानीय वस्तुओ—के साथ उबाला गया था। साधारण तौर पर हम एक तिब्वती अधिकारी द्वारा भेंट किये गए वोरे से एक प्लेट चावल भी लिया करते थे। हम अपनी दावत आस्ट्रेलियायी आटे की रोटी, तस्मानिया के स्ट्रॉवैरी के मुरब्बे और किलिम, अपने अमरीकी डिब्बे के दुध के साथ समाप्त करते थे।

"यह सव रसोइये सेवोग-नोर्वू की जादूगरी से, जो हमारे सौभाग्य से एक अग्रेज के साथ भारत और अफगानिस्तान मे सात वर्ष तक नौकरी कर चुका था, अत्यन्त स्वादिष्ट लगता था।"

ग्यान्त्सी से वाहर पहले दो पडाव हमे गहरी घाटियो से चक्कर काटते हुए ऊपर ले गये। हमारे चारो ओर वीरान पर्वत थे। इस ऊचाई पर वृक्ष और फूल नही उगते, किन्तु ये वीरान ढलाव लोहा और दूसरी धातुओ से पूर्ण हैं। चट्टानो की दीवारो पर धारिया चमक

---

१. जिले का गवर्नर।

रही थी और टट्टुओ के खुरो के नीचे रास्ते की चट्टाने भी आशा-जनक लगती थी। हमें विश्वास है कि इन पर्वतो मे सोने की वहुत मात्रा उपलब्ध हो सकती है। हमने बिल्लौरी पत्थर वहुतायत से देखे, जिनमे अनेक प्रकार के खनिज सग्रथित थे, किन्तु काफी होशियारी से चारो ओर देखते रहने पर भी हमे सोने के मिश्रण वाले पिन्ड कही नही दीख पडे। मुझे खेद है कि पर्वतो के स्रोतो से रेत और पत्थरो को छानकर सोने के बिखरे कणो को निकालने के प्रयत्न के लिए यात्रा के मध्य में हम अधिक नही रुक सकते थे।

अत्यन्त प्राचीन समय से तिब्बती इन स्रोतो से सोना धोकर निकालते रहे है। पुराने राकहिल तथा हैडिन जैसे आधुनिक सभी यात्रियो ने पश्चिमी, उत्तरी और पूर्वी तिब्बत मे सोने की खोज के लिए जोर दिया है। निश्चय ही तिब्बत के हिमालय, खनिज द्रव्यो के अनन्वेषित और अस्पृष्ट भंडार है, जहा न केवल सोना वल्कि लोहा, तावा, सीसा, पारा और यूरेनियम भी मिल सकता है। यदि तिब्बती अपनी खनिज-राशि को निकालने मे तत्पर हो जाय तो उनके देश की समृद्धि और रहन-सहन का स्तर वहुत ऊंचा उठ जाय, किन्तु वे सुरग से पर्वत उडाने का विरोध करते है, क्योकि वे समझते है कि इससे पृथ्वी के नीचे रहनेवाली आत्माए अप्रसन्न हो जायगी और उनसे वदला लेगी।

राकहिल ने सन् १८९१ ई० मे पृथ्वी को खोदने के विरुद्ध पूर्वाग्रह का एक मनोरजक स्पष्टीकरण दिया है। तिब्वत में खान खोदने की अनुमति नही है, क्योकि लामाओ द्वारा पोषित गहरा पैठा हुआ मिथ्या विश्वास है कि "यदि स्वर्णपिड पृथ्वी से निकाल लिये जायंगे तो नदियो के पत्थरों मे सोना मिलना वन्द हो जायगा, कारण कि पिंड जडें या पौधे है, जिनकी स्वर्णकण दाने या फूल हैं," ये मिथ्या विश्वास पूर्ववत कायम है और तिब्वत के शासक वर्ग द्वारा इस कारण प्रोत्साहित भी किये जाते है कि खनिज उद्योग की प्रगति होने के सिलसिले मे स्वय तिब्वत का शोषण होने लगेगा और शायद अधिक शक्तिशाली पडोसी उसको निगल ही जायंगे।

हमे रालुग मे भी गोब्शी के जैसा ही सादा और मैत्री-पूर्ण ग्रामीण

आतिथ्य मिला और गोब्शी के आश्रम के समान ही यहा भी मिट्टी और पत्थर के घर मे रात्रि व्यतीत की। हमारे पशु नीचे कीचड के फर्श पर सोये और हमे ऊपर ले जाया गया, जहा पर्याप्त खुश्की थी। रालुग गोब्शी से भी छोटा और अधिक अधकार-पूर्ण था। कुछ मील दूर वर्फ की चोटियो से निकली एक गदली पानी की धारा हमारे घर के सामने से वहती थी। हमारे विश्राम का विशेष आकर्षण नोर्वू की दावत थी, आस्ट्रेलिया के खमीरी आटे की गर्मागर्म रोटी मक्खन और स्ट्रावेरी के मुरब्बे के साथ परोसी गई। नोर्वू अपनी पाकविद्या की निपुणता से हमे विस्मित करता रहा।

हमने फिर छत पर अपने तम्बू का प्रयोग किया। किन्तु उतनी सफलता से नही जितना कि गोब्शी मे। हम रात मे लगभग उड़ ही गये थे। तम्बू बुरी तरह फडफडा रहा था। इसकी रस्सिया अगल-वगल के कैनवस के पर्दों पर फटाफट टकरा रही थी। मानो हमारे तम्बू की समस्या ही पर्याप्त न हो, भिक्षुओ के एक दल ने इसे शुभ रात्रि समझ कर समीप की झोपडी से प्रेतात्माओ को भगाने का निश्चय किया। उन्होने विना रुके अपने ढोल और हड्डी के शख वजाये। यह हमे सगीत तो किसी प्रकार नही मालूम होता था, केवल शोरगुल था। हमे उस रात विल्कुल नीद नही आई, किन्तु प्रेतात्मा ,अवश्य डरकर भाग गई होगी।

रालुग का मठ असाधारण है। हमे बताया गया कि इस लामा-मठ मे भिक्षु और भिक्षुणिया साथ-साथ रहते है। वे उस सम्प्रदाय के है, जो विवाह की अनुमति देता है। यह एक वडा प्रसन्न परिवार था, जिसमे अनेक वच्चे थे। सव लडके और लडकिया अपने पिता और माता की तरह भिक्षु और भिक्षुणिया वनने को निश्चित थे। ग्यान्त्सी मे हमने जो कुछ पाया, रालुग उससे एक कदम आगे था। शहर से कुछ ऊपर ढाल पर चार वौद्ध धार्मि निवास है, दो भिक्षुओ के और दो भिक्षु-णियो के लिए। एक भिक्षु-मठ और भिक्षुणी-मठ मे कौमार्य का दृढता-पूर्वक पालन होता है। अन्य दो मे अनुशासन ऐसा कठोर नही है, जिसके फलस्वरूप अनेक वच्चे वुद्ध की सेवा के लिए समर्पित किये जाते हैं।

किन्तु रालुग और ग्यान्त्सी अपवाद है। तिब्बत के बहुसख्यक लामा मठो के सदस्य कौमार्य की प्रतिज्ञा का पालन करते है।

सिकिम की राजधानी गगटोक से चलने के १७ वे दिन हम रालुग से दिन-भर की सबसे लम्बी यात्रा ३२ मील के लिए निकले। घर पर कार द्वारा इस दूरी मे लगभग ४५ मिनट लगते, किन्तु तिब्बत मे ल्हासा के मार्ग पर ३२ मील दूसरी ही चीज है। इसमे हमारे कारवां को १४ घटे लगे।

रालुग से पहले आठ मील तक हम तेजी से चौडी एकान्त धाटी मे घुडसवारी करते गये। यहां, आते जाते कारवा को छोडकर जीवन का कही चिह्न नही था। तब हमने पर्वत-शृ खलाओ के बीच संकरे मार्ग से, जो लोहा, तथा अन्य खनिजो मे समृद्ध है, ऊपर चढना प्रारभ किया। अविराम वर्षा मे हम घटो तक कारो ला की ओर सावधानी से चढते रहे जो उन विशाल पर्वतो के मध्य मे है, जिनमे से कई ग्लेशियर अपना जल, ब्रह्मपुत्र की अनेक सहायक नदियो मे से एक मे झरनो की भाति गिराते रहते हैं। १६००० फुट ऊचे दर्रे कारो ला के शिखर के समीप हम तीन वडे ग्लेशियरो के वीच मे फस गये, जो वर्फ की दीवार के समान हमारे पथरीले मार्ग से कुछ ही दूर थे।

कारो ला को पार करने के उपरान्त याको का एक विशाल कारवा, जिससे वड़ा हमे रास्तेभर नही मिला, हमारे रास्ते मे अड़ गया। अव या तो हमारे लदे हुए पशुओ को या याको को रास्ता छोडना था। पग-डडी दोनो मे एक के लिए भी पर्याप्त चौडी नही थी। इसलिए चोगपोन, हमारे सैनिक रक्षक, ने उन सैकडो याको को चाबुक से किनारे पर हांका और एकाध जगह गहरे ढाल पर भी, किन्तु याक एक आश्चर्य-जनक पशु है। वडे आकार का होते हुए भी अपने फटे हुए खुरो की सहायता से वह पर्वतो की दीवार पर इस प्रकार चिपट सकता है, जहां घोड़ा या खच्चर कदापि साहस नही कर सकते। कुछ आगे चलकर हमें एक स्थान पर चक्कर खाकर जाना पडा, जहां पर्वत-शिखर से आये वर्फ के तूफान ने हमारे रास्ते को पूरीतौर से साफ ही कर डाला था।

दर्रे के ठीक ऊपर हम एक सराय पर, जहां अधिकतर याक

वाले आते थे अपने को सुखाने और आराम से चाय का प्याला पीने के लिए रुके। अबतक हमने अनेको छप्पर की कोठरिया देखी थी, पर यह सबसे गन्दी और धुएदार थी। उस कूडाघर मे खच्चरवालो तक ने ठहरने मे आपत्ति की। झोपडी के धुए से अपनी आखो को मलते-मलते हम वर्षा मे ही अगले १६ मील के लिए चल पडे। "तुम जानते हो," डैडी ने घोडे पर चलते-चलते कहा, "मेरा अनुमान है कि जब सीडम कटिंग दम्पति तिब्बत मे आये थे, वे रात मे उस सराय मे ठहरे थे।"

"ठीक है, मुझे उनके उस अनुभव से जरा भी ईर्ष्या नही है।" मैंने कहा।

डैडी ने व्यग्य किया, "मुझे भय है कि डाक-बगलो ने हमे बिगाड दिया है और हम कोमल बनते जा रहे हैं। हम बहुत शान से यात्रा कर रहे हैं। क्या तुम्हे याद है, मदाम डैविड नील किस प्रकार ल्हासा गई थी ? "

वास्तव मे मुझे याद था कि वर्जित नगर मे पहुचनेवाली वह सर्व-प्रथम पश्चिमी महिला थी। वह वहा अनिमन्त्रित और छद्मवेश मे आई और ल्हासा मे बिना पहचाने गये दो महीने रही। यह सन् १९२५ ई० मे हुआ।

ल्हासा की यात्रा पर छद्मवेश मे इतनी अच्छी तरह सुसज्जित हो-कर कभी कोई नही चला, जितनी कि यह विलक्षण फ्रासीसी महिला अलेक्जेन्ड्रा डेविड नील चली थी। पूर्वी दर्शन, धर्म और सस्कृत की छात्रा होने के कारण वह तिब्बती साहित्य और भाषा का कुछ ज्ञान रखती थी। उसने बर्मा, नेपाल, चीन, जापान और कोरिया मे अध्ययन किया था और प्रसिद्ध मठो मे ध्यान भी किया था। कुछ समय के लिए वह तिब्बत मे रही और एक तिब्बती लडके को कानूनी तौर पर गोद लिया, जो बाद मे लामा बना और योगडन लामा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अपनी तिब्बत की यात्राओ मे एक वार वह शिगात्से तक प्रवेश करने मे सफल हो गई, जहा पणछेन लामा ने, जो चीन मे भाग गया था और १९३७ ई० मे वहा निष्कासन मे ही मरा, उसके उत्साह और लामा-धर्म मे उसकी रुचि को देखकर उसपर विशेष ध्यान दिया।

यद्यपि पणछेन लामा मदाम डैविड नील की शोधो मे सब प्रकार सहायता करने को उत्सुक था और उसपर अपने निवास की अवधि को बढाने के लिए जोर डाल रहा था कि तभी ल्हासा के अधिकारियो ने उसे देश से निकाले जाने की आज्ञा दी। वह पूर्ण सरकारी तौर पर निमन्त्रित नही थी।

इस प्रकार बलात निकाले जाने और शिगात्से के पडोस के गरीब ग्रामीणो पर उसकी सूचना न देने के कारण किये गए जुर्मानो से उसे बहुत कष्ट हुआ। उसने कहा, "मैं स्वीकार करती हूं कि उन अनेक यात्रियो की तरह, जिन्होंने ल्हासा पहुंचने का प्रयत्न किया और वहा पहुचने मे असफल रहे, मेरे मन मे लामाओ के पवित्र नगर मे जाने की कभी इच्छा नही रही। साहित्य, दर्शन और तिब्बत की विद्या के विषय मे मेरे शोध-कार्य के लिए सरलता से आवागमन के योग्य, उत्तर-पूर्वी तिब्बत के अधिक बौद्धिक भाग, जहां साहित्यिको और आध्यात्मिको से भेंट हो सकती थी, राजधानी की अपेक्षा अधिक उपयुक्त थे। सबसे अधिक मुझे ल्हासा जाने की प्रेरणा वहां की मूर्खता-पूर्ण निषेधाज्ञा ने, जो तिब्बत को बन्द किये रहती है, प्रदान की।"

मदाम डैविड नील का राजनीति से कोई सम्बन्ध नही था, किन्तु वह दृढतापूर्वक अनुभव करती थी कि तिब्बत का द्वार अन्वेषकों, वैज्ञानिको, विद्वानों और अन्य 'ईमानदार सद्भाव-युक्त' मनुष्यों के लिए बन्द नही होना चाहिए। उसका भी अटल विश्वास था कि इस परिस्थिति के लिए उत्तरदायी अंग्रेज है। अपने शिगात्से के अनुभव के कुछ वर्ष बाद वह अपने पोष्य पुत्र और नौकर के साथ जेक्येन्दो नामक, ल्हासा की सडक पर स्थित, एक व्यापारी नगर से, तिब्बत मे अठारह मास की एक यात्रा के विचार से चली। जबकि वह साल्वीन नदी के समीप थी, उसे रोक लिया गया और अपने देश वापस जाने की आज्ञा दी गई। इस बार उसने समुचित कार्यवाही का पक्का निश्चय किया हुआ था।

उसने अपनी पुस्तक 'मेरी ल्हासा-यात्रा' की भूमिका मे लिखा, "इस समय ल्हासा जाने का विचार मेरे मन में पक्का घर कर गया। सीमान्त के खम्भे ने पूर्व जहातक उसे सैनिक रक्षक पहुंचा गये, उसने

शपथ ली कि सारी अडचनो के बावजूद मैं ल्हासा पहुचूगी और दिखा दूगी कि एक औरत की प्रबल इच्छा क्या कर सकती है। मैं केवल अपनी हारो का बदला लेना नही चाहती थी। मैं दूसरो को भी चाहती थी कि वे इन प्राचीन प्रतिरोधो को तोड डालें, जो एशिया के केन्द्र मे लगभग ७९ से ६९ अश देशातर रेखा तक विस्तृत भूभाग को घेरे हुए हैं।"

शपथ लिये हुए तपस्वियो की तरह बौद्ध धर्म मे दृढ होने के कारण मदाम डैविड नील को विद्वान लामाओ का विश्वास सदैव मिल जाता था। अनेक तिब्बती बोलियो को लिखना, समझना और बोलना जानने के कारण छद्मवेश मे वह तिब्बत के समीप के किसी भी भाग से आनेवाली यात्री समझी जा सकती थी। अपने स्नेह एव हास्यप्रियता तथा मनुष्यो के जीवन मे उत्साह-पूर्ण रुचि के कारण और साहस और प्रत्येक बाधा का सामना करने की तत्परता के कारण वह यह दिखाने को कि स्त्री की प्रबल इच्छा क्या-क्या प्राप्त कर सकती है, सब प्रकार से तैयार हो गई।

इस प्रकार मदाम डैविड नील की पाचवी यात्रा मे ल्हासा उसका निश्चित लक्ष्य था। चीनी शासन के अन्तर्गत सीमान्त भाग से लिकियाग होते हुए, उसने योगडन के साथ शरद ऋतु के प्रारम्भ मे ही साल्वीन नदी को पार करके तिब्बत के मध्य मे प्रवेश किया। उन्होने गरीब तीर्थ-यात्रियो का वेश बनाया, जो भीख मागते हुए अपना मार्ग तय करते हैं। योगडन ने रक्ताबर सम्प्रदाय के लामाओ के जैसे वस्त्र पहने, किन्तु बहुत भद्दे किस्म के। मदाम डैविड नील और भी भद्दे कपडो मे उसकी वृद्धा माता के रूप मे यात्रा कर रही थी। उसने अपने भूरे बाल काली चीनी रोशनाई मे रगे, जिसे बीच-बीच मे फिर नये सिरे से लगाना होता था और उन्हे याक के काले बालो को लगाकर लम्बा भी बना लिया। इसके उपरान्त वेश को पूर्ण करते हुए उसने अपना चेहरा कोको और कोयले के चूर्ण से पोत लिया। अपने कपडो के नीचे उसने अपनी रकम, पेटी और रिवाल्वर छिपाये, जिनकी सकट मे आवश्यकता पड सकती थी। उनके साथ कोई नौकर नही था। अकेले और भारी बोझ

पीठों पर लादे वे ल्हासा को पैदल चल पडे ।

पहचाने जाने के भय से वे पहले अधिकतर रात में ही यात्रा करते थे और दिन मे अपने को चट्टानो के पीछे या गुफाओ मे छिपा लेते थे। वे वहुत सूक्ष्म आहार जैसे मक्खनी चाय और शम्बा पर ही निर्वाह करते थे, पर कभी-कभी चौवीस घटो तक विना भोजन के रह जाते थे। चूकि मौसम भयानक और सर्द होता जाता था और उन्हे ऊचे बर्फीले दर्रे पार करने थे, वे अधिकतर खुले मे वर्फ पर अपने छोटे तम्वू को अपने चारो ओर लपेट कर सोये थे। उनके पास कम्वल नही थे और कडाकेदार जाडे से एकमात्र सुरक्षा का साधन उनका तम्वू ही था। वे उसे खडा नही कर सकते थे, जवतक कि देश मे काफी दूरतक न चले जाय।

यह अनुभव करके कि तिव्वती उन्हे वास्तव मे भिक्षु तीर्थयात्री ही समझते है, उनको अपने छद्मवेष पर विश्वास हो गया और उन्होने गावो से वचकर चलना छोड दिया। कभी-कभी वे किसी किसान की झोपडी मे शरण मांग लेते थे और खुरदरे रसोई के फर्श पर. जो मक्खन और सूप से चिकना तथा कवाड से गन्दा पडा होता था, सो रहते थे। कभी-कभी योगडन किसी मठ से भोजन खरीद लाता था और अपनी वेचारी वूढी मा को वह प्रतीक्षा मे छोड जाता था। रक्तांवर सम्प्रदाय का समझे जाने के कारण योगडन पर भविष्य वताने के लिए दवाव डाला जाता था और कभी खोई हुई गाय का पता या मुकदमे में सफलता के विषय मे पूछा जाता था। इन सव मामलो पर वह वडी वुद्धि से काम लेता था। मदाम डैविड नील को ऊचे सकरे मार्गों पर नदी पार करने के लिए, हुक मे अपने को वाघकर लटकती हुई चमड़े की रस्सियो पर झूलकर पार जाना पडता था। वह और उसका लडका एक ऊचे दर्रे पर वर्फ के तूफान मे फसकर कई दिनो तक वर्फ मे जकड गये और नीचे उतरने का रास्ता वना सकने तक वे भूख से अधमरे हो गये थे। वे डाकुओ से कई वार वाल-वाल वचे। किन्तु वह अपनी मौजी प्रकृति को सदैव वनाये रही तथा सारे खतरो और विपत्तियो की परवा न करके इन सारे अनुभवो को एक शानदार साहसिक यात्रा के

रूप मे देख रही थी, जिसमे उसे तिब्बत के गरीब जनसाधारण के निकट आने का अपूर्व अवसर प्राप्त हो रहा था। उसे केवल इतना ही भय था कि कभी ल्हासा पहुचने से पूर्व ही उसे पहचान न लिया जाय।

धार्मिक भिखारियो के वस्त्रो मे होने के कारण सन्देह से बचने के लिए उन्हे अधिकतर भोजन और दान मागना पडता था, किन्तु जब वे तिब्बत के भीतर पहुच गये तो वे रसद खरीदने लगे और कभी-कभी 'अपव्ययी भिखारियो' के समान, मदाम डैविड नील के ही शब्दो मे, 'सीरे की टिकिया, मेवे और ढेर-सा मक्खन' उडाने लगते थे। यह उसकी समस्त यात्राओ मे कम खर्च की यात्रा थी। यून्नान से ल्हासा तक चार महीने की पैदल यात्रा मे उन दोनो ने केवल १०० रु० खर्च किये।

वे ल्हासा मे बिना किसी का ध्यान आकर्षित किये नये वर्ष के उत्सव की भीड के साथ सरक गये। गरीब भिखारियो के एक झोपडे मे रहने का स्थान पाकर उन्होने अनुभव किया कि उनका प्रच्छन्न वेष सुरक्षित है। पैदल की लम्बी और कठिन यात्राओ के बाद मदाम डैविड नील ने समस्त उत्सवो मे सम्मिलित होकर तथा पवित्र नगरी के सारे दृश्य देखकर इसका पूरा लाभ उठाने का निश्चय किया और अपने दो मास के निवास मे वह पोटाला से लेकर नवनीत उत्सव तक प्रत्येक अवसर पर तिब्बती यात्रीदल के साथ जाती रही। यह साधारणतौर पर लद्दाखी समझी जाती थी और अपने अभिनेत्री के गुणो पर विश्वास करके, वह बाजार मे विचित्र दृश्य उपस्थित कर देती थी। अल्युमीनियम की उपहास योग्य कीमत लगाकर या मूर्खतापूर्ण बातें करके ल्हासा के अधिक गम्भीर ग्राहको को, पशुओ और घास के देश से आई ग्रामीण स्त्री के रूप में खूब हँसाती थी। यह कार्य वास्तव मे एक विजय ही थी, क्योकि उसने इसे ऐसे अवसर पर किया, जबकि एक सिपाही को अपनी ओर ध्यानपूर्वक और सन्देह से घूरते पाया।

वह ल्हासा से वैसे ही चुपचाप चल दी, जैसेकि वह आई थी, किन्तु उसने योगडन को मध्यवर्गीय तिब्बतियो की तरह टट्टू पर और नौकरो के साथ भेजा। यदि अब वे पकडें भी जाय तो कोई परवाह न

थी। चूकि वे ल्हासा से आ रहे थे, वहा को जा नही रहे थे, किसीने उनपर ध्यान नही दिया। ग्यान्त्सी मे वह तिब्बत-ब्रिटिश एजेन्ट डैविड मैक्डानल्ड से मिली और उसे तथा उसके साथियो को अपनी साहसिक यात्रा के वृत्तान्त और ल्हासा के अज्ञात भ्रमण से विस्मित कर दिया। मैकडानल्ड ने कहा, "उसकी अवस्था और डीलडौल की महिला के लिए यह आश्चर्य-जनक कार्य था।" वह बहुत दुर्बल मालूम होती थी और उसने जो सफलता प्राप्त की, उससे स्पष्ट था कि उसमे अटूट साहस और शक्ति भरी थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध मे मदाम डैविड नील ने चीन-तिब्बत सीमान्त पर अनेक वर्ष व्यतीत किये। उसे अनेक दुःखो और अभावो का सामना करना पड रहा था, क्योकि फ्रान्स से सम्पर्क कट जाने के कारण उसके पास धन की कमी हो गई थी।

वह बडी सूक्ष्मदर्शी थी और उसने चीन के सुदूर पश्चिमी क्षेत्र और सीमान्त देश पर किये जानेवाले छल-कपटो का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया। १६४६ ई० मे वह फ्रान्स मे अपने घर वेसे-आल्प्स को वापस लौटी और अस्सी वर्ष से अधिक अवस्था तक तिब्बती धर्म और साहित्य पर शान्ति-पूर्वक शोध-कार्य करती रही। उसने स्वय तो विजय अवश्य प्राप्त की, पर तिब्बत के द्वार अब भी बन्द है।

१० | ल्हासा-यात्रा का अन्तिम दौर

दिन भर की लम्बी यात्रा को जारी रखते हुए, हम ससार की उच्चतम और सुन्दरतम झीलो मे से एक यमद्रोकत्सो, नीलमणि झील या उच्च भूमि चरागाहो की झील के पास पहुंचे। यह ताजे पानी की झील १४,००० फुट से अधिक ऊंचाई पर है और हिमालय से होती हुई

६० मील के लगभग बहती है।

झील के किनारे नागरत्से ज़ोग के ऊचे किले और गाव के पास पहुचने पर रास्ते मे हमे एक आदमी मिला, जो पीठ पर थैला लादे और हाथ मे भाला लिये कूदता-फादता जा रहा था। वह तिब्बत का एक डाक-हरकारा था। वे पैदल ही यात्रा करते हैं और दौडते हुए सारा रास्ता तय करते है। भाला ही उनके पद का चिह्न है। पाच या छः मील बाद दूसरा आदमी डाक का थैला ले लेता है। समय के विरुद्ध होनेवाली यह झडी दौड रात-दिन ल्हासा और ग्यान्त्सी के मध्य चलती रहती है, जहा से डाक का कार्य भारत सरकार के अधीन हो जाता है। ज्योही हम हरकारे के पीछे घोडे पर चले, वह बिना रुके ही घूमा और तिब्बतियो की सभ्य अभ्यर्थना के रूप मे अपनी जीभ बाहर निकाली और हमे दौड के लिए ललकारा। वह था पैदल-डाक का थैला लिये और हमारा दल था घोडो की पीठ पर, फिर भी यह दौड बराबर-सी ही थी।

नागरत्से मे पहुचते ही हमने वज्र शूकरी के विषय मे पूछा। विदेश विभाग के कर्नल इलिया टाल्सटाय ने युद्ध के दौरान मे उससे अपनी भेंट के विषय मे बताया था, वह यमद्रोकत्सो के ऊपर पहाडी पर स्थित पुरुषो के मठ की पुजारिणी है और तिब्बत मे पवित्रतम महिला कही जाती है। दोर्जे फामो की अवतारस्वरूप वज्रशूकरी अपने को शूकरी के स्वरूप मे बदलने की शक्ति रखनेवाली समझी जाती है।

कथा प्रचलित है कि प्राचीन वज्र शूकरिया अब भी शत्रु-सेना पर आक्रमण करती थी, अपने को ही नही, बल्कि मठ के सम्पूर्ण लामाओ को शूकरो के रूप मे बदल देती थी। इससे आक्रमणकारी इतने डर जाते थे कि उन्हे भागते ही बनता था। जो हो, इस प्रकार की कथा प्रचलित है। तिब्बत विचित्र दन्त-कथाओं से परिपूर्ण है और वज्रशूकरी की कथा सबसे विचित्र है। दोर्जे फामो ही अकेली तिब्बती महिला है, जिसे पालकी पर सवारी की अनुमति है, और केवल उसे ही दलाई लामा के हाथ के स्पर्श से आशीर्वाद मिलता है, शेष सभी स्त्रियो और साधारण जनता को छोटे डण्डे के सिरे पर बंधे लाल फुदने से छूकर आशीर्वाद

दिया जाता है।

जब सन् १९४२ ई० मे टाल्सटाय नागरत्से आया, उस समय वर्तमान अवतार की अवस्था ५ वर्ष थी। अब वह १३ वर्ष की है। हम उस छोटी पुजारिन से मिलने और उसका फिल्म लेने के लिए अत्यन्त उत्सुक थे, परन्तु उसका मठ सैम्डन गोम्पा, जो नागरत्से से पाच या छः मील था, बाढो के कारण दुर्गम हो गया था। इसलिए हमे वज्रशूकरी के विषय मे बताई गई अविश्वसनीय और आश्चर्यजनक कथाओ से और त्रयोदश-वर्षीय पुजारिणी के भावी जीवन के विषय मे कही गई भविष्य-वाणियों से सन्तुष्ट होना पडा। हमे बताया गया कि तिब्बत की मुख्य दैवी वाणी भूत और भविष्य का दर्शन करके शीघ्र घोषणा करनेवाली थी कि वही वास्तविक दोर्जे-फामो थी या तिब्बत के किसी अन्य भाग मे कोई और भिक्षुणी, मौलिक पवित्र शूकरी का सत्य अवतार है, जिसे वर्तमान अधिकारी का स्थान लेना चाहिए।

आकर्षक यमद्रोकत्सो के तट पर सारे दिन चलकर हम पेडी ग्राम मे पहुचे, जहा हमने रात बिताई। जब हम अगले दिन पेडी ग्राम से सवार हुए, सूर्य कुछ क्षणो के लिए चमका और हमने असख्य गुल पक्षी और कलगीदार हस देखे। जब हमारा कारवा एक सोता पार करने को था, झील के तट पर हमने देखा कि पानी, एक विचित्र प्रकार की मछलियो से, जो अडे देने के लिए प्रवाह के ऊपर की ओर जा रही थी, काला हो रहा था। हमारा रसोइया नोर्बू सन्ध्या के भोजन को ध्यान मे रखकर, नदी मे उतरा और कुछ ही मिनटो मे खाली हाथो से ही सोलह सुन्दर मछलिया पकड लाया, जो लबाई मे १० से १४ इच तक थी। झील के आसपास की बस्तिया यमद्रोकत्सो की मछलियो पर अपना निर्वाह सरलता से कर सकती है पर तिब्बत मे शिकार करने और खान खोदने के समान मछली पकडना भी धार्मिक कारणो से निषिद्ध है। सर चार्ल्स बैल के मतानुसार मछली, सूअर के मास, कुछ मुर्गियो और अडो मे दुष्ट अपराधो के कारण 'पाप की वटी' होने का विश्वास किया जाता है। साधारणत: अनेक जीवो के विनाश रूपी यह अपराध पशुओ द्वारा पिछले जन्म मे किये गए होते हैं। तिब्बती 'पाप की वटी' वाले किसी

भी भोजन को हेय समझते हैं, क्योकि वे विश्वास करते हैं कि ऐसा पाप उनपर दुर्भाग्य लायेगा और गम्भीर आध्यात्मिक हानि पहुचायेगा। पवित्र नगर के मार्ग पर हमारा तीसरा और अन्तिम दर्रा १६,२०० फुट ऊचा न्यापसो ला था, जो यमद्रोकत्सो को महान् ब्रह्मपुत्र की घाटी से पृथक करता है। बादलो के बीच न्यापसो की चोटी पर हम इस अत्यन्त मोहक झील की ओर देखने के लिए रुके। कुछ क्षणो के लिए सूरज चमका, जिससे नील-हरित जल उद्दीप्त हो उठा और सुशोभित पर्वत शृ खलाओ के वृत मे जडे बहुमूल्य रत्न के समान दिखाई दिया।

दर्रे की चोटी पर प्रार्थना झडो के समीप, याको के एक कारवा के समीप से गुजरते हुए हमने बादलो के मध्य से नीचे बहती ब्रह्मपुत्र को देखा। नीचे उतरने की पगडडी इतनी ढलवा और इस बुरी तरह टूटी-फूटी थी कि हम अपने हाफते टट्टुओ को आराम देने के लिए उतर पडे। फिसलनी घास और चट्टानो के बीच लडखडाते हम ब्रह्मपुत्र की ओर नीचे उतरने लगे, जो ४००० फुट से अधिक निचाई पर घूमती, बल खाती, जा रही थी।

सिगलाकेनजग मे, जो ब्रह्मपुत्र के दक्षिणी किनारे पर बसा है, हमने एक तिब्बती झोपडी मे एक और रात काटी। तब हमने खाल की नाव मे चढकर आराम से नदी पार करने का आनन्द उठाया। हमारी दो छोटी नावें सरपत की खपच्चियो के ढाचे पर याक की खाल मढकर बनाई गई थी। तिब्बती इन चपटे तले वाली नावो को कोबो कहते हैं। वे १० फुट लम्बी और चपटे सिरे पर ६ फुट चौडी और दूसरे सिरे पर जहा डाड चलानेवाला बैठता है, दो फुट चौडी होती है। हमारी कोबो, जो हमारे सामान को और हमे बडी सरलता से ले जा रही थी, चिपटे सिरो पर एक साथ बाध दी गई थी। उनके किनारे लगभग तीन फुट ऊचे थे और याक की खाल के मजबूत तस्मो से बधे थे। डाड भी वैसे ही असाधारण थे जैसी कि नावें। देखने मे देवदार के जैसे लम्बे डडे पर लकडी के दो टुकडे बधे थे, जो थापी का काम देते थे।

प्रत्येक हलकी और विचित्र नाव बीस लद्दू पशुओ के बोझे, जिसका भार लगभग एक टन होगा, सरलता से ले जा सकती है। हमारी नावो

मे सामान के अतिरिक्त आठ व्यक्ति सिमटे बैठे थे और दो कोबो—नाव चालक—तो थे ही। हमे धारा के मध्य मे रखने का प्रयत्न करते हुए वे एक नौका-गीत गा रहे थे, जो हमारे पश्चिमी कानो को अजीब और कठोर लगता था। हमने अपनी वहनीय मशीन द्वारा उस गीत को रिकार्ड कर लिया। बाद मे डैंडी ने बताया कि नाविको के गीत के साथ इस नौका-यात्रा का उनका विवरण तिब्बत से भेजे गये प्रसारणो में से अत्यन्त लोकप्रिय सिद्ध हुआ।

ल्हासा यात्रा के अन्तिम दौरे के लिए हमे ब्रह्मपुत्र चुशूल तक १६ मील नीचे की ओर जाना था। खाल की नावो मे हम लगभग १० मील प्रति घन्टे की चाल से जा रहे थे।

चुशूल के दृष्टिगोचर होने से पहले हम ऊची पहाडियो के बीच मे तंग रास्ते से गुजरे। एक के ऊपर एक मठ बना था और नदी के राक्षसो का शमन करने के लिए अनेको बुद्ध मूर्तिया चट्टानो पर चित्रित थी। सकरा मार्ग भी झडो से भरा था। कुछ पक्तिवार नदी के बाहर गढे हुए थे, ये निश्चय ही नावो को दुष्ट आत्माओ से बचाने के लिए और नाविको को जलमग्न शिलाओ से बचकर चलने के लिए थे।

पथरीले अन्तरीप से घूमकर हम चुशूल पहुच गये। इसी स्थान पर क्यी चू गरजती हुई ब्रह्मपुत्र मे गिरती है। हमारे कोबो को, हमे धारा के चंगुल से बचाने के लिए घोर प्रयत्न करना पडा, किन्तु जोरदार चिल्लाहट और नौका-गीत की लय की सहायता से वे सफल हुए। तिब्बती नाविक गरजती हुई धारा के विपरीत, ऊपर को, अपनी नाव नही खे सकते। जब हम चुशूल पहुच गये, कोबो अपनी खाल की नावे नदी तट से घर वापस ले गये। हरएक नाविक एक पालतू भेड को नदी की धारा की ओर यात्रा मे साथ ले जाता है। वापसी यात्रा मे भेड नाविक के व्यक्तिगत सामान को पीठ पर लेजाती है। ससार मे और कही भी मैंने भेड को पालतू और लद्दू दोनो प्रकार से प्रयुक्त होते नही देखा।

चुशूल से ल्हासा केवल ४० मील था और हम उस दूरी को दो दिन मे सरलता से तय कर लेने की आशा रखते थे। किन्तु क्यी चू मे इन दिनो इतनी अधिक बाढ थी, जैसी पिछले चार वर्षों से नही आई।

कुछ समय हम घाटी के ऊचे ढालो पर ठहर कर बाढ से बचते रहे। कई बार हमे पानी से होकर ही चलना पडा। वे बडे धोखे के क्षण थे जबकि हमारे गधे, जिनके लम्बे कानो तक पानी छू रहा, अपना बोझ आधा पानी के अन्दर और आधा पानी के बाहर लिये चल रहे थे।

हमे भोजन के बक्सो की चिन्ता नही थी, किन्तु अपने बहुमूल्य फिल्म और रिकार्डिंग के सामान को सूखा रखने के लिए हमने चार अतिरिक्त कुली किराये पर किये। नदी की धारा मे बिना पतलून के चलते हुए वे भी वैसे ही हास्यास्पद लग रहे थे, जैसे कि गधे।

जगमे मे एक किसान के घर मे आराम से रात बिता कर सुबह के समय हमे पता चला कि आगे चलना और भी कठिन है। कारवा को कई बार उतारना पडा, खराब स्थानो से हमारे माल-असबाब को पार करने मे १० कुली लगे। एक स्थल पर पानी इतना गहरा था कि छोटे गधो को तैरना पडा और कुलियो तक को बोझ सूखा रखने मे बडी कठिनता हुई।

यह थी ल्हासा की मुख्य सडक, तिब्बत को जानेवाला महान् मार्ग, जहा वह पूरी तौर से डूबा नही था, वहा चट्टान के पास से तग रास्ता रह गया था। वाशिंगटन को जानेवाली सडको से कितना वैषम्य है, किन्तु यह बात है कि तिब्बत मे प्रत्येक वस्तु मौलिक रूप मे सुरक्षित है।

सन्ध्या डूबने के समय, जबकि हम छप-छप करते ही जा रहे थे, हमे अकस्मात अपने लक्ष्य ल्हासा की झाकी मिली—बहुत दूर, गहरे पर्वतो की श्रृखला के नीचे, सूर्यास्त मे चमकते हुए। वह पोटाला नगर से ऊपर सिर उठाये था। इसकी स्वर्णिम छतें दूर स्थित प्रकाश-स्तम्भ की तरह सकेत कर रही थी। बडी उत्तेजना के साथ हम उपजाऊ घाटी को पार करते जा रहे थे और सन्ध्या की वायु पकते हुए जौ की सुगन्ध से पूर्ण थी। किन्तु ल्हासा की घाटी पर अन्धकार शीघ्रता से बढता जा रहा था। हमारे साथियो ने सलाह दी कि दलाई लामा की राजधानी मे जहा पहुचने के लिए हम आधी दुनिया पार करके आये थे, प्रवेश से पूर्व हमे एक रात और रुक जाना चाहिए।

हमारे और ल्हासा के बीच केवल ५ या ६ मील का फासला था।

हम इतने बैचेन थे कि नीद का नाम न था। मैं उस रात देर तक जागा हुआ उन सबके विषय मे सोचता रहा, जो निमन्त्रण पाकर छद्मवेष मे या १९०४ ई० के यगहस्बैड के दल के साथ आये थे। उनके अन्दर भी दूर से पोटाला को देखकर और यह सोचकर कि कुछ और घण्टे चलकर वे अपनी लम्बी मजिल पर पहुच जायगे, हमारे जैसे ही आवेग उत्पन्न हुए होगे, विशेष रूप से मुझे एबे हक की, जो मदाम डैविड नील के ही देश का निवासी था, याद आई। वह छद्मवेष मे नही था और न आमन्त्रित था, किन्तु उत्तरी चीन से अत्यन्त कठिन और संकटपूर्ण १८ महीने की यात्रा के उपरान्त वह १८४६ मे जनवरी के अन्त मे ल्हासा पहुचा। हक अत्यन्त प्रभावित हुआ। उसने लिखा है—"सूर्य लगभग छिप चुका था, जब हम पर्वतो के अगणित मोड से निकले, हमने अपने को एक विस्तृत मैदान मे पाया और अपनी दाहिनी ओर बौद्ध ससार की राजधानी ल्हासा को देखा। लम्बे वृक्षो का समूह, जो हरी दीवार से नगर को घेरे है, अपनी चपटी छतो और मीनारो के साथ ऊचे सफेद मकान, अपनी सुनहरी छतो के साथ अगणित मन्दिर, पोटाला, जिसमे सबसे ऊपर दलाई लामा का महत्व सिद्ध होता है, ये सारी विशेषताए ल्हासा को एक शानदार और प्रभावशाली रूप प्रदान करती हैं। नगर के प्रवेश-द्वार पर हमे कुछ मगोल मिले, जिनसे हम मार्ग में परिचित हो गये थे और जो हमसे कई दिन पूर्व पहुंच गये थे। उन्होने हमे अपने साथ उन निवास-स्थानो मे आने को आमन्त्रित किया, जिनको उन्होने मित्रतापूर्वक हमारे लिए तैयार किया था। यह अब १८४६ की २९ जनवरी थी और हमे काले पानी की घाटी से चले १८ महीने हो चुके थे।"

रास्ते मे १८ महीने! यह व्यक्ति है, जिसने घोर श्रम के उपरान्त वर्जित नगर को देखने का अधिकार कमाया है। उसकी कथा दिलचस्प है।

एवेरिस्ते रैंजिस हक १८४० के लगभग मगोलिया मे कैथोलिक मिशन केन्द्र मे एक लजारिस्ट पादरी नियुक्त किया गया। उसके विश्वास-पात्र कुछ मगोल थे, जिन्होने धर्म-परिवर्तन कर लिया था। हक

ने वडी लगन से बौद्ध धर्म और तिब्बती भाषा का अध्ययन किया तथा मगोलिया और तिब्बत के लामाओ मे धार्मिक प्रचार की योजना वनाई, किन्तु वह उनके धर्म-परिवर्तन मे सफलता नही प्राप्त कर सका क्योकि अधिकतर लामा, जिनसे वह मिला, तिब्बत को ही समस्त धार्मिक प्रकाश के उद्गम का स्थान समझते थे। अपने एक साथी लजारिस्ट फादर जोसेफ गैवे और एक भक्त, धर्म परिवर्तित मगोल के साथ हक ने उसी निर्धारित मार्ग का अनुसरण किया, जो ऐतिहासिक समयो से पीपिंग और मचूरिया को ल्हासा से मिलाता है। यह एक लबा मार्ग है—यदि इसे मार्ग का नाम दिया जाय—जिसपर वहुत-सी प्राकृतिक रुकावटो और कठिनाइओ का सामना करना पडता है, किन्तु यह सदा से ससार का एक प्रसिद्ध कारवा-मार्ग रहा है। चीन के सीमान्त नगर सिनिंग से हक कोकोनार गया। कोकोनूर और कुम बुम मठ से कुछ दूर वह और उसके साथी पाच महीने—मई से सितम्बर तक—ल्हासा जानेवाले कारवा की प्रतीक्षा मे रुके रहे। आतिथ्य-शून्य दुर्गम प्रदेश का एक हजार मील का विस्तार, जहा डाकू ताक मे रहते है, भयानक रूप मे सामने था और एक छोटी पार्टी के लिए अकेले जाना सुरक्षित नही था।

हक तिब्बती राजदूत के कारवा मे, जो पीकिंग से ल्हासा लौट रहा था, सम्मिलित हो गया। यह कारवा अत्यन्त विशाल था—२००० आदमी, १५ हजार याक, १२ हजार घोडे और इतने ही ऊट। तिब्बती राजदूत दो खच्चरो के वीच पालकी मे ले जाया जा रहा था। नवम्बर के मध्य मे कारवा कोकोनोर के चरागाही प्रदेश से चला और तीव्र वायु वाले वीरान प्रदेशो से होता आगे वढा तथा गहरे वर्फ और कठोर शीत मे ऊचे पर्वतो की श्रृखलाए पार की। फादर गेबे शीत मे जम कर मुर्दा-सा हो गया, पर हक अधिक मजबूत धात का बना था। दृढता-पूर्वक असहनीय विपत्तियो को झेलकर उसने अन्तिम दर्रा ताग ला पार किया और क्रमश अपर ब्रह्मपुत्र की अधिक सरल घाटी मे नीचे उतरा।

मदाम हक भी मे डैविड नील की तरह नव वर्ष के उत्सवो के दिनो मे पहुचा। उसे ल्हासा मे अपने दो महीने के निवास मे तिब्बतियो से किसी विरोध या कटुता का सामना नही करना पडा। तिब्बती रीजेन्ट ने, जो

एक बुद्धिमान और चतुर मनुष्य था, धर्म-शील व्यक्ति की हैसियत से हक का सम्मान-सहित स्वागत किया और उसे मित्र बनाया, किन्तु ल्हासा मे चीनी रेजीडेट अमबन ने जिद की कि हक को देश से तुरन्त बाहर चले जाना चाहिए। तोभी हक और गेबे को असम्मान-पूर्वक नही निकाला गया। उन्होने मार्च मे, चीनी सेनाधिकारी के कारवा के साथ ल्हासा छोडा, जो ल्हासा मे कई वर्षो तक एक अधिकारी के रूप मे काम करने के उपरान्त चीन लौट रहा था। पहाडी दर्रों से होकर यह एक लम्बा और कष्टदायक सफर था और एक अवसर पर गहरे बर्फ मे रास्ते बनाने के लिए तीन दिन तक याको को जबरदस्ती आगे बढाया गया, तब किसी प्रकार कारवा आगे वढ सका।

पादरी की ल्हासा की इस सफल यात्रा ने यूरोप मे बडी सनसनी उत्पन्न की। यह उन्नीसवी सदी मे एक महान तिब्बती कारनामा गिना गया।

११ | ल्हासा में हमारे शुरू के दिन

तिब्बत मे यात्रा को पूर्वाह्न मे समाप्त करना सद्व्यवहार और सौभाग्यपूर्ण समझा जाता है। यही कारण था कि हम ल्हासा से सात मील दूर गाव मे रात के लिए रुके। यद्यपि ऊबड़-खाबड हिमालय पर २३ दिनतक कठोर यात्रा करने के उपरान्त हम अपने आखिरी मजिल पर पहुचने के लिए व्याकुल थे।

अगले दिन प्रात:काल ही हमारे २२ खच्चरो की रेल वर्षा मे चल पडी। कलकत्ता से २८ दिन की यात्रा मे हमारा एक ही दिन बिना वर्षा के वीता था। चट्टानो पर खोदी हुई या चित्रित अगणित बुद्ध मूर्तियो को पार करते हुए हमने एक पहाड का चक्कर लिया और उसके

नीचे लम्बी दीवार के पास पहुचे,जिमके पीछे निचली ढलान से ऊपर की
ओर पत्थर की इमारतो का एक विशाल समूह तह-पर-तह लगा जैसा
दीख रहा था। यह ड्रेमाग—ससार का सबसे विशाल मठ—था, जिसमे
दस हजार भिक्षु रहते हैं।

जबकि हम लामा धर्म के विशाल केन्द्र के पास से घोडे पर
सवार गुजर रहे थे, मार्ग पर कुछ दूर सामने दो आदमी घोडे से उतरे
और हमारी ओर पैदल बढे। स्वाभाविक तौर पर हम भी उतर पडे।
उनमे एक तिब्बती अधिकारी लगता था और दूसरा सहायक। चमकीले
लाल और गुलाबी रेशम के कपडे पहने, गहरा पीला, उलटे कटोरे के
नमूने का टोप लगाये उस अधिकारी ने अटकती अग्रेजी मे दोर्जे चागवाव
के नाम से अपना परिचय दिया। उसने घोषित किया कि परम पवित्र
दलाई लामा ने 'वर्जित' नगर मे हमारी निवास की अवधि के लिए उसे
हमारा आतिथेय बनने का गौरव दिया है।

दोर्जे ने स्पष्ट किया कि वह अग्रेजी थोडी ही जानता है, जिसे
उसने अपने स्वर्गीय पिता से सीखा था। पिता उन चार लडको मे से
थे, जिन्होने इग्लैड के रग्बी स्कूल मे शिक्षा प्राप्त की थी। केवल यही
ऐसे तिब्बती थे, जो कभी शिक्षा पाने यूरोप गये थे। यह इस प्रकार
हुआ। जब तेरहवें दलाई लामा अपने देश पर आक्रमणकारी चीनियो
से बचने के लिए दार्जिलिग मे स्वय- स्वीकृत निष्कासन के कारण रहते
थे, सर चार्ल्स बैल ने उन्हे सलाह दी कि वे कुछ तिब्बती लडको को
शिक्षा प्राप्ति के लिए इग्लैड भेजे। परम पवित्र महोदय ने यह विचार
अच्छा समझा, इसलिए सन् १९१२ ई० मे तिब्बत लौटने पर उन्होने
उच्च मध्य वर्ग के १२ से १५ वर्ष की अवस्था के चार लडके छाटे।
तिब्बत मे काम करनेवाले एक अग्रेज अधिकारी और एक तिब्बती
अधिकारी और उसकी पत्नी के साथ वे इग्लैड गये और रग्बी के प्रसिद्ध
स्कूल मे १९१३ मे भरती हो गये। एक को खनिज इजीनियरी सीखनी
थी, दूसरा सैनिक जीवन के लिए चुना गया था, तीसरे को बिजली की
इजीनियरी पढनी थी और चौथे को तार द्वारा समाचार भेजना तथा
सर्वेक्षण सीखना था। इन तिब्बतियो ने जो थोडे वर्ष इग्लैड मे व्यतीत

किये, वे उनके लिए इन क्षेत्रो मे निपुण होने के लिए पर्याप्त नही थे, विशेष रूप से जबकि पहले अंग्रेजी भाषा का ही ज्ञान प्राप्त करना था। लेकिन यह हर्ष की बात है कि उन्होने वहा अनेक मित्र बनाये और खेल-कूद तथा अपने अंग्रेज सहपाठियो की हँसी-खुशी मे खूब सम्मिलित हुए। वह लडका, जिसने खनिज इजीनियरी पढी थी, घर पहुचकर सुवर्ण तथा खनिजो के अनुसन्धान मे लगा। किन्तु जैसे ही उसने खुदाई आरम्भ की, समीपस्थ मठ के पुजारी ने आपत्ति की और पत्थरो को ज्यो-का-त्यो करके चले जाने का हठ किया, क्योकि स्थानीय आत्माओ को बाधा हो रही थी। अनेक निष्फल प्रयत्नो के वाद उसने खान खोदना छोड़ दिया और सरकारी काम मे लग गया।

कुछ लोगो ने बताया कि अन्य तीन रग्बी के छात्र अपेक्षाकृत छोटी ही अवस्था मे, रहस्यपूर्ण परिस्थितियों मे मर गये। शायद अधिक कट्टर लामाओ ने नवीन-स्फुरित पश्चिमी शिक्षा द्वारा अपने पवित्र देश का अपवित्र होना स्वीकार नही किया। यह प्रयोग दूसरी वार फिर कभी नही किया गया। हम रग्बी चौकडे के एकमात्र जीवित व्यक्ति से शीघ्र ही मिलनेवाले थे।

हमने ल्हासा से होकर बहनेवाली क्यी चू नदी को लोहे के एक आधुनिक पुल से होकर पार किया, जो मन्दिर चैत्य और मठो की मध्य-कालीन पृष्ठभूमि मे विचित्र रूप से वेमेल लगता था। १९३० के अन्तिम वर्षों मे तिव्वत के एक अत्यन्त समृद्ध और एक अत्यन्त प्रगतिशील ज्येष्ठ राजनीतिज्ञ सेरोग शापे की हठ के कारण वनाये गए इस पुल के लिए, कुली और खच्चरो द्वारा पहाड़ो के पार एक-एक शहतीर और एक-एक पेंच करके लाये गए। जव यह सामान ल्हासा मे एकत्र हो गया तो सेरौंग शापे ने इसके निर्माण का निरीक्षण किया।

पुल यात्रियो की भीड से पूर्ण था, जो पवित्र नगर मे उन दिनो चल रहे वार्षिक नृत्योत्सव की समाप्ति के मोहक कार्यक्रम को देखने जा रहे थे। तिव्वत के दैवी राजा का हर एक भक्त वर्ष मे कम-से-कम ल्हासा की एक वार यात्रा अवश्य करता है, साधारणतया किसी उत्सव के समय जैसे ग्रीष्म ऋतु का नृत्य-समारोह या फरवरी मे होनेवाले तीन सप्ताह के

नवीन वर्ष के उत्सव पर। इन पूजा के लिए आनेवालो मे ऐसे श्रद्धालु भक्त भी होते है, जो 'जानुयात्री' कहलाते है। वे सम्पूर्ण यात्रा अपने घर से राजधानी तक अपने फटे और रक्तरजित घुटनो पर ही करते है। कुछ ऐसे यात्री होते है, जो पग-पग पर अपने को पृथ्वी पर लिटाते है और हर मील को अपने शरीर से इची कीडे की तरह नापते चलते है। इनमे से कुछ पवित्र और कष्ट-पूर्ण यात्राओ मे तीन वर्ष तक लग जाते है।

जब हम पार्गो कलिंग-पश्चिमी फाटक (एक मेहराबदार रास्ता, जो एक प्रभावशाली चैत्य के समीप बना था) पार कर रहे थे, मेरी नाडी फडक रही थी। अब हम सीधे पोटाला के नीचे पहुच गये थे। यह कथा-प्रसिद्ध और स्मरणीय भवन ल्हासा के आसपास समस्त भूखण्ड पर आधिपत्य-सा किये है और नगर के या समीपस्थ देहात के किसी भी भाग से क्यो न देखा जाय, बडा आकर्षक स्वरूप प्रस्तुत करता है। स्वर्ण की छतवाले पोटाला—धूप मे चमकते मदिर और मठ से युक्त ल्हासा, अपने चित्र-विचित्र आकर्षक वस्त्र धारण किये जनसमुदाय के साथ मुझे किसी मध्यकालीन हस्तलिखित पुस्तक का जादू से जीवित किया हुआ सुन्दर चित्र-सा लगता था। सुदूर स्थानो के यात्री के रूप मे मैंने अनुभव किया कि मैं इन्द्रधनुष के सिरे पर दीखनेवाले सुवर्ण कलश को पाने के अत्यन्त ही निकट पहुच गया हूं।

अपनी ३० वर्ष की पुरानी लालसा की पूर्ति पर प्रसन्न और दीप्तिमान डैडी ने कहा, "इसके वर्णन के लिए शब्द ही नही है।"

दृश्यो के विचार से, भौगोलिक दृष्टि से और सास्कृतिक रूप से ल्हासा सचमुच इस ससार से बाहर की वस्तु है। एक हरी-भरी घाटी के सिरे पर समुद्र की सतह से केवल १२,००० फुट ऊचाई पर, जो तिब्बत के लिए नीचा ही है, स्थित यह नगर ऊचे पर्वतो से घिरा हुआ है, जिनमे सबसे ऊचा पर्वत १८,००० फुट तक है।

गहरे नीले आकाश को छूती हुई शानदार चोटियो पर नई बर्फ गर्मियो मे भी हर दिन सवेरे देखी जा सकती है। इस शोभा को बढाने के लिए पहाडो पर ऊपर और नीचे लाल और सफेद मठ हैं, जिनमे से

कुछ चट्टानो पर गीध के घौंसले के समान टगे हुए दोलायमान से लगते है।

दोर्जे अब हमे नगर के मध्य से दूर, बाढ से भरे अनेक चरागाहों के पार ल्हासा-निवास की अवधि में हमारे भावी घर की ओर ले जा रहा था। वह हमे ट्रेडा लिंगा नाम के सरकारी निवास मे ले गया, जो दक्षिणी भाग मे क्यी चू के बिल्कुल तट पर था। वहा हमे अपने और पशुओ के लिए पर्याप्त स्थान और आराम मिला। यहां पर जीना नही चढना था, पर हम उसके काफी अभ्यस्त हो चुके थे। हमारे क्वार्टर विस्तृत, स्वच्छ और अनेक खुली खिडकियो के कारण, जो पर्दो से ढकी थी, खूब हवादार थे।

जिस समय हम अपनी चारपाइयां ठीक करने और निजी सामान को अलग करने मे व्यस्त थे, दोर्जे ने जाने की अनुमति चाही। वह गया और आधे घटे मे छः नौकरो के साथ जो शासकीय भेंटो से लदे थे, लौटा। भेंट मे खाद्य पदार्थ थे, जिन्हे हमने बहुत पसन्द किया, क्योकि हम डिब्बे मे बन्द राशन को खाते-खाते बहुत उकता गये थे। इस उदार भेंट मे नई मारी हुई भेड, जौ के अनेक बोरे, बड़ी-बडी तिब्बती मूली, गोभी और अडो से लबालब भरे बडे-बड़े थाल, जो सौभाग्य से बहुत सडे नही थे, सम्मिलित थे। नहाने के टीन के टब से, जो दोर्जे ने अपने घर से भेजा, हम और भी प्रसन्न हुए। ग्यान्त्सी मे पिछली बार टब में स्नान करने के उपरान्त हम एक सप्ताह से अधिक से यात्रा पर ही थे।

ल्हासा मे यह कठोर नियम है कि आगन्तुक को किसी भी विशिष्ट व्यक्ति से मिलने से पूर्व दलाई लामा की सेवा में उपस्थित होना चाहिए। किन्तु यह भी प्रथा है कि उसे उस सभा भवन मे, जहां तिब्बताधीश चीन, भूटान सिक्किम, नैपाल और भारत या अन्य समीपस्थ बौद्ध देशो से आनेवाले यात्रियो को आशीर्वाद देते हैं, प्रवेश की अनुमति मिलने से पूर्व नगर मे कम-से-कम तीन दिन अवश्य व्यतीत हो जाने चाहिए। तिब्बत के इतिहास में पहली बार हमारे लिए इस नियम का अपवाद किया गया।

हम ग्रीष्मोत्सव की समाप्ति के पहले दिन वहां पहुचे थे। नाना-

ब्दियो से अपरिवर्तित यह मध्य एशियायी कौतुक, इस उत्सव के रूप मे प्रत्येक तिब्बती वर्ष के सातवे महीने के प्रथम सप्ताह मे मनाया जाता है। वास्तविक चरमोत्कर्ष अन्तिम दिन होता है, जब ल्हासा की समस्त जनता, सभी अधिकारी, उनके परिवार, सेना और जन-साधारण को दलाई लामा निमन्त्रित करते है। ल्हासा के अधिकारी हमे उस अपूर्व समारोह से वचित नही करना चाहते थे। इसलिए, एक बार, परम्परा और रीति-रिवाजो से बधे इस देश मे उन्होने अपवाद करने का निश्चय किया। लाल और सुनहरे वस्त्र पहने, हाफता हुआ दूत समाचार लाया कि हमे दलाई लामा के ग्रीष्म-निवास नोर्बू लिगा—रत्नोद्यान—मे जाना है। ल्हासा मे ग्रीष्मोत्सव का अन्तिम दिन प्रकाश और चमक के साथ उदय हुआ और हमारी रगीन फिल्म के लिए सूर्य का प्रकाश पर्याप्त था। प्रात काल ही हम नोर्बू लिगा जानेवाले तिब्बती जनसमूह के दो मील लम्बे जलूस मे सम्मिलित हो गये। हम ऊचे पोटाला के समीप से घोडे पर गुजरे और थोडी-थोडी देर बाद रग-विरगे जन-समुदाय की उनकी चमकीली और अनोखी पोशाक मे फिल्म के लिए उतरते जाते थे। हमने फिल्म के लिए इनसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति आजतक नही देखे थे। तिब्बती अधिकारी और उनकी पत्निया बडे सुसज्जित घोडो और खच्चरो पर सवार थे, मनुष्य लहराते हुए वस्त्रो मे थे और उलटी तश्तरी के नमूने के टोप लगाये थे। उनके रेशमी कपडो की वर्ण-योजना उनके पद के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार की थी, कुछ सुनहरे और नीले, कुछ नारगी और लाल। उनकी पत्निया, जो पीछे थी, लम्बी नीली रेशमी पोशाक धारण किये हुए थी, और हरा, नीला टोप लगाये हुए थी जिसके आगे, ऊचाई पर सूर्य की तीव्र किरणो से उनके चेहरे के रग की सुरक्षा के लिए, १२इच का किनारा लगा था। कुछ स्त्रिया अपने सिरो पर फीरोजो और मूगो से जडे लकडी के चौखटे धारण किये थी। इन चौखटो पर जो बारहसिंगे के सीगो के समान दीखते थे, वे अपने लबे, सीधे बालो को सवारे हुए थी। साधारण नगर-निवासी, पैदल चलते हुए, कम रगीन नही थे, यद्यपि उनके वस्त्र वैसे शानदार नही थे, पर कम चमकदार नही थे। कुछ व्यक्ति बडी-बडी फर की टोपी लगाये थे,

जो शताब्दियो से मगोल पोशाक का विशिष्ट चिह्न है और बहुत-से लोग अजीब तिब्बती कपडे के बूट, जिनका सपाट तला याक की खाल का था, पहने थे।

कभी-कभी हमे फेरीवाले भी मिल जाते थे, जो याक के पनीर के सख्त गुल्ले, वर्जीनिया १० के लेबुल वाली एक साथ बधी तीस या चालीस सिगरेट की लडी और भारत की बनी सख्त मिश्री लिये थे। हर १० या १५ मिनट बाद प्रार्थना-चक्र घुमाते और दान मागते भिखारी हमारे पास पहुच जाते थे। बौद्ध देशो मे भीख मागकर निर्वाह करना भी जीवन का एक नियमित ढग है। भिखारी को दान से मना करना अपने ऊपर शाप लेना है।

नोर्बू लिगा के प्रवेशद्वार के दोनो ओर दो पत्थर के अजगर बने है। बारीक खुदाई के कामवाले मेहराबदार फाटक से निकलकर हम चमकदार फूलो और चिनार के वृक्षो के बाग मे पहुचे। तिब्बतियो की घनी भीड़ १०० वर्गफुट के एक खुले चबूतरे के चारो ओर एकत्र थी। यह मच, गहरे रगो से रगे एक विशाल छत जैसे चंदोवे के द्वारा सूर्य की धूप से सुरक्षित था। एक नाटक, जो उतना ही पुराना था, जितना कि स्वयं तिब्बत, झाझ और ढोल की धुन के साथ खेला जा रहा था।

हमारा पथप्रदर्शक दोर्जे चागबाबा हमें भीड के बीच से मच के दूसरे सिरे पर सम्मान के स्थान पर ले गया। वहा पर शामियाने के नीचे लाल, पीले और नीले रेशम से ढके दीवानों पर हम लोग बैठे। हम दलाई लामा से केवल ४० फुट की दूरी पर थे, किन्तु अपने स्थानो पर बैठते समय हमे यह सावधानी रखनी थी कि उनकी नजर हमपर न पडे, क्योकि जबतक धर्माधिष्ठाता सम्राट द्वारा हमारा स्वागत न हो जाय, हम रीति के अनुसार उपस्थित नही थे। हमारी बाई ओर निकट के चबूतरे पर उच्च लामाओ के समूह थे। अगले चबूतरे पर दलाई लामा और उनके साथी थे, जो एक पर्दे द्वारा हमारी दृष्टि से ओझल थे, किन्तु हम दलाई लामा की माता, भाई और बहन को, जो हमसे कुछ आडी रेखा मे बैठे थे, देख सकते थे। दलाई लामा के बाई ओर नौ अन्तरग मन्त्रियो का स्थान

था, जो चमचमाते पीले रेशमी चोगे और लाल टोप पहने थे। शेष स्थानो पर अन्य मन्त्री और उच्च राजकीय कर्मचारी बैठे हुए थे। मच के पीछे और दोनो ओर सिपाही तथा सामान्य जन खडे थे।

हमारे सामने एक के बाद दूसरे अभिनेता नाचते और गाते थे तथा अपनी प्राचीन कथाओ का अभिनय करते थे। वे मच पर आते और चले जाते थे तथा दृश्य पुराने चीनी नाटको की तरह, विना अक-मध्यवर्ती पर्दों के बदलते रहते थे। कथानक इतना त्वरित और सश्लिष्ट था कि हमारे विदेश विभाग के मेजबान भी उसे पूर्णरूप से समझने मे असमर्थ थे। किन्तु वे उस नाटक से पूर्ण परिचित थे, जो सुवह सात वजे से शाम को पाच वजे तक विना रुके १० घटे चलता रहा तथा हमे वता सके कि वह एक मुसलमान बादशाह और अवतारधारी बुद्ध के विषय मे था। वादशाह ने जीवित बुद्ध को मारने के विचार से उसे एक सकटपूर्ण समुद्र यात्रा पर, जल मे मग्न रत्नो को लाने के लिए भेजा, जिनकी रक्षा सर्प और राक्षस करते थे। जीवित बुद्ध की नौका पर समुद्री दानवो ने आक्रमण किया, किन्तु घमासान युद्ध के उपरान्त वह समुद्र-तल से रत्न-प्राप्ति मे सफल हुआ और इस प्रकार मुसलमान बादशाह की चाल को विफल कर दिया। इन प्राचीन तिव्वती धार्मिक नाटको मे महामानव का तत्व विद्यमान रहता है। पूरा कथानक नाचते और गाते अभिनेताओ द्वारा भली भाति स्पष्ट किया जाता है। उन्होने अपने अगसचालनो द्वारा उद्वेलित समुद्र मे नाव के सचालन और मूक अभिनय द्वारा सर्पों के साथ युद्ध का भी सुन्दर प्रदर्शन किया।

दोपहर मे एक घटा वजा और हम लामाओ तथा अन्य सरकारी अफसरो के साथ भोजन के लिए गये। हमने तिव्वती अधिकारियो के साथ बौद्ध धर्म सबधी अद्भुत पशुओ की खोदकर बनाई गई आकृतियो और विविध वर्ण वाले उद्धत चित्रो से सजे हुए आगन मे भोजन किया। पालथी लगाकर बुद्ध के समान बैठे हुए हमारे सामने गाढा याक का पनीर, कटोराभर चावल, किशमिश का हलुआ और रूसी जौ की रोटी परोसी गई। भोजन को तिव्वत के सर्वप्रिय पेय याक-मक्खन की चाय के सहारे नीचे उतारा गया। फिर नाटक देखा। शीघ्र ही टोपो से

ढके पूर्वी मस्तक झूमने लगे, अधिकारियो के पेट कुछ अधिक भर गये थे।

हमारा दोपहर का भोजन पचा ही था कि हम शिपोन शकापा के साथ, जो तिब्बत के वित्त मन्त्री तथा सन १६४८ मे बाह्य संसार के साथ व्यापार मिशन के नेता थे, दूसरे आहार के लिए ले जाये गए। रग्बी जानेवाले चार युवको मे से एकमात्र जीवित रिम्शी क्यीपप ने दुभाषिये का काम किया।

जब क्यीपप इंग्लैंड से लौटा, उसने तिब्बत से तार भेजने के प्रबन्ध मे उन्नति का प्रयत्न किया, किन्तु तत्कालीन सरकार ने उसके प्रयोग मे कोई रुचि नही दिखाई और वह उसे छोड़ बैठा। क्यीपप नगर-पुलिस के प्रधान तथा सिटी मजिस्ट्रेट के पद पर काम कर चुका है। छोटा कद, शर्मीला और व्यवहार मे अत्यन्त सम्मान-पूर्ण क्यीपप का विवाह सिक्किम के राजकीय परिवार के तैरिंग राजा की एक अत्यन्त सुन्दर पुत्री से हुआ है। अग्रेजी का अच्छा ज्ञान होने के कारण रिम्शी को उच्च अधिकारियो तथा अग्रेजी-भाषी आगन्तुको की भेट के अवसरो पर दुभाषिये का काम करने के लिए अक्सर बुलाया जाता है।

वित्त मन्त्री अपनी अमरीका यात्रा के विषय मे, जहा वे पाच व्यक्तियो के व्यापार-मिशन के साथ चार महीने ठहरे, अत्यन्त आनन्द के साथ बात करते थे। संयुक्त-राज्य अमरीका और तिब्बत के मध्य व्यापार की वृद्धि के कार्य के लिए देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक गये। शिपोन शकापा हमारी मशीनो, रेलगाडियो, हवाई जहाजो स्वय-चालित गाडियो और सेन फ्रासिस्को की केबुलकारो से महान विस्मय मे पड गए। उन्होने उन होटलो की, जहा वे ठहरे थे, बडी प्रशसा की तथा 'सिटी आफ फ्रासिस्को' की, जिसने उन्हे पूर्वीतट पर पहुचाया, कार्य-कुशलता और सुविधाओ के विषय मे आश्चर्य प्रकट किया। राकी तथा सियरा के पर्वतो ने प्रतिनिधि मण्डल को अपने हिमालय और हड्सन नदी ने उन्हे अपनी क्यी चू नदी के लिए आतुर बना दिया था। शिपोन शकापा, अमरीकी विश्वविद्यालयो से, जहा वे गये, अत्यन्त प्रभावित हुए और आशा की कि उनकी सरकार कुछ होनहार नवयुवको को वहां

शिक्षा प्राप्त करने भेजेगी। उनको अमरीका मे इस बात से वास्तव मे निराशा हुई कि उन्हे तिब्बती नही समझा गया। उन्होने कहा कि किसीने उन्हे चीनी समझा, किसीने भारतीय और किसीने जापानी, किन्तु सबसे अधिक आश्चर्य यह था कि उन्हे अग्रेज समझने तक का धोखा हुआ।

इससे प्रकट होता है कि हम अमरीकी तिब्बत के विषय मे कितने अज्ञानी हैं। शिपोन शकापा अनुभव करते है कि यदि तिब्बत को अपने मित्रो की परिधि बढानी है और साम्यवादी बाढ के विरुद्ध लडने के लिए बाहरी सहायता प्राप्त करनी है तो उसे अमरीकी जनता और ससार के सामने पर्याप्त प्रचार करना चाहिए। यह उसी दूरदर्शी वित्तमन्त्री का प्रभाव था कि हम तिब्बत आ सकें। उसने ल्हासा के उच्च अधिकारियो को निश्चय करा दिया कि अमरीका-निवासियो को शब्दो और चित्रो द्वारा उनके देश के विषय मे परिचित होना चाहिए और उन्होने हमे एक अवसर देने के लिए सहमत कर लिया।

दूसरे भोजन के उपरान्त हम फिर अपनी सीट पर नाटक देखने आ गए। थोडी देर बाद ही कुछ छोटे भिक्षु रोटियो की तश्तरिया रखते हुए इधर-उधर आने-जाने लगे। इतनी बडी दावत के बाद किसीको भूख हो सकती है, यह हमारे विचार के बाहर था, किन्तु दूसरो का साथ देने के लिए हमे भी जुटना पडा। रोटी के उपरान्त चाय आई। एक साधारण धनी-मानी तिब्बती अपनी गाढी चाय दिनभर मे चालीस से पचास प्याले तक पी जाता है।

कुछ देर बाद ही, जबकि अधिक भोजन से हम जड बने हुए थे, हम मच पर सेना के फोटो लेने गये। हमारे लिए एक प्राइवेट प्रदर्शन तैयार किया गया था। रक्षको को हमारे कैमरो के लिए रास्ता साफ करने के लिए उत्सुक जनता की भीड को निर्दयता-पूर्वक लाठियो से मारकर हटाना पडा। राष्ट्रीय सेना[1] उस समय दस हजार मनुष्यो की

---

१. अक्तूबर १९५० मे चीनियो के सामने हथियार डाल देने के उपरांत यह सेना चीन की मुक्ति सेना के एक अंग के रूप मे परिणत कर दी गई।

थी, किन्तु हमने सुना है कि अब वह एक लाख हो गई है। यही एक ऐसी सस्था है, जिसमे तिब्बत ने पिछली शताब्दियो मे कुछ परिवर्तन किया है। दलाई लामा की सेनाए अधिकतर देशी वस्त्रो मे थी, किन्तु कुछ सौ सैनिक, प्रथम विश्व-युद्ध की अग्रेजो की निरस्त वर्दियों को पहनते है और उसी समय की राइफल और हलके अस्त्रशस्त्रो से सुसज्जित है।

सेना मे तीन बैण्ड दल भी थे और एक मसक-वाजा पलटन भी थी।

"पवित्र नगरी मे मसक-वाजा!" मेरे पिता ने कहा, "आश्चर्य! इस पर विश्वास नही हो सकता।"

"डैडी! उनका गीत तो सुनिये। कैसी विचित्र वात है, ये तो, 'गाड सेव दी किंग,' 'मार्चिग थ्रू जार्जिया' और 'ओल्डलेड सेन' की अग्रेजी धुने वजा रहे है।"

"कुछ वुरा भी नही है, जवकि हम यह विचार करते है कि उनका सगीत हमारे संगीत से कितना भिन्न है।" डैडी ने उत्तर दिया।

"ऐसा अनुमान होता है कि मसक-वाजे और पुरानी परिचित पश्चिमी धुने यगहस्वैंड दल के साथ आनेवाले अग्रेजी प्रभाव के साथ ल्हासा मे आई है।" मैंने कहा।

सेवा के विशेष प्रदर्शन के उपरान्त हम अपने स्थानो पर नृत्य-नाटक की समाप्ति देखने के लिए लौटे। तीन विशाल पुजारी उपस्थित हुए जो व्यवसायी मल्लो के समान मासल और अमरीका के लोक-प्रिय सर्कस के दैत्य के समान लम्वे थे, वे पुजारी दलाई लामा के व्यक्तिगत अगरक्षको के दल मे से थे। जव यह वलवान त्रिमूर्ति अभिनेताओ के भेंट के लिए 'काटा' वाहो मे भरे आगे वढी तो भूमि दहलती-सी मालूम हुई। इन रेशम के सफेद वडे रूमालो मे, जिन्हे अभिनेताओ की गर्दनो पर वांध दिया गया, सभवत. कुछ धन भी वधा था।

वे फिर पहले से भी अधिक जोर-शोर से नाचने लगे और उनकी पोशाक तथा रूमाल चारो ओर उडने लगे। चक्राकार घूमते-घूमते एक वडे टव से प्यालों मे जौ का आटा भरने के लिए वे एक-एक करके रुके

और फिर नाचने लने ।

अकस्मात सबने चक्कर काटना बन्द कर दिया । अन्तिम शुभ चेष्टा के रूप मे नर्तको ने तीव्र चीत्कारें मुह से निकाली और उन्होने अपने प्यालो से हवा मे आटा उडाया तव सभी एक साथ अपने दैवी सम्राट के चबूतरे की ओर नीचे को मुह किये गिर पडे। पृथ्वी वृषभ-वर्ष का ग्रीष्म उत्सव—समाप्त हो चुका था ।

उस रात को हमने अपने वहनीय रेडियो प्रसाधन को चालू किया और ल्हासा से इतिहास मे सर्वप्रथम प्रसारण किया ।

दलाई लामा से सरकारी भेट की प्रतीक्षा मे हमने अगले कुछ दिनो का उपयोग दृश्य देखने मे किया। ल्हासा एक सफेद पुती हुई इमारतो का समूह है, जो एक से चार मजिल तक ऊची और पत्थर की वनी है तथा तग, पुरानी सडको के जाल के आसपास है। नगर के चारो ओर हमने पीले अनाज के खेत और याको के समूह देखे ।

ल्हासा मे कभी जनगणना नही हुई है, किन्तु साधारण अनुमान के अनुसार आवादी २५ हजार है। यदि समीप की पहाडियो पर स्थित ड्रेपुग, सीरा और गेन्डेन के तीन वडे मठो मे, जो 'राज्य के तीन स्तभ' कहलाते हैं और वहुत-से छोटे मठो मे रहनेवाले भिक्षुको को भी सम्मिलित कर लिया जाय तो जनसख्या लगभग ५० हजार के होगी। यह सख्या दुगनी हो जाती है जब तीर्थ-यात्री-दल राजधानी मे पहुचते हैं ।

अनेक बातो मे ल्हासा मुझे निचले काकेशस पर्वत पर वसे तुर्की नगर कार्स की याद दिलाता है । वह भी पहाडी प्रदेश मे है तथा तग, कीचड-भरी सडको से पूर्ण है। कार्स का बाजार तक ल्हासा से मिलता-जुलता है, जहा व्यापार का सामान सडको के किनारे मेजो पर चन्दोवे और छतरियो की छाया मे रक्खा रहता है ।

ल्हासा का बाजार सभी नवीन आगन्तुको को आकर्षित करता है, भले ही वे तिब्बत के ग्रामीण, लद्दाखी, सिक्किमी, मगोल तीर्थ-यात्री हो या हमारे जैसे कदाचित पहुंचनेवाले पश्चिमी आगन्तुक हो । यह समझ मे नही आता था कि पवित्र नगर के शोर मचानेवाले व्यापारियो की

छतरी और चदोवों के नीचे से क्या खरीदा जाय। धूप के चश्मे, दर्पण, सिगरेट, साबुन, अल्म्यूनियम के बर्तन टार्च और शृंगार के सामान के साथ ही इन दुकानो पर पूर्व का रेशम, चाय और गहने आदि भी रक्खे थे। हा, पश्चिम के कुछ छोटे सामान भी महगी कीमत पर उपलब्ध थे, क्योकि कारवां के साथ सभी तरह की वस्तुए लाई जाती है।

मशीन युग की ये गिनी-चुनी वस्तुए समुदाय की सभ्यता पर कुछ प्रभाव नही डालती थी। उदाहरण के तौरपर ल्हासा मे आधुनिक पाइप द्वारा पानी लाने का कुछ ज्ञान नही है। दलाई लामा की राजधानी मे जो भी स्नान का कष्ट उठाते है—केवल सामन्त और अधिकारी ही—घड़ों और तसलो का उपयोग करते है। नगर के समस्त कोनो मे गन्दगी के ढेर-लगे रहते है। वर्ष मे एक बार ये घृणास्पद ढेर उपज को प्रोत्साहित करने के लिए खेतो मे फेके जाते है। ल्हासा मे उठनेवाली गंध बिल्कुल अच्छी लगनेवाली नही है। सामन्त लोग घोड़े पर जाते हुए साधारण तौर पर सुगन्धित रूमाल नाक पर लगा रखते हैं। इस अप्रिय गध मे योगदान के लिए मरे पशु गन्दगी के ढेरो पर फैक दिये जाते है, जिन पर नगर की सफाई करनेवाले सैकडो भद्दे कुत्ते और काले कौवे लड़ते है और चट कर जाते हैं। यदि ल्हासा मे कठोर पर्वतीय जलवायु और तीव्र धूप और मक्खी तथा अन्य प्रकार के कीडो का पूर्ण अभाव न होता तो वहा सार्वजनिक स्वास्थ्य की विषम समस्या हो जाती, किन्तु आकर्षक पोशाकवाले इसके मोहक निवासियो, अतिथि-सत्कार, आमोद-प्रमोद और विचित्रता तथा तडक-भडक के सामने जो तिब्बत मे प्राचीन परपरा से चली आ रही है और मध्य काल के सजीव पर्दे के समान लगती है राजधानी के कुछ अरुचिकर पक्ष विस्मृत हो जाते है।

नगर को पूर्ण रूप से विद्युत प्रकाश युक्त करने की योजनाए चल रही है। जब सारा सामान इग्लैंड से आ जायगा और ल्हासा आधुनिक शैली से प्रकाश-पूर्ण हो जायगा तो मैं अनुमान करता हू कि बिजली के अन्य उपकरण बर्फ से ढके दर्रो और वात प्रकम्पित मैदानो मे एक-के-बाद एक प्रवेश करते चले जायंगे। यह तभी होगा जबकि पिछले इति-हास की फिर से आवृति न हो। कुछ वर्ष पूर्व ल्हासा ने बिजली का

सामान मगाया, किन्तु कुलियो ने, जो भारी मशीनो को पहाडो के ऊपर होकर भारत से ला रहे थे, आकर्षण-शक्ति से अपना कुछ काम कराना अधिक सरल और शीघ्रता-पूर्ण समझा, इसलिए उन्होने जितना हो सका उतना भार पाषाणो से भरे दर्रो से नीचे लुढका दिया। फल यह हुआ कि अधिकतर सामान ऐसा टूट गया कि मरम्मत से बाहर हो गया।

धनी व्यक्ति नगर मे घोडो या खच्चरो पर चलते हैं। अन्य लोग पैदल चलते हैं, क्योकि ल्हासा मे तिब्बत के अन्य स्थानो की तरह पहियेदार सवारी नही है। भारी सामान को ले जाने तक के लिए तक गाडिया नही है। हमने अनेक निर्माण-कार्य होते देखे, पर काम के लिए पत्थर और मिट्टी आदमी या गधो की पीठ पर ही ले जाई जा रही थी।

हमने तिब्बती अधिकारियो से पूछा कि सचार की सुविधा के लिए तिब्बत मे पहिया काम मे क्यो नही लाया जाता? उत्तर ठेठ तिब्बती ढग का था। हमसे कहा गया कि यदि साधारण बैलगाडी भी काम मे लाई गई तो तिब्बत की तग पगडडिया चौडी करके सडकें बनानी पडेंगी और सडकें देश की शकल बिगाडती हैं और आत्माओ को अप्रसन्न करती हैं। यह तर्कशैली यहा खान खोदने के सबंध मे भी अपनाई जाती है। धार्मिक दृष्टिकोण से, प्रकृति का किसी भी प्रकार दोहन अवांछनीय है। फिर भी हमे सन्देह है कि पहियो के अभाव का अन्य कारण भी है। सडके तिब्बत के एकान्त के लिए सकट का कारण हो जायगी, क्योकि इनसे बाहर के लोगो का प्रवेश सरल हो जायगा, न केवल अहानिकर यात्रियो के लिए, बल्कि आक्रमण कारी सेनाओ के लिए भी।

हमने चमकीली सुवर्ण छत वाले पोटाला को एक विशेष सुविधापूर्ण समय मे जाने के लिए बचा रक्खा था। ल्हासा मे पोटाला के बाद विशेष आकर्षण का स्थान नगर के मध्य मे 'जोकाग' या मठ है। पूजा-गृहो से पूर्ण इस देश मे यह विशाल मठ या मन्दिर शायद पवित्रतम स्थान है। सुवर्ण से अत्यन्त सजाई हुई छत के नीचे सम्राट सौंग-सेन-गाम्पो की एक रानी द्वारा सातवी शताब्दी मे चीन से लाई गई हीरो से

जडी एक विशाल वुद्ध मूर्ति है। जैसाकि मैं अन्य अध्याय में बता चुका हूं, यह महान सम्राट तिव्वत की वर्तमान सभ्यता का जनक है और उसे उसकी दो रानियो ने, जो चीन और नेपाल की थी, वौद्ध वनाया था। तभी अनेक मठ वनाये गए और वौद्ध-धर्म मे उत्साह पैदा करने के लिए, जो आज तिव्वत मे इतना अधिक है, भिक्षु-सघ स्थापित किया गया।

जोकाग मे सौग सेन गाम्पो की वुद्ध मूर्ति तथा अन्य छोटी मूर्तिया याक मक्खन के वीसो टिमटिमाते दीपको से घिरी है। अपराह्न के समय जव हम मन्दिर मे गये, भिक्षुओ के समूह धीरे-धीरे मन्त्रो का उच्चारण करते हुए धार्मिक कृत्यों का सचालन कर रहे थे। जोकाग राजधानी मे आनेवाले वौद्ध यात्रियो के लिए प्रथम विश्राम है। इसका विशाल आगन दोनो और सैकडो छोटे गोलाकार प्रार्थना-चक्रो से, जो चिकने धुरो पर लगे है, भरा है। जव भिक्षु परिक्रमा करते हैं, वे हर एक चक्र को घुमाते चलते है, इस तरह सारी पक्ति चाल मे आ जाती है। इन पहियो की आवाज, जो सहस्रो प्रार्थनाओ को एक साथ वुद्ध तक पहुचाती है, गोताखोर जहाज के समान लगती है। चूहे-चुहियाँ निर्भय होकर मन्दिर मे यात्रियो द्वारा समर्पित जौ की भेट को नोचती घूमती है। भिक्षुओ का पुन. अवतार पर विश्वास, उन्हे हानि से वचाता है।

ल्हासा के वाहरी भाग मे तिव्वत के अधिकतर सामन्त वर्ग रहते हैं, एक पृथक् वर्ग, जो अपने पद से नीचेवालो को कदाचित ही अपने साथ सम्मिलित होने देते हैं। वे तीन या चार मजिलोवाले मिट्टी और सीमेंट से वने भवनो मे रहते है। चपटी छतो के हरएक कोने पर प्रार्थना-झडो की माला टगी रहती है। तिव्वती पुष्प-प्रेमी है और अधिकतर गृहो के सामने पुष्पोद्यान हैं। यह ऐयाशी, तिव्वत की जनता के रहन-सहन से, जो पत्थर के छोटे मकानो मे या याक के वालो के तवुओ में रहती है, मेल नही खाती।

फिर भी ल्हासा के निवासी चाहे किसी भी स्तर के हो, प्रसन्नचित और अतिथि-सत्कार करनेवाले हैं, विशेष रूप से आमोदपूर्ण ग्रीष्म-उत्सव के अवसर पर। नगर मे हमारी भ्रमण-यात्राओं ने जनसमूह मे

हसी-खुशी से फीवारे छुडाये। अपने गोरे रग, छोटी, धूप से काली नाक, स्वैटर, स्की-पैन्ट और बूट पहने हम तिब्बतियो को वहुत विचित्र प्रतीत हुए होगे। हमारा घुडसवारी का ढग, काठी पर वैठना तिब्बतियो को हसी से खूब गुदगुदाता मालूम होता था। हमे उनके अपने ऊपर हसने मे कोई आपत्ति नही थी। ल्हासा मे इस तरह से स्वागत किया जाना उस विरोध से कही अच्छा था, जिसका भूतकाल मे आनेवाले कुछ यात्रियो को सामना करना पडा।

१२ | चौदहवें दलाई लामा

ग्रीष्म-उत्सव की समाप्ति के एक दो दिन बाद ही दलाई लामा से हमारी भेंट का प्रबन्ध किया गया। हम 'परम-पवित्रात्मा' से भेंट के पूर्वज्ञान और प्रत्याशा मे अत्यन्त उत्सुक थे। हमने विचार किया कि तिब्बत के घनाच्छादित राज्य के नेता के अतिरिक्त किसी भी शासक को धार्मिक और राजनैतिक दोनो क्षेत्रो मे सम्मान और भक्ति उपलब्ध नही है। उसके अनुयायियो के लिए पोटाला का प्रधान, तिब्बत के सरक्षक देवता, अनेक वाहो और सिर वाले चैन्रेजी का अवतार है।

दैवी सम्राट से अपनी भावी भेंट के विचार से, हम स्वभावत तिब्वत के पवित्र वश को प्रारम्भ से जानने की इच्छा रखते थे। अत जो कुछ हमने इसके विषय मे पहले पढा था और पिछले कुछ सप्ताहो मे जो कुछ तिब्वतियो से दलाई लामाओ के विषय मे सुना था, वह हमारे मस्तिष्क मे घूम रहा था। उनका एक रोचक इतिहास है

चौदहवी शताब्दी मे पूर्वी तिब्वत के एक गडरिये के पुत्र वज्रकमल ने वचपन मे ही अद्भुत आध्यात्मिक विशेषताए प्रकट की। वह भिक्षु वन गया और पीताम्वर सम्प्रदाय के सस्थापक और सुधारक शोग-कापा

का अनन्य भक्त हो गया। 'भिक्षु संघ को निष्पन्न करनेवाले' के नाम से विख्यात वज्र कमल ने ड्रेपुग और ताशी लुनपो के विशाल पीतांबर मठ स्थापित किये। उसके देहान्त के कुछ वर्ष बाद उसकी आत्मा दूसरे भिक्षु मे प्रवेश कर गई, ऐसा विश्वास किया गया और वही फिर ड्रेपुग का प्रधान हो गया। इस समय यह विश्वास दृढ़ हो चला था कि कुछ सन्त स्वभाव के व्यक्ति, अपने जीवन की पवित्रता के कारण, बुद्धत्व की प्राप्ति के अधिकारी होते हैं, किन्तु वे इस असामान्य अधिकार को, पृथ्वी पर लौटकर दूसरो की आध्यात्मिक उन्नति के लिए, अस्वीकार कर देते है। जो हो, अभी तक पीतांबरो के प्रधान आध्यात्मिक अधिकार ही रखते है और उन्होने शासकीय प्रभुत्व दिखाने का कोई प्रयत्न नही किया।

इस उत्तराधिकार परम्परा में तृतीय सोनाम ग्यात्सो था, जिसे सोलहवी शताब्दी के मध्य मे शक्तिशाली मगोल शासक अल्ता खान से 'दलाई लामा वज्रधर' (सर्वव्यापी लामा) की, जो वज्र धारण करता है, उपाधि प्राप्त हुई। सोनाम ग्यात्सो ने, जो तृतीय दलाई लामा माना जाता है, बौद्ध धर्म को न केवल तिब्वत मे, वल्कि मंगोलो मे भी फैलाया, जो तिब्वती बौद्ध धर्म के प्रति विशेष आकृष्ट थे।

पंचम और स्वर्गीय त्रयोदश दलाई लामा को तिब्वती हमेशा महान पचम और महान त्रयोदश कहते है। पचम लोब-सँग ग्यात्सो था, जो ल्हासा के समीप ही एक निर्धन ग्रामीण का पुत्र था। उसके प्राचीन रक्तांवर सम्प्रदाय से लगातार झगडे चलते रहे, क्योंकि वे उसके प्रभुत्व को स्वीकार नही करते थे। सन् १६४१ ई० मे ओएलोत मगोलो की सहायता से दलाई लामा ने लडाकू रक्तावरो को दबा दिया और अपने सम्प्रदाय पीतावरो को तिब्बत के शासक के पद पर पहुचा दिया। इस रक्तपात-पूर्ण लडाई के उपरान्त—यह उन भिक्षुओं के लिए असाधारण कार्य था, जो साधारणतया कीड़े को भी नही मारते—पंचम दलाई लामा ने गौरवपूर्ण पोटाला को वनाना प्रारभ किया और ल्हासा को पुजारी राष्ट्र की राजधानी वनाया। पंचम दलाई लामा के शासन के प्रारंभिक वर्षों मे ही कैपुचिन पादरियों को ल्हासा मे आने और धर्म-

प्रचार की अनुमति दी गई तथा जैसुएट पादरी उसके राज्य-काल के अन्तिम वर्षों मे आये। यद्यपि पचम दलाई लामा ने अपने अधिकतर शासकीय अधिकार अपने मुख्य मत्री को सौंप रक्खे थे, तथापि देश के सगठन तथा शासकीय और धार्मिक प्रभुत्व ल्हासा मे केन्द्रित करने के लिए वही उत्तरदायी था।

त्रयोदश दलाई लामा का देहान्त या जैसाकि तिब्बती कहते हैं, 'स्वर्गीय निवास को विदा', सन् १९३३ ई० मे ५७ वर्ष की अवस्था मे हुआ। अपने घटनापूर्ण राज्य-काल मे वह दो बार देश-निष्कासन मे गये—एक बार १९०४ ई० मे यगहस्बैंड की सेना के आने पर मगोलिया को और दूसरी बार १९१० ई० मे भारत को, जब चीनियो ने तिब्बत पर आक्रमण किया। इन अनुपस्थितियो के होते हुए भी वह अपने अनुयायियो का प्रेम बनाये रख सके और मृत्यु-पर्यन्त बुद्धिमत्ता-पूर्वक शासन करते रहे। भारत मे उसके दो वर्ष के निष्कासन-काल मे चीनियो ने उन्हे पदच्युत करने की घोषणा की, किन्तु तिब्बतियो ने सार्वजनिक रूप से प्रसारित उन घोषणाओ को कीचड से बिगाड दिया और अपने निष्कासित जीवित देवता को सर्वोपरि अधिकारी मानते रहे।

महान् त्रयोदश के एक घनिष्ठ और माननीय परिचय के लिए पश्चिम सर चार्ल्स बैल का आभारी है, जो उन्हे उन तिब्बत निवासियो को छोडकर, जो व्यक्तिगत रूप से उनके समीप रहते थे और कुछ मगोलो को छोडकर, किसी भी पश्चिम निवासी या चीन और एशिया निवासी से भी अधिक अच्छी तरह जानता था। चार्ल्स बैल, यगहस्बैंड दल के एक वर्ष उपरान्त चुम्बी घाटी का प्रभारी था और १९०८ से १९१८ ई० तक तिब्बत और भूटान के साथ ब्रिटिश भारतीय सबधो की देख-भाल करनेवाला राजनैतिक अधिकारी था।

उन दो वर्षों मे, जब दलाई लामा निष्कासन मे दार्जिलिंग रहे, उनकी चार्ल्स बैल से घनिष्ट मित्रता हो गई और वे उससे अपनी कठिनाइयो के विषय मे परामर्श लेते थे। वे एक-दूसरे से एकान्त मे बात करते थे, क्योंकि चार्ल्स बैल तिब्बती भाषा खूब जानता था। इससे भी अधिक यह था कि उसमे वास्तविक दृष्टिकोण के समझने और ग्रहण करने की शक्ति

थी, उसे तिब्बतियो से सच्चा स्नेह था। सन् १९२० मे दलाई लामा के अनुरोध पर वह ल्हासा मे ब्रिटिश कूटनीतिक मिशन का प्रभारी बनाकर भेजा गया और वहा एक वर्ष रहा। इतनी अवधि तक कोई भी पश्चिम निवासी, १८वीं सदी के कुछ मिशनरियो को छोड़कर, वर्जित नगर में नही रहा, किन्तु उनके विपरीत वह आमन्त्रित अतिथि था और तिब्बती शासक का व्यक्तिगत मित्र था।

अनेक तिब्बती विश्वास करते है कि चार्ल्स बैल पिछले जन्म मे बडा तिब्बती लामा था, जिसने तिब्बत की सहायता के लिए एक शक्तिशाली देश मे जन्म लेने की, मृत्यु से पूर्व प्रार्थना की थी। जब उसके जाने का समय आया तब दलाई लामा अपने पुराने मित्र का वियोग बड़ी कठिनता से सहन कर सका और दु खी होकर कहा, "हम एक-दूसरे को काफी समय से जानते है और मुझे तुम पर पूर्ण विश्वास है, क्योकि हम दोनो एक से विचार के व्यक्ति है। मैं प्रार्थना किया करूगा कि तुम फिर तिब्बत लौटो।" उन्होने एक-दूसरे को फिर नही देखा, यद्यपि वे पत्र-व्यवहार करते रहे और दलाई लामा की मृत्यु-पर्यन्त मित्र बने रहे। सर चार्ल्स बैल, जो उस समय अवकाश प्राप्त करके इग्लैड मे रहते थे, १९३४ मे एक बार फिर तिब्बत आये। उसकी मृत्यु सन् १९४५ मे ७५ वर्ष की आयु मे हुई। उसने तिब्बत और पश्चिम के लिए अपने उत्तराधिकार स्वरूप अनेक खोजपूर्ण पुस्तके उस देश के निवासी, रीति-रिवाज, इतिहास और धर्म के विषय मे छोडी, जिसे वह प्यार करता था और २० वर्ष तक जिसके घनिष्ट सम्पर्क मे रहा था। इनमे ऐसी समृद्ध सूचनाये है, जिनसे तिब्बत आनेवाले समस्त यात्री, जिनमे मैं भी हूं, आभार-पूर्वक लाभ उठाते रहे हैं।

सर चार्ल्स बैल अन्तिम दलाई लामा को एक निःस्वार्थ शासक समझता था, जो तिब्बत की सेवा में कार्यभार की अधिकता से मरा। चार्ल्स बैल ने उसके शासन-प्रबन्ध मे होने वाली उन्नति और उसके राज्य मे चीनियो के प्रभुत्व को समाप्त करने के सफल प्रयत्नो की प्रशसा की है। महान् त्रयोदश के पूर्व किसी भी दलाई लामा ने अपनी प्रौढ अवस्था तक पूर्ण आध्यात्मिक और राजनैतिक अधिकारो का उप-

भोग नही किया था। उनमे से अनेक रीजेन्ट के नियन्त्रण मे १८ वर्ष के होने से पूर्व ही रहस्यपूर्ण ढग से मर गये थे।

किन्तु सन् १९३३ मे वह सिंहासन, जिस पर त्रयोदश दलाई लामा का, इतनी लम्बी अवधि तक अधिकार था, अस्थायी रूप से खाली हो गया और सम्पूर्ण तिब्बत शून्य मालूम होता था। सबने बालक के शरीर मे उसके लौटने की प्रार्थना की।

नये शासक के चुनाव के समय तिब्बत मे जो उत्तेजना और सभ्रम फैलता है, वह उस ज्वर से अधिक होता है, जो अमरीका मे राष्ट्रपति के वर्ष मे फैलता है। कभी-कभी पुराना शासक 'स्वर्गीय निवास को विदा' होने के पूर्व अपने निकटस्थ व्यक्तियो को बता देता है कि वह कहा अवतार लेगा। दलाई लामा को पोटाला के शिखर पर उसकी समाधि मे स्थापित करने के तीन या चार वर्ष बाद, ड्रेपुंग, सेरा और गेन्डेन मठो के पुजारी, ल्हासा और उसके दक्षिण-पूर्व साम-ये मठ मे स्थित दैवी वाणिया तथा अन्य उच्च अधिकारी, यह निश्चय करने के लिए एकत्र होते है कि उसका नया अवतार देश के किस भाग मे मिल सकता है।

उसे कही-न-कही अवश्य होना है, क्योकि दलाई लामा ने मर्त्यों के बीच उनकी सेवा के लिए रहने की शपथ ली है, यद्यपि आध्यात्मिक ससार मे विश्राम का उसको अधिकार प्राप्त है। शासकीय दैवी वाणी से परामर्श किया जाता है। दिव्य दृष्टि द्वारा उस भू-क्षेत्र का उसे अनुमान हो जाता है, जहा पुन अवतार होगा। दैवी वाणी की दृष्टि मे झील के तट पर बसी किसान की पत्थर की कुटी, या नदी के तट पर बसी कुटी या जिसकी पृष्ठभूमि मे हिम शिखर हैं, निकल सकती है। ऐसी सूचनाओ के आधार पर पणछेन लामा, यदि उसका बहुमत है, और अन्य अधिकारी, जिन्हे परपरा से खोज का अधिकार प्राप्त है, सारे देश को छानते है। अन्त मे वे उस स्थान को और कुटी को या पत्थर के छोटे मकान को ढूढ निकालते हैं, जो दैवी वाणी की दृष्टि से अधिकतम मिलता-जुलता है। यदि वहा पर रहनेवाला किसान का बालक कुछ ऐसे चिह्न रखता है, जो शरीर-धारी चैन्रेजी की विशेषता प्रकट करते हैं, जैसे पैरो पर शेर की खाल जैसे चिह्न,

बड़े कान, दोनों कधों पर गोश्त के दो टुकड़े, जो दयालु बुद्ध के शेष दो हाथों को प्रकट करते हैं, तब कोई सन्देह नही रह जाता कि वह शरीर-धारी बुद्ध है। किन्तु यदि यह सन्देह हो कि अनेक अभ्यर्थियों में से कौन-सा सच्चा है तो जो भी सच्चा अवतार होगा, वह निश्चय-पूर्वक उन वस्तुओं को छाट सकेगा, जिनका दलाई लामा ने अपने गत जीवन में उपयोग किया था। यह सभी धार्मिक तिब्बतियो का विश्वास है।

साधारण तौर पर ऐसे तीन या चार लड़के निकलते हैं, जो प्राथमिक मांगों की पूर्ति करते है और प्रतिद्वन्द्वी प्रदेश अपने स्थानीय अभ्यर्थी के लिए तीव्र प्रचार में लग जाते हैं। उच्च लामा ऐसे को चुन लेते हैं, जिसमें वे विश्वास करते हैं, चैन्रेजी के अवतार होने के सबसे अधिक लक्षण स्पष्ट है, किन्तु ऐसे अवसर भी आये हैं, जब किसी विशिष्ट चुनाव के लिए पर्याप्त राजनैतिक दबाव या शक्तिशाली प्रभाव भी डाला गया है। चुने हुए लडके को माता-पिता और भाई-बहनों के साथ राजसी ऐश्वर्य के साथ ल्हासा लाकर स्थापित किया जाता है। दलाई लामा के पिता को कुग का पद दिया जाता है जोकि एक सामान्य मनुष्य के लिए तिब्वत मे सबसे ऊचा पद है।

वालक दलाई लामा परिवार के साथ नहीं रहता। उसे सिखाने तथा गम्भीर धार्मिक अध्ययन के लिए पोटाला ले जाया जाता है, जिससे वह भविष्य में दैवी शासक का कार्य कर सके। जबतक कि वह अठारह वर्ष का नही हो जाता, रीजेन्ट और उच्च पुजारी उसके नाम पर शासन करते है।

वर्तमान दलाई लामा इस समय १६ वर्ष के हैं। चौदहवे अवतार की खोज, जैसाकि हमे ल्हासा मे उनसे मिलने से पूर्व बताया गया, स्पष्ट करती है कि तिब्वत किस प्रकार पुराने विश्वासों और धार्मिक कृत्यों से चिपटा हुआ है। उनके चिह्नों से प्रकट हुआ कि पुनर्जन्म उत्तर-पूर्व में कहीं होगा। यह कहा जाता है कि जब त्रयोदश दलाई लामा के शरीर को औषधियो से अभिषिक्त किया गया, उनका मुख दक्षिण की ओर घूमा हुआ था, किन्तु जब ताजा नमक डालने के लिए शव खोला गया तब

'महान सरक्षक' ने अपना मुह उत्तर-पूर्व को घुमा लिया था। उस समय ही अनेक इन्द्रधनुष और मेघ उत्तर-पूर्व को जाते देखे गये। अन्वेषक दल पूर्वी तिब्बत को गया। यह वह प्रदेश था, जिस पर सन् १६१० के आक्रमण मे चीनियो ने अधिकार कर लिया था। वहा उन्हे पणछेन लामा मिले, जो अभी तक निष्कासन मे ही थे। उन्होने तीन सम्भाव्य अभ्यर्थियो के नाम बताये। पहला मर चुका था, दूसरा दलाई लामा से सबन्धित वस्तुओ को दिखाते ही चिल्ला कर भाग खडा हुआ। तीसरा, अक्तूबर १६३७ मे कोकोनूर प्रान्त मे सीनिंग के समीप मिला। यह प्रदेश भी चीनियो द्वारा अधिकृत है, किन्तु उसके माता-पिता शुद्ध तिब्बती थे और अपेक्षाकृत समृद्ध किसान थे। समस्त चिह्न ठीक मालूम होते थे। अन्वेषक दल के नेता ने एक लामा को नौकर के वेश मे फार्म की रसोई मे भेजा। कहा जाता है वह दो वर्ष का बालक, जो फर्श पर खेल रहा था, तुरन्त 'लामा, लामा,' बोल उठा और उस मठ का नाम भी बता दिया, जहा से लामा आया था। कुछ दिनो बाद उसने महान् त्रयोदश की कई वस्तुए चुनी, यह भी कहा जाता है। लामाओ ने घोषित किया कि उन्होने उसके शरीर पर ऐसे कई चिह्न पाये, जिससे वह दयालु बुद्ध चैन्रेजी का अवतार ज्ञात होता था।

ल्हासा ले जाकर लडके की अन्तिम परीक्षा के अतिरिक्त प्रत्येक बात निश्चित-सी ज्ञात होती थी, किन्तु चीनी राज्यपाल ने लडके को बिना पर्याप्त धन वसूल किये ले जाने देने से निषेध कर दिया। इस अत्याचारपूर्ण माग को निबटाने मे प्रायः एक वर्ष और लग गया। तिब्बत ने सितम्बर १६३६ मे मागा गया धन भरा। तिब्बत का अन्वेषक दल बालक के साथ ल्हासा लौटा और उसे तुरन्त 'सत्य का अवतार' घोषित कर दिया गया।

फरवरी १६४० मे नये तिब्बती वर्ष पर चतुर्दश लामा का राज्याभिषेक हुआ। पोटाला मे उस धार्मिक अवसर पर उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति ने, यहा तक कि ब्रिटिश प्रतिनिधि सर बैसिल गॉल्ड तक ने, पाच वर्ष के जीवित देवता के गौरव की प्रशसा की। उसे लम्बे धार्मिक कृत्यो के लिए ऊचे सिहासन पर बैठाया गया। इस अवसर पर उच्च लामा

उसके सामने दण्डवत् प्रणाम करते थे, वह ऐसी सरलता से प्रत्येक को आशीर्वाद देता था, जो उसके अन्दर स्वाभाविक रूप से ज्ञात होती थी। वास्तव मे चैन्रेंजी के चतुर्दश अवतार के रूप मे जन्म लेने तक उन्हे इसका पर्याप्त अभ्यास हो चुका था।

नवयुवक दलाई लामा को परपरा के अनुसार शिक्षित किया जा रहा है। उसे अविवाहित जीवन व्यतीत करना है। जब वह छोटा था, उसके भाई उसके साथ खेलने आते थे, किन्तु बहनें कभी नही। वह मद्य जैसी वस्तुए कभी नही पी सकता, यद्यपि मास ग्रहण कर सकता है। विद्वान लामाओ ने उसे बौद्ध धर्माचार, ध्यान और तिब्बती पवित्र पुस्तको का ज्ञान प्राप्त कराया है। वह अपेक्षाकृत सरल और एकान्त जीवन व्यतीत करता है और रीजेन्ट के सरक्षण मे नवयुवक देवता के लिए यह उचित ही है, किन्तु उसकी समस्त आवश्यकताओ की देखभाल के लिए अनेक कर्मचारी है। भिक्षु सघ मे प्रविष्ट होने पर उसे जो नाम दिया गया, वह जीभ को तोड देनेवाला है—गैत्सो न्वांग लौब्सैग तैन्जिन ग्याप्सो सिसुन्वाग्यूर—शुगपा मपाई धेपाल सागपो, जिसका साधारण अर्थ है—'परम पवित्र, परमैश्वर्यशाली, वाग्मी, शुद्धमन दिव्यमति युक्त, धर्म-रक्षक, सागर विशाल।'

दलाई लामा के विषय मे हमने जो कुछ भी सुना, उससे आगामी भेंट के लिए हमारी लालसा तीव्र होती गई। हमारी भेंट के दिन राज्य के दो सामन्त—सरकारी दुभापिया रिमशी क्यिपुप और हमारा सरकारी मेजवान दोर्जे चागवावा—हमे ग्रीष्म भवन (नोर्बू लिंगा) ले चलने के लिए आये। वे चमकीले लाल और सुनहरे चोगे पहने थे, ६ इच के फीरोजे के लटकन कानों मे धारण किये हुए थे। इसके अलावा उनकी चोटियों मे भी फीरोजे लगे थे, इन सव चमकीले आभूषणों के साथ वे चम-चमाते पीले टोपो से मण्डित थे। उपहारो के अन्तिम निरीक्षण और फिर से वाघने तथा अपने सर्वोत्तम सफेद रेशमी रूमालो को छाटने के वाद हमारी राजसी बरात घोडों पर चली। इस विशिष्ट अवसर पर हम सव अत्यन्त विभूषित घोडो और खच्चरो पर सवार थे।

सबसे आगे रास्ता साफ करने के लिए अपने पोले और चौड़े

किनारे वाले चमकदार लाल टोप पहने घुडसवार गये। उनके पीछे हमारे साथी दोनो सामन्त थे, जिन्हे देखकर सब मनुष्य झुककर प्रणाम करते थे। दोनो थामस पिता-पुत्र उसके बाद पक्ति मे थे। हम ऐसे विचित्र व्यक्ति थे, जिन्हे ल्हासा मे सब मुह फाडकर देखते रह जाते थे। हमारे पीछे हमारे तीनो नौकर थे और चोगपोन था, जिसने यातुग से राजधानी तक हमारा पथ-प्रदर्शन किया था। वे दलाई लामा के लिए हमारी भेंटे लेकर चल रहे थे।

परम पवित्रात्मा के लिए हमारी मुख्य भेंट शेर का सिर था, (दात सहित मुह फाडे पूरा), जिसे बैंकाक मे एक स्यामी सुनार ने सोने और चादी मे जडा था। हमने एक वैसा ही, किन्तु कुछ छोटा सिर रीजेन्ट के लिए भी खरीद लिया था।

महामहिम के लिए एक मोडी जाने वाली सफरी एलार्म घडी, प्लास्टिक की अमरीकी बरसाती और एक सफेद रूमाल मे सिक्को की थैली भी थी। अन्तिम वस्तु रूमाल प्रतीकात्मक थी, जिसकी हर एक विदेशी से आशा की जाती है। यदि उपहार न लाये जाय, तो यह व्य-हार का असाधारण उल्लघन होगा। हमारे तिब्वत से जाने से पूर्व दलाई लामा और रीजेन्ट ने हमारे लिये भेटें भेजकर प्रत्युत्तर मे सद्भाव प्रदर्शित किया। ये थे तिब्वती कबल, ऊनी कपडे के थान और सुन्दर तिब्बती धार्मिक चित्र।

महल मे, दलाई लामा के लिए हम उसी आगन मे प्रतीक्षा करते रहे, जहा उत्सव के आखिरी दिन धार्मिक भोजन कराया गया था। समीप ही, सिहासन-कक्ष के बाहर लगभग सौ भिक्षुओं का दल चाय की चुस्की ले रहा था। उन्होने हमारी ओर विचित्र दृष्टि से घूरा। छत पर दो भिक्षु तीन फुट लबी पीतल और हड्डी की तुरहियो से डरावनी आवाज निकाल रहे थे। यह सगीत नही था, कम-से-कम वैसा तो नही, जिससे हम परिचित हैं। दूसरे सुर मे जाने से पूर्व वे एक ही सुर को कई मिनट तक बजाते रहते थे। शीघ्र ही छोटे सिंगारे भी बजने लगे और फिर इनका स्थान १२ फुट की तुरहियो ने ले लिया, जो बैण्ड के निचले सुर की जैसी गहरी नीची गरज पैदा करते थे। ये अन्तिम बाजे इतने

भारी थे कि उन्हे छत के किनारे पर रक्खी एक सुनहरी टेक पर रखना पडता था। यह अविराम चलने वाली एक सुरीली ध्वनि कुछ निश्चित धार्मिक आशय रखती होगी। अकस्मात् एक भिक्षु आगन के पार एक सीढी पर चढा और उसने सुनहरे घडियाल को कई बार अपनी मुगरी से ढोका। यह प्रातःकालीन भेट के प्रारभ होने का सकेत था।

नीची छत वाले, बुद्ध-विभूषित सिहासन-कक्ष के प्रवेश-द्वार पर शीघ्रता से लगभग एक दर्जन भिक्षुओ की पक्ति बन गई। हमसे उनके पीछे खडे होने को कहा गया और हमारे पीछे उपहारो सहित सेवक खडे हुए। जीवित बुद्ध से आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए हमारे बाद लगभग ५० या अधिक तिब्बती और आये। धूप के धुएं के धुधलके मे हम नवयुवक दलाई लामा को नगे सिर अपने गद्दीदार सिहासन पर बैठे देख सकते थे। चमकीली आखो वाले मुस्कराते वह लामाओ की लाल पोशाक धारण किये थे। हमने आश्चर्य-पूर्वक देखा कि जबतक धार्मिक क्रिया चलती रही, वे बराबर हमारी ओर देखकर मुस्कराते रहे।

एक क्षण बाद हम उनके चरणो के पास खडे थे। मेरे पिता, जिन्हे पंक्ति मे सबसे आगे रहने को कहा गया था, अपने फैले हुए हाथों में सफेद रेशम का रूमाल लिये थे। कहने मे जितनी देर लगती है, उससे भी कम समय मे प्रधान पुजारी ने रूमाल पर कुछ प्रतीक-स्वरूप वस्तुए रक्खी, जिन्हे दलाई लामा क्रमशः लेते गये। पहली, तीन पर्वतो के समान आकृति वाली संसार का प्रतीक थी। दूसरी चीजें, जो रूमाल पर रक्खी गईं, दलाई लामा द्वारा इतनी फुर्ती से उठा ली गईं कि हम पता न लगा सके कि वे क्या थी। एक मूर्ति थी, जो शरीर का प्रतिनिधित्व करती थी, दूसरी पुस्तक वाणी का, तीसरा एक चैत्य मस्तिष्क का। तब रूमाल को दलाई लामा के एक भिक्षु सेवक ने ले लिया।

डैडी एक पग वढे और आगे को झुके। जब उन्होने ऐसा किया, दलाई लामा ने अपना दाहिना हाथ आगे बढाया और मेरे पिताजी के सिर को अपनी उगलियो से छुआ और इस प्रकार आशीर्वाद दिया। फिर उन्होने डैडी को एक छोटा रूमाल भेंट मे दिया। यही क्रिया रीजेंट के साथ भी की गई, जो दलाई लामा के दाहिनी ओर नीचे सिंहासन पर

बैठे थे। फिर मेरी बारी आई। मुझे भी वही क्रम अपनाना पडा, केवल मुझे प्रतीकात्मक भेटें नही करनी पडी।

रीजेंट के आशीर्वाद के उपरान्त हमे दलाई लामा की बाईं ओर कुछ पीछे सभा भवन मे गद्दो पर बैठने का सकेत किया गया। पर्दों से सजे एक खम्भे के कारण मैं सिहासन को देख नही पा रहा था, किन्तु मैं कुछ पीछे झुक कर परम पवित्रात्मा को देख सकता था। वह मुस्कराते रहे और हमारी ओर नीचे से झाकते रहे। निश्चय ही वह भी दूर अमरीका से आनेवाले दो अजनबियो के विषय मे अपने प्रजाजनो के समान ही उत्सुकतापूर्ण थे।

फर्श पर पडे अपने गद्दो पर बैठे हम चारो ओर सभा-भवन को देखने लगे। सिहासन के ऊपर थकाओं की माला—तिब्बती धार्मिक प्रसगो वाले कागज के मुट्ठो के झडे—टगी थी। हर एक मे चीनी शैली मे बुद्ध की आकृतियां बनी थी, जो भाव-प्रकाशन मे शान्ति और कोमलता को व्यक्तित्व की अपेक्षा अधिक महत्व देती है। फर्श पर सिहासन के दोनो ओर छ या अधिक उच्च लामा बैठे थे। अन्य अनेक भिक्षु परिजन पृष्ठ-भूमि मे खडे थे और कई दानवाकार भिक्षु आगे-पीछे घूम रहे थे। ये वही अगरक्षक थे, जो ग्रीष्मोत्सव मे कार्य कर रहे थे। जबतक हम सभा, भवन मे बैठे रहे, निरन्तर बजती हुई तुरही की आवाज, तिब्बत के आध्यात्मिक लोक से आती हुई-सी हमारे कानो मे गूजती रही।

हमने भक्तो की भीड को सिहासन के समीप जाते देखा। कोई भी ऊपर देखने का साहस नही कर रहा था। दलाई लामा एक छोटी डडी मे बधे फुदने से उनका सिर छू देते थे। वह हाथ से भिक्षुओ और सम्मा-ननीय अतिथियो को ही आशीर्वाद देते है। सामान्य जन और सभी स्त्रिया, मन्त्रियो की पत्निया तक, फुदना ही पाती हैं। अवतारधारी भिक्षुणी 'वज्रशूकरी,' जो नागरत्से के मठ की प्रधान है, केवल अपवाद-स्वरूप है।

ज्योही तिब्बतियो की भीड कमरे से बाहर हुई कि भिक्षु हमारे लिए चावल के कटोरे लाये। हमने कुछ दाने अपने दाहिने कन्धे के ऊपर से फेंके और तब उनको चाखा। बस. इतना ही किया। यह केवल एक धार्मिक

क्रिया थी। भिक्षु हमारे लिए लगभग आधी दर्जन तिब्बती रोटियो की गड्डियां लाये, जिन्हे हमारे नौकरो ने लपेट लिया और घर ले आये। हमने बाद मे दोपहर के खाने के समय इन्हे खाने का प्रयत्न किया, किंतु इनमे याक का सडा मक्खन इतना अधिक था कि हम उन्हे खा नही सके। हमे तिब्बती चाय के प्याले भी दिये गए, जिनमे से हमने एक चुस्की ली। दलाई लामा के चाय पीने से पूर्व हमारे साथी दोर्जे को एक प्राचीन धार्मिक कृत्य करने को बुलाया गया। सिंहासन के सामने घुटनो के बल झुककर उसने अपने वस्त्रो के अन्दर से एक छोटा लकडी का कटोरा निकाला। इसमे थोडी-सी चाय डाली गई, जिसे दलाई लामा पीनेवाले थे। दोर्जे इसे एक घूट मे पी गया। ऐसा करने से यह सिद्ध हुआ कि भिक्षु-सम्राट की चाय मे विष नही है। यह परंपरा उन प्राचीन दिनों से चली आ रही है जबकि कुछ तिब्वती सम्राटो को ईर्ष्यालु रीजेन्ट और लामाओ ने विष दे दिया था।

दलाई लामा से भेंट के उपरान्त हमे रीजेन्ट से भेंट का अवसर मिला। यह व्यक्ति तिब्बत मे अभी अगले दो वर्ष तक, जबकि दलाई लामा १८ वर्ष की अवस्था प्राप्त करके स्वय शासन ग्रहण कर लेंगे, प्रभुत्वशाली बना रहेगा। कोई तिब्बती नही कह सकता कि तव क्या होगा, किन्तु नौजवान दलाई लामा, उसी प्रकार प्रगति करते रहे जैसा-कि वे पिछले वर्षो मे करते रहे है, तो उन्हे विश्वास है कि वह भी अपने महान् पूर्वज त्रयोदश की भाति पूर्ण प्रभुसत्ता ग्रहण कर लेंगे।[1]

रीजेन्ट ने सिंहासन-कक्ष के समीप ही एक अतिथि-कक्ष मे हमसे भेट की। महामहिम, जिनका नाम तोक्रा है, ७३ वर्ष के है, किन्तु पूर्ण स्वस्थ और मानसिक दृष्टि से भी सचेत है। उनकी अधिकार-प्राप्ति की कथा असाधारण और पूर्वीय विशेषता से युक्त है।

त्रयोदश दलाई लामा के देहान्त पर, रेटिंग रिम्पोशी, जो तोक्रा का

---

१. १ अक्तूबर १९५० में जब चीनी सेनाओं ने तिब्वत में प्रवेश किया, रीजेन्ट दलाई लामा के पक्ष में अलग हट गया और उन्होने १८ वर्ष की अवस्था से पूर्व ही समस्त अधिकार ग्रहण कर लिये।

पूर्ववर्त्ती था, रीजेन्ट नियुक्त हुआ। वह उस समय २० वर्ष का था। न तो आकर्षक ही और न वहुत योग्य ही। कार और दूसरे मशीनी उपकरणो को पसन्द करने के कारण कुछ लोग उसे प्रगतिशील समझते थे, जव कि दूसरे, जो वहु-सख्यक थे, उसकी कट्टरता-रहित रुचियो पर वैसे ही मुह विचकाते थे, जैसे कि खिलौनो से आकर्षित वालक की रुचि पर। एक वहुत गम्भीर आरोप, हमे वताया गया, यह था कि नवयुयक रीजेन्ट ईमानदार नही था। अनेक वार चीनी सोने ने उसे चीन के उद्देश्यों को सफल कराने मे लुव्ध कर लिया। रीजेन्ट के पद पर नियुक्ति के सात वर्ष वाद उसे स्वप्न हुआ, जिसमे उसे परामर्श दिया गया कि वह रीजेन्ट के पद से इस्तीफा दे दे, नही तो उसके प्राण चले जायेंगे। इस पर वह तुरन्त ही सीरा मे, जो ल्हासा का एक वडा मठ है, ध्यानी भिक्षु वन गया।

तव तोक्रा आगे आया और रीजेन्ट वन गया। शीघ्र ही चीन ने, तिव्वती कठपुतली के हटने से अप्रसन्न होकर ल्हासा मे विद्रोह उभारा, जिसका लक्ष्य टोक्रा को हटाकर रेटिंग रिम्पोशी को फिर से स्थापित करना था। सीरा के भिक्षु भी झगडे मे सम्मिलित थे। पवित्र नगरी मे पर्याप्त रक्तपात हुआ, लाल वस्त्र-धारी भिक्षु और सरकारी सेनाओ मे। इस विद्रोह को अकेले सरखाग सेवोग चैम्पो, वर्तमान विदेश मन्त्री के ३२ वर्षीय पुत्र, ने दवा दिया। सरखाग सीरा के मठ मे गया, रेटिंग रिम्पोशी को वन्दी वनाया, भिक्षुओ ने कुछ हस्तक्षेप नही किया और उसे पोटाला ले जाया गया। कुछ दिनो वाद ही रिम्पोशी ने पोटाला छोडा, किन्तु अन्तिम सस्कारो के लिए। ल्हासा मे शायद कोई नही जानता कि दलाई लामा के शीत निवास की उत्तुग दीवारो के पीछे वह किस प्रकार मृत्यु को प्राप्त हुआ।

जव रीजेन्ट के सामने वैठे चाय की घूट ले रहे थे और नम्रतापूर्वक अपने आगमन के विषय मे वात कर रहे थे तव हमारे मस्तिष्क मे वह कथा घूम रही थी।

"इस तथ्य को विचारते हुए कि तिव्वत मे वौद्ध धर्म भारत से प्रविष्ट हुआ, क्या श्रीमान यह नही सोचते कि अन्य देशो को वौद्ध मिश-

नरी भेजना अच्छा विचार होगा ?" डैडी ने रीजेन्ट से अपने दुभाषिये द्वारा पूछा ।

"बहुत अच्छा विचार है ।" रीजेन्ट ने सहमत होते हुए कहा और धीरे से मुस्कराया ।

जब हम चलने को हुए, रीजेन्ट ने हमे अपने दीवान के समाप बुलाया और हम दोनो को एक सफेद रूमाल और एक छोटा लाल रूमाल, जैसाकि परम पवित्रात्मा ने दिया था, भेंट किया । क्यिपुप ने बताया कि रीजेन्ट और दलाई लामा से ऐसे लाल रूमाल भेट मे पाना विशेष सम्मान था ।

अव हम फोटो खीचने के लिए स्वतन्त्र हुए । हमारी खुशी का ठिकाना न था । दलाई लामा से भेट ही एक ऐसी सुविधा थी, जिसे विदेशी कठिनता से पाते थे । किन्तु हमे और भी असाधारण अवसर प्राप्त हुआ । दयालु बुद्ध के नवयुवक अवतार के स्थिर और चल दोनो प्रकार के चित्र लेने की अनुमति हमारे दुभाषिये के अनुसार हमे यह विशेपाधिकार देने के लिए अनेको चिरकाल से चली आयी परपराए समाप्त कर दी गई । उन्होने कहा कि इससे पूर्व दलाई लामा का चल-चित्र कभी नही लिया गया और न कभी रगीन चित्र ही लिया गया । हमारे लिए बन्धन क्यो शिथिल किए गये ? क्योंकि साम्यवादी सकट निकट था और वे पश्चिम से मित्रता करना चाहते थे ।

हम ल्हुंडुप ग्यात्सेल को शीघ्रता-पूर्वक चले । सुनहरी छत वाला यह पगोडाओं में सर्वश्रेष्ठ, ग्रीष्म भवन के मैदान मे एक पुष्पित झील के बीच मे है । वही परम पवित्रात्मा हमारी प्रतीक्षा मे थे । पूर्ण-तया खुले स्थान तथा सूर्य की रोशनी मे कुछ ऊचा सिंहासन झाडियो और पुष्पो से घिरा था । अपने प्रकाश-मीटर और कैमरे के कोणो को ठीक करके हमने सकेत किया कि हम तैयार है । दलाई लामा सिंहासन पर बैठने के लिए वाहर निकले । रीजेन्ट, प्रधान पुजारी और राजकीय सचिवो का एक समूह, नवयुवक दलाई लामा के दोनों ओर पंक्तिवद्ध थे । राजसी चोगों को परिचारको ने ठीक कर दिया । तव हमने अपने चार कैमरो से सभी कोणों से चित्र लेना प्रारभ किया ।

तीस मिनट मे हम अपना काम कर चुके थे। परम पवित्रात्मा ने अत्यन्त आश्चर्य-जनक ढग से काम किया। वह कथनानुसार मुस्कराते और हमारे कैमरे के लिए स्थितिया वदलते थे। इन बाहरी चित्रो के उपरान्त हमने समझा कि कार्य समाप्त हुआ, किन्तु यह परामर्श दिया गया कि दलाई लामा के कुछ चित्र उस सिहासन के समीप भी लिये जाय, जहा प्रात काल हमे आशीर्वाद दिया गया था। हमे इसके सत्य होने पर आश्चर्य-सा हुआ।

यद्यपि सिहासन के कमरे मे फोटो खीचने के लिए बहुत अधेरा था, तथापि हमने परम पवित्रात्मा को एक चित्र-विचित्र सजावट वाले खम्भे के पास, जहा सूर्य की एक किरण आ रही थी, खडा करके अपने कर्म-चारियो से बात करते फिल्म खीची। मैंने उनके सिहासन पर आसीन तथा पीली चोटी वाली टोपी, जो कि उनका मुकुट है, धारण किये अनेक चित्र फ्लैशलाइट की सहायता के लिए।

हम नौजवान शासक से अत्यन्त प्रभावित हुए। वह दयालु, मान-वीय भावो से पूर्ण और सुसस्कृत व्यवहार वाले लगते थे और किसी भी प्रकार भयभीत कठपुतली नही जान पडते थे। हमने उनसे सीधे बात नही की और न उन्होने ही हमसे 'ला-लैस' ('हा' के अतिरिक्त, जिसके साथ-साथ तिब्बती नम्रता की सूचक अन्त श्वास की ध्वनि भी रहती थी) कुछ कहा, यह भी ऐसे अवसरो पर, जबकि हमारा दुभाषिया क्यिपुप, कैमरे की स्थिति के विषय मे, हमारी इच्छा से उन्हे अवगत कराता था।

दलाई लामा का सभी तिव्वती सम्मान करते है और उनसे प्रेम करते है। वे उन्हे दयालु बुद्ध और स्वर्गीय त्रयोदश का महान अवतार मानते हैं। वे आशा करते है कि वह बुद्धि, दया और नेतृत्व मे अपने पूर्ववर्त्ती शासक के समान, वल्कि अधिक ही निकलेंगे।

१३ दलाई लामा का परिवार तथा अन्य लोग

दलाई लामा से मिलने के उपरान्त हम नवयुवक शासक के परिवार से भेट के लिए बुलाये गये। उनके पिता को, जो अपने पुत्र के त्रयोदश दलाई लामा के नवीन अवतार के रूप मे खोजे जाने से पहले पूर्वी तिब्बत मे एक किसान था, एक चौमजिला सफेद पुता पत्थर का मकान अपने गौरवशाली पुत्र के विशाल दुर्ग के समीप ही दे दिया गया था। वहा वह कुछ दिन पूर्व अपने देहान्त तक राजसी ठाटबाट से रहता था। अब वह मकान शासक की माता का है, जो वहा अपने अन्य दो पुत्रों, दो पुत्रियों और अनेक पौत्रादि के साथ रहती हैं।

जब हम पहुंचे तो हमने देखा कि उत्सव के वे ही नर्तक, जिन्होने दलाई लामा के ग्रीष्म-भवन मे अभिनय किया था, आंगन मे शाही परिवार के लिए अन्य खेल प्रस्तुत कर रहे थे। खेल देखनेवाले नागरिको और भिक्षुओ की भीड के बीच से हमे धक्का देकर मार्ग करना पडा और दोर्जे चांगवावा हमे एक अधियारे जीने से मकान की दूसरी मजिल पर ले गया। यहां पर भिक्षु के नारगी वस्त्र पहने, दलाई लामा के १९ वर्षीय भाई लोसंग समतेन ने हमारा स्वागत किया। लोसग ने प्रेमपूर्वक मुस्कराहट के साथ कसकर हाथ मिलाया और हमे सामने के एक बड़े कमरे मे ले गया, जहा परिवार के शेष सदस्य भी खुली हुई खिड़कियों के समीप नीचे आंगन मे होते हुए नाटक को देखने के लिए एकत्र थे।

परिचय के उपरान्त हम सारे परिवार को मकान की छत पर रगीन चित्र खीचने के लिए ले गये। इस समुदाय मे सबसे प्रभावशाली दलाई लामा की माता, ढेक्ये सिरिंग और उनकी ३२ वर्ष की विवाहित मांसल वहन सिरिंग दोमा थी। दोनो वहुरगे रेशमी वस्त्र और तिब्बती फर के

टोप धारण किये थी और रत्न-जटित मन्त्रमजूषाए उनके गले से लटकी थी। साधारणतः फीरोजे या रत्नो से जटिल मन्त्र मजूषा (का-उ) तिब्वत की धनी महिलाओ का प्रचलित आभूषण है। वे केवल शोभा के ही लिए नही होते। अधिकतर मन्त्रमजूषा के अन्दर एक तावीज रक्खा रहता है, जो पहननेवाले के लिए सौभाग्य लाता है और यदि 'का-उ' मे श्रेष्ठ रत्न जडे हो, तो विश्वास किया जाता है कि वे पहननेवाले की हड्डियो को दृढ वनायेगे।

अव दोर्जे हमे अभिनेताओ के नजदीक से कुछ चित्र लेने के लिए नीचे आगन मे ले गया। यही अपने बैटरी से चलनेवाले वहनीय टेपरिकार्डर मे हमने उनके विलक्षण सगीत और उच्चारणो का रिकार्डिग भी किया, जो पश्चिमी कानो को वडा ही अजीब लगता है। जव मैं कधे पर रिकार्डर को रखकर और छोटे माइक को हाथ मे लिए मच पर पहुचा तो खेल लगभग रुक ही गया। अभिनेता अपने को भूल गये और विचित्र मशीन को ताकते रह गए तथा दर्शको मे हँसी के फव्वारे छूट पडे। उनके प्राचीन नाटक मे एक नया प्रकरण जोड दिया गया था और उन्होने इसे पसन्द किया। कुछ ने यहा तक समझा कि फिल्म लेना और रिकार्डिग भी दृश्य का एक भाग है। बिना जाने ही मैं भी तिब्वती अभिनेता वन गया।

डैडी ने कहा, "अगली बार जब ये लोग इस नाटक को देखेंगे तव तीसरे दृश्य मे तुम्हे मंच पर उपस्थित होते न देखकर प्रबन्धको पर धोखा देने का सन्देह करेगे।"

ल्हासा मे हम तिव्वतियो के विस्तृत और वशीभूत कर लेनेवाले अतिथि-सत्कार से बहुत प्रभावित हुए। राजधानी के हमारे ग्यारह दिनो मे हमारे आतिथेय हमे निरन्तर पार्टी, भेंट और दृश्यावलोकन के प्रसन्न करनेवाले कार्यक्रम मे लगाये रहे। एक वार आप उन्हे जान ले और उनका विश्वास प्राप्त करलें तो वे अपने घर और हृदय आपके लिए खोल देंगे और आपके लिए कुछ भी उठा न रक्खेंगे। अपने ल्हासा के मेजमानो की सहायता से दो सप्ताह से कम मे वह काम कर डाला, जिसे अनेक पूर्वी नगरो मे महीनो लग जाते। हम जिन मैत्रीपूर्ण, उदार

हृदय तिब्बतियों से मिले, उनके लिए सदैव स्निग्ध और प्रसन्नतापूर्ण स्मृतियां बनाये रहेंगे।

पर्याप्त मात्रा मे भोजन और चांग (जौ की शराब) की पार्टियां ही संसार की दूसरे नबर की सबसे ऊंची राजधानी के निवासियों का मुख्य मनोरंजन है। (बोलीविया की राजधानी ला पेज ल्हासा से कुछ सौ फुट अधिक ऊंची है।) चूंकि वहा न तो स्वयचालित सवारियां है, न नाटकघर हैं, न रेडियो हैं, न सगठित खेलकूद हैं, न समाचार-पत्र या पत्रिकाए हैं और न पुस्तकें ही हैं, उन प्राचीन धर्म-ग्रन्थों को छोडकर, जिन्हे कुछ ही लोग पढ सकते हैं। इसलिए ये विशेष समारोह, जो कई बार तीन-तीन दिन तक चलते है, मनोरजन और विश्राम के एकमात्र साधन हैं। ग्रीष्म ऋतु में वे पिकनिक पसन्द करते हैं, जो ल्हासा के इधर-उधर खुले मैदान या पार्को मे सुन्दर सजावटवाले तम्बू लगाकर और चबूतरे बनाकर की जाती हैं और खुले मे कई दिनों तक दावतें चलती हैं।

हम अपने निवास-स्थान ट्रेडालिगा को प्रत्येक रात्रि बुरी तरह भरे पेट और चकराते मस्तिष्क लेकर लौटते थे। हम केवल बडे सामन्तों द्वारा उनके घरों मे दिये गए निमन्त्रणो या सरकारी उत्सवो और आयोजनो मे ही शामिल होते थे, इसलिए वहा का व्यवहार पर्याप्त नियन्त्रित ही होता था, किन्तु समस्त देश मे होनेवाली इस प्रकार की अन्य बैठकें बडी कोलाहलपूर्ण होती है। हरेक आतिथेय का प्रयत्न यह होता है कि अपने अतिथियो को अधिक-से-अधिक शराब मे मग्न कर दिया जाय। पार्टी सफल तभी समझी जाती है जबकि अतिथि पूर्णतया चेतनाशून्य हो जाय, जिससे यह प्रकट हो कि शराब अत्यन्त आकर्षक और श्रेष्ठ थी। यदि अतिथि नशे में इतना बेसुध हो जाय कि अपनी कुर्सी से उठ भी न सके, तो एक परम्परागत रूमाल उसकी गरदन पर प्रशंसा के रूप मे डाल दिया जाता है।

तिब्बत मे हमारे अधिकतर सम्पर्क सामन्त और उच्च लामाओं या सरकारी अधिकारियों से, जो इन्ही दोनों वर्गों में से होते है, रहे। यह स्वाभाविक ही था, क्योंकि एक तो हम सरकारी तौर पर बुलाये हुए थे,

दूसरे हमारे पास समय बहुत कम था। सबसे अधिक हम ल्हासा को देखना चाहते थे, क्योकि ल्हासा धर्म-निरपेक्ष सरकार और धार्मिक शासन का मुख्य स्थान है।

सामन्त लोग जो कि भिक्षुओ के सामान ही महत्वपूर्ण शासकीय पदो पर हैं, बडा प्रभाव रखते है। वे लगभग दो-तिहाई भूमि के स्वामी है, शेष भूमि मठो की है। अपने देहाती निवास-स्थानो मे वे लगभग वैसे ही रहते हैं, जैसे कि मध्यकालीन यूरोप के आरामतलब वैरन रहा करते थे, केवल पानी के नल तथा अन्य सुविधाओ के विना, जिन्हे हम पश्चिम के निवासी अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। सामन्त अपने घरो मे अनेक दर्जी तथा अन्य कारीगर रखते है, शायद एक कलाकार भी, जो थका या धार्मिक चित्रो को वनाता है तथा अन्य नौकरो की भी एक पूरी सेना, जो किसी प्रकार की मशीन आदि के अभाव मे सारे भारी कामो को शरीर-श्रम से करने के लिए आवश्यक है। घरेलू आवश्यकता की अनेक वस्तुए, भोजन और कपडा, यहातक कि चमडा और याक की कच्ची खाल—अपनी ही रियासत मे तैयार होती हैं। इस तरह अधिकतर सामन्तो के घर स्वत पूर्ण होते है। साधारण तौर पर प्रत्येक सामन्त एक व्यक्तिगत पुजारी भी रखता है, जो कि घर मे ही रहता है और वर्ष भर के सम्पूर्ण धार्मिक कृत्यो को करता है तथा यदि परिवार मे कोई बीमार पडता है, यात्रा पर जाता है या किसी विशेष कार्य के लिए देवताओ की सहायता चाहता है, तो वह विशेष प्रार्थना के लिए उपलब्ध रहता है।

तिब्बत मे सामन्तो का अपना वर्ग अलग ही है। उनके तथा किसान गडरियो और दूसरे गरीब मनुष्यो के वीज विशाल खाई है। किसान, भूस्वामी या अधिकारी के सामने नीचे झुकता है और सामन्त वर्ग को सम्वोधन करते समय भिन्न प्रकार की तथा अत्यन्त दीन शव्दावली का प्रयोग करता है। जमीदारियो मे रहनेवाले किसान। वैसे ही भूमि के दास होते है, जैसे कि जागीरदारो के समय मे यूरोप के किसान। वे अपने करो का भुगतान श्रम, उपज और नकद धन के रूप मे करते हैं।

केन्द्रीय आगन के चारो ओर वने सामन्तो के पत्थर के मकान वडे

प्रभावपूर्ण होते हैं। अन्न और खाद्य पदार्थों के गोदाम तथा घोड़े, खच्चर और चौपायो के अस्तबल तीन दिशाओं को घेरे है। लकडी के प्रवेश-द्वार के सामने परिवारो के निवास-स्थान चौथी दिशा को भरते है। ये अन्य इमारतो से ऊचे तथा पांच मजिल तक ऊचाई के है। अर्ध दुर्गो जैसे इनमे से कुछमे शीशे की खिड़कियां हैं। ये शीशे वाहर से मगाये गए है, अतः बहुत ऊचे मूल्य के है। केवल ल्हासा मे ही धनी व्यक्ति शीशे लगाने की फिजूलखर्ची कर सकते है।

सामन्तो के देहात के मकानों और ल्हासा के मकानो मे भी हम गये। हमने पाया कि सबसे अच्छा और सवसे बडा कमरा सदैव पूजा-गृह ही होता है। यहां समस्त कलात्मक वस्तुएं—अधिकतर—धार्मिक रक्खी जाती है। बुद्ध की तथा लामा धर्म के अन्य देवताओं की दुर्लभ मूर्तियां, जिनमे से कुछ रत्न-जटित होती है और चमकदार अम्वर की मालाओं मे लिपटी होती है, गहरे और चमकीले रगो से जगमगाते नये थका तथा मूल्यवान पुराने भी, जिनसे रग उड गये है, तिव्वत के धर्मग्रन्थ काग्यूर की प्रतियां और उनपर किये गए भाष्य, तैग्यूर (दुर्लभ चीनी मिट्टी के बर्तन) तथा चांदी के सुसज्जित तिव्वती चाय के बर्तन भी रहते है। तिव्वती मेजमान अपने अतिथि का स्वागत साधारणतया पूजागृह मे ही करता है।

प्रत्येक तिव्वती घर मे किसी-न-किसी प्रकार का पूजा का कमरा जरूर होता है, चाहे वह कुछ ही वर्गफुट क्यो न हो। यह हमे तव ज्ञात हुआ जव हमने सडक के किनारे गांव के मकानों मे रात व्यतीत की और छोटे कमरो में झाककर देखा, जहां बुद्ध और प्रसिद्ध वौद्ध सन्तो के चित्रों के सामने मक्खन के तेल का दीपक जलता रहता था। गरीव-से-गरीव किसान अपनी छोटी-सी झोपडी का एक कोना मन्दिर की तरह सुसज्जित रखता है।

किसान और उनकी पत्निया दोनो ही कठोर और परिश्रमी जीव होते हैं। स्त्रियां, जैसाकि यूरोप के भीतरी ग्रामीण प्रदेशो मे भी है, घर का काम करती है, पशुओ की देखभाल करती है, ईंधन लाती है और खेतो मे मर्दो के साथ काम करती हैं। तिव्वत से वापसी के मार्ग

पर डैंडी क़ी दुर्घटना के वाद उनके वाहको की टीम मे कभी-कभी दो या तीन औरतें भी शामिल हो जाती थी। वे भी उतनी ही मजवूत होती थी, जितने कि मनुष्य और दुर्गम यात्रा को विना शिकायत के सहन कर लेती थी। ल्हासा के मार्ग मे हम अनेक किसान स्त्रियो के समीप से गुजरे। वे गठी हुई और दृढ मासपेशीवाली थी। वे सुन्दर नही थी, किन्तु उनके चेहरे पर दृढता और निश्चय के भाव दीखते थे और ऐसा लगता था कि वे अपने मर्दों का किसी भी स्थिति या वाद-विवाद मे मुकावला कर सकती है।

तिव्वत मे, अन्य एशियाई देशो के विपरीत, स्त्रियो को बौद्ध धर्म के प्रारम्भ से ही समान अधिकार प्राप्त हैं। राकहिल का कहना है कि तिब्वती समाज मे स्त्रियो की प्रमुख स्थिति, प्राचीन काल से ही इस राष्ट्र की 'विशेषताओ' मे से है। यह अनेक अमरीकनो को विस्मित कर देगा, जो यह समझते है कि दोनो लिगो की समानता स्वीकार करने मे उनका देश अग्रणी है। वास्तव मे, जहातक स्त्रियो के सवध मे प्रगतिशील विधान का सम्बन्ध है, हमारे अनेक राज्य अन्ध-युग मे ही है। इस विषय मे दूर स्थित तिव्बत हमसे कही आगे है।

जव कोई तिब्बती लडका या लडकी शादी करते है, वे ऐसा समान शर्तों पर करते है। उसी समय एक समझौता कर लिया जाता है कि दोनो पक्षो को आवश्यकता पडने पर तलाक देने मे क्या व्यय करना होगा। यदि वे पृथक होते है तो जिसका दोष होता है, उसे भुगतान करता पडता है। औरत घर का भार सभालती है और यदि नौकर नही है तो घर के सभी काम करती है। यदि नौकर है, तो वह उसका निरीक्षण करती है। किन्तु मर्द घर के काम मे भी हिस्सा लेता है, वह अक्सर नये वर्ष की दावत जैसे अवसरो पर भोजन वनाता है और घर की अधिकतर सिलाई, विशेषत चमडे के कपडो की, करता है। यदि स्त्री का पति मर जाता है तो वह सवसे बडे लडके के वयस्क होने तक जायदाद की देखभाल करती है। अपने आदमियो के साथ वह सव प्रकार की हँसी-खुशी और जिम्मेदारियो मे वरावर भाग लेती है।

केवल इतना अवश्य है कि कुछ ही तिव्वती लडकियां अपना पति

स्वयं चुन सकती हैं। उनके माता-पिता शादी तय करते हैं, किन्तु कभी-कभी प्रेम में फसी दृढ़ निश्चयी तिब्बती लड़की इस बाधा से बच भी जाती है, कभी घर से भाग जाने की नौबत आ जाती है, जैसा अन्य देशों मे होता है। हमे स्मरण है कि सुसभ्य, आधुनिक फ्रांस तक में माता-पिता अपनी लड़कियो के वर चुनते हैं, कुछ तो व्यावहारिक कारणो से, कुछ इस आधार पर कि वे बुद्धिमत्तापूर्ण चुनाव करने की अधिक योग्यता रखते है।

बहुपत्नी प्रथा उनमे ही है, जो इसे चाहते है और एक से अधिक पत्नियों का पालन-पोषण कर सकते हैं। ल्हासा मे तथा अन्यत्र अधिकतर मनुष्यो की एक ही पत्नी है। भ्रमणशील गड़रियो और किसानो में बहुपति-प्रथा का साधारण रिवाज है। इस प्रकार के लोगो मे जब लड़की का किसीसे विवाह होता है तो वह उसके छोटे भाइयो की पत्नी स्वय ही बन जाती है। वे अपने सारे पति के अधिकार उसपर तबतक रख सकते हैं जबतक वे स्वयं विवाह करके अपना अलग घर बसाने का निश्चय न कर ले। ऐसे सम्बन्धों से होनेवाले सभी बच्चे स्त्री के विवाहित पति के जायज बच्चे समझे जाते है, किन्तु ऐसे देश मे, जहां चौथाई पुरुष भिक्षु बनकर अविवाहित रहने की शपथ ले लेते है, यह अनुचित मालूम होता कि एक लड़की को एक से अधिक पति करने की अनुमति दी जाय।

एक सामन्तवादी बौद्ध समाज मे और पूर्णरूप से भिन्न प्रकार के देश में हमे अपने देश का जैसा नैतिक विधान पाने की आशा भी नही करनी चाहिए। यह जानकर हमे धक्का लगा कि तिब्बत जैसे ऊंची सभ्यता और संस्कृतिवाले देश मे, साधारणतया असभ्य और आदिम समाज मे पाई जानेवाली बहुपति-प्रथा भी है। डब्ल्यू०डब्ल्यू० राकहिल, जिसके विषय मे हमने अन्यत्र कहा है, इस प्रथा के विषय में रोचक स्पष्टीकरण देता है। 'लामाओ के देश मे' नामक पुस्तक मे वह लिखता है :

"जोतने-योग्य भूमि क्षेत्रफल मे थोड़ी ही है और सबपर खेती हो रही है। इसलिए किसीके लिए भी अपने खेत बढ़ा सकना सभव नहीं है और वे साधारण तौर पर एक छोटे परिवार के भरण-पोषण लायक ही पैदा करते हैं। यदि परिवार के मुखिया का देहान्त होने पर जायदाद उसके पुत्रो में बांटी जाय और यदि सबकी पृथक पत्नी हुई तो यह उन

सबकी आवश्यकताओ को पूरा करने मे समर्थ न होगी। साथ ही पैतृक मकान भी उन सबके लिए अपर्याप्त होगा। सारी मानवजाति के लौकिक अनुभव ने दिखा दिया है कि एक छत के नीचे अनेक परिवार शान्ति और सहमति से नही रह सकते। इस प्रकार इस समस्या का हल यही रह जाता है कि परिवार के लडके अपने मध्य एक ही पत्नी रक्खें, जिससे उनकी पैतृक सम्पत्ति अविभक्त रह जाय और वे किसी हद तक बचत भी कर सकें।"

किसानो की पत्नियो के विपरीत अनेक धनी परिवारो की महिलाए और अधिकारियो की पुत्रिया, जिनसे मैं ल्हासा मे मिला, सुन्दर है। उनकी त्वचा स्वच्छ और हलके रग की है और आखें चमकीली है। उच्च वर्ग की महिलाए अपने रूप-रग को चिकना और हलका रखने के लिए हर सम्भव उपाय करती है। शीतकाल मे वे, जहातक हो सकता है, घर के अन्दर ही रहती है, जिससे कि उन भयानक हवाओ से सुरक्षित रह सकें, जो किसानो और बजारो के चेहरो को गहरे रंग का और खुरदरा बना देती हैं। ग्रीष्म मे वे धूप से बचने के लिए छाते लेकर चलती है या अपने टोपो पर छज्जे जैसी आड लगाती हैं। पूर्वी और पश्चिमी दोनो प्रकार की शृंगार-वस्तुओ की बहुत मांग रहती है। कुछ स्त्रिया अपने चेहरो पर कच्चा रबड मल लेती है। यह दात के दर्द और तेज हवाओ से होनेवाले कष्ट से बचाता है। इस विश्वास से भी वे इसका प्रयोग करती हैं कि यह उनकी चमडी की रक्षा करेगा।

किसान और उच्चवर्गीय दोनो महिलाओ की त्योहार की पोशाकें बहुत-कुछ समान होती हैं। दुर्लभ रेशम से परिश्रमपूर्वक बारीकी से बनाई हुई और सुवर्ण तथा रत्नो से जडी ये शानदार पोशाकें बहुमूल्य होती हैं। साधारण स्तर की किसान महिला कम-से-कम ऐसी पोशाक विशेष अवसरो के लिए सुरक्षित रखती है। हरएक उच्चवर्गीय महिला के पास अनेक पोशाकें होती हैं। उदाहरण के तौर पर दलाई लामा की माता के वस्त्र-भडार मे एक ऐसी शानदार और भडकीली पोशाक है, जिसका जोडा अमरीका मे २५ हजार डालर मे नही बन सकता। सारी पोशाक का सबसे प्रभावशाली आभूषण सिर का आवरण है। लकड़ी

का चौखटा, जिसपर बाल सजाये जाते हैं, फीरोजे, मूगे और मोतियो से खूब घना सजा होता है। जो इतनी सामर्थ्य रखते है, वे सोने के परम्परागत लबे झुमके कानों मे पहनते हैं। ये भी फीरोजे, मोती और मूगो से जड़े होते हैं। गले मे दो या तीन लड़ की प्रार्थना के दानो की माला मूगे, नीलम या अम्बर की होती है।

गुलूबन्द, बटन, सोने या चादी के कड़े और एक मन्त्रमजूषा, जो फीरोजे या अधिक मूल्यवान रत्नो से जड़ी होती है, तिब्बती स्त्रियो के प्रचलित गहने हैं। जो सोना खरीदने की सामर्थ्य नही रखते, वे चादी पहनते है। गरीब-से-गरीब औरत भी फीरोजे से जड़े चांदी के झुमके और शायद शीशे के दानो की माला धारण किये रहती है। कभी-कभी धनवान महिलाएं बहुमूल्य टोप पहनती है, जिनके छज्जे पर चारो ओर मोतियों की लड़े लगी होती हैं।

तिब्बती लोग इतनी अधिक मात्रा मे गहनो के लिए, जोकि स्त्रियो की ही नही, बल्कि मनुष्यो की भी पोशाक के आवश्यक अग है, धातु और पत्थर कहा से पाते है? तिब्बत मे बेढगे ऊपरी तरीके से, जडाई के काम के लिए काफी सोना इकट्ठा कर लिया जाता है और चादी अधिकतर चीन से आती है। मोती, मूगा तथा अन्य रत्न भारत, भूटान और नेपाल से आते हैं। नेपाल और तिब्बत के मध्य हमेशा से खूब व्यापार होता रहा है। एशिया के सर्वश्रेष्ठ जौहरी, जो पत्थरो को काटने मे भी अत्यन्त कुशल होते हैं, नेपाल में है, जहां से मूल्यवान बिना कटे पत्थर कारवाओ द्वारा तिब्बत लाये जाते है। यहां स्थानीय कारीगर उन्हे परंपरागत नमूनो और जडाव मे ढालते हैं, जो तिब्बती रुचि के अनुसार हो। फीरोजा तिब्बतियो को अपने ही पर्वतो मे मिलता है, किन्तु कुछ सर्वोत्तम फीरोजे चीन के हुनान प्रान्त से आते हैं और ल्हासा के मुसलमान सौदागर ईरान से भी फीरोजा मंगाते हैं, जो अत्यन्त मूल्यवान होते है।

तिब्बतियों मे फीरोजा सबसे अधिक प्रिय और सम्मानित पत्थर रहा है। वे इसमें विशेष गुण मानते हैं। उनके विश्वास के अनुसार फीरोजा दानवो से रक्षा करता है, छूत को दूर रखता है और सौभाग्य

तथा स्वास्थ्य लाता है। बडे फीरोजो पर अक्सर रहस्यपूर्ण मन्त्र खोदे जाते है, जो उनमे दुर्भाग्य और रोग से और भी अधिक सुरक्षा की शक्ति उत्पन्न कर देते है।

तिब्बती रोगो से रक्षा के लिए जादू-टोनो पर जैसा जोर देते है, उसे देखते हुए आपको आश्चर्य होगा कि वहा औषधि-विज्ञान की क्या दशा होगी। मैं इसपर यदि कुछ भी टिप्पणी करू तो यह एक अपरिचित व्यक्ति का ऊपरी निरूपण मात्र होगा। इसके अतिरिक्त तिब्बत मे संख्या विभाग या जनगणना का कोई लेखा नही है, जिससे औषधि, रोग या अन्य प्रकार की विशेष सूचना मिल सके। ल्हासा मे चाकपोरी-शिखर (लोह शिखर) पर चिकित्सा महाविद्यालय है, जहा सब बडे मठो से छात्र पढने के लिए आते है। इस संस्था के पाठ्यक्रम से, तिव्वत मे आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र का कुछ स्तर मालूम हो सकता है। इसका पाठ्यक्रम आठ वर्ष का है और विद्यार्थी अपना अधिकतर समय लम्बे मन्त्र और टोटको को याद करने मे व्यतीत करते हैं। वे कुछ जडी-बूटियो के औषधि-विषयक गुणो का ज्ञान अवश्य प्राप्त करते है, किन्तु उन्हे शरीर-विज्ञान का कुछ ज्ञान नही होता और न वे शरीर के मुख्य अगो की स्थिति या कार्य ही जानते हैं। एक रोगी, जिसे छूत की बीमारी का सन्देह हो, उसकी नाडी का निरीक्षण एक लम्बी डोरी के सिरे पर किया जाता है।

चेचक ने जनता का बहुत विनाश किया है, किन्तु अब धीरे-धीरे वे टीके के विषय मे जानने लगे हैं। कस्तूरी, कपूर और कुचला से, जिनका पश्चिमी औषधियो को तैयार करने मे भी उपयोग होता है, ल्हासा चिकित्सा महाविद्यालय के भिक्षु चिकित्सक परिचित हैं। रोग कुछ भी हो, लामाओ को रोगी के घर बुलाया जाता है और पवित्र पुस्तको के उद्धरण, विशेषकर औषधियो के देवता की प्रार्थना, पुस्तक मे से पढवाये जाते है।

१४

ल्हासा के अधिकारियों से हमारी बातचीत

ल्हासा का हमारा अधिकाश समय दलाई लामा की सरकार के अधिकारियों से वातचीत करने मे व्यतीत हुआ, किन्तु इससे पूर्व कि उनसे वातचीत के विषय मे कुछ लिखू, मैं यह वता देना चाहता हूं कि इस धर्माश्रित-प्रभुता वाले देश मे किस प्रकार कार्य-सचालन होता है। सर्व-प्रथम यह जान लेना चाहिए कि सरकार किसी भी प्रकार के नियम या विधान से वंधी नही है। ल्हासा की कार्यकारिणी अधिकतर दलाई लामा के साथ बदलती है। ऐसी परिवर्तनशील शैली का विवरण कुछ वर्षो के लिए ही यथार्थ हो सकता है, किन्तु आजकल तिव्वत का शासन इस प्रकार नियमित है :

चूकि दैवी राजा अभी अठारह वर्ष का नही है—इस आयु मे वह व्यक्तिगत रूप से शासन ग्रहण करेगा—रीजेन्ट राज्य के समस्त कार्यो पर शासन करता है। रीजेन्ट के अधीन तीन मन्त्रिमण्डल हैं, प्रत्येक के कर्तव्य विभिन्न हैं और अधिकारों की सीमा भी पृथक है। सवसे शक्ति-शाली मन्त्रि-परिषद कशग है, जो तीन शापे—या अभिक्षु मन्त्री—और एक भिक्षु शापे, कलोन लामा से, जो इन चारों मे सवसे वरिष्ठ हैं, निर्मित है शासन के समस्त कार्य—प्रशासनिक, न्यायिक और वैधानिक—इन चारो के अधीन हैं। इनकी नियुक्ति रीजेण्ट द्वारा होती है। ये शापे, जो २५ रुपया, लगभग ५ डालर वार्षिक वेतन पाते हैं, धनी जागीरदार होते हैं और आर्थिक दृष्टिकोण से स्वाधीन होते हैं।

दो निचले मन्त्रि-मण्डलो से अधिकार और सम्मान में उच्च, मुख्य पुरोहित या चिक्याप कैम्पो होता है, जो देश के सभी पुरोहितो का मुखिया होता है। उस हैसियत से तथा दलाई लामा के कुटुम्ब का

सदस्य होने के कारण वह महान शक्ति और प्रभाव रखता है।

इन मन्त्रि-मडलो मे से एक भिक्षुओ का तथा दूसरा साधारण लोगो का होता है। पहला चार व्यक्तियो का यिकशाग—पत्रो का घोसला—सारे भिक्षु अधिकारियो की नियुक्ति करता है और धार्मिक मामलो से सम्वन्ध रखता है। सामान्य जनो का समानान्तर मन्त्रिमण्डल, जिसके सदस्य सिपोन कहलाते हैं, तिब्बत के आर्थिक और व्यापारिक मामलो को नियन्त्रित करता है। इन मन्त्रिमण्डलो मे हाल ही मे एक विदेश कार्यालय और जोड दिया गया है।

एक राष्ट्रीय सभा भी है, जो सोंगदू कहलाती है। यह चुनी हुई सस्था नही है। यह कई सौ महत्वपूर्ण सरकारी कर्मचारियो की वनी होती है। इसे दलाई लामा या रीजेन्ट के आमन्त्रण पर, जबकि विशेष परि-स्थितिया सरकार के सामने होती हैं, एकत्र किया जाता है। सोगदू को अपने मत द्वारा रीजेन्ट को हटा देने का अधिकार है, किन्तु इसका कदाचित ही उपयोग होता है। यह सभा अपने पूर्ण आकार मे कदाचित ही मिलती है, किन्तु अपने कर्तव्यो को एक वडी कमेटी द्वारा सम्पन्न करती है, जो कशग से महत्वपूर्ण बिल प्राप्त करती है तथा अपनी कुछ सस्तुति करती है और उन्हे दलाई लामा या रीजेन्ट के पास भेजने के लिए अग्रसारित कर देती है।

तिब्बत मे प्रत्येक महत्वपूर्ण पद पर दो व्यक्ति एक भिक्षु और एक सामान्य जन, नियुक्त होते हैं। भिक्षु सदैव ज्येष्ठ माना जाता है, जिससे पुरोहित वर्ग को ही देश का वास्तविक नियन्त्रण प्राप्त है। सभी तिब्बती अधिकारी पुरोहित-वर्ग की इच्छाओ के प्रति सचेत रहते हैं, विशेष रूप से ल्हासा के बडे मठो के ड्रेपुग, सीरा और गैडन पुरोहितो की विचित्र तरगो के प्रति।

तिब्बत लगभग साठ जिलो मे विभाजित है, जिनका प्रादेशिक विभाजन स्पष्ट नही है। हरएक जिला जोग कहलाता है और उसका शासक जोग-पोन कहलाता है। सरकार का अधिकाश कर, जो व्यापार से मिलता है, इन्ही जोग से आता है। जोग-पोन प्रतिवर्ष कर के रूप मे एक नियत धन देते हैं। यदि शासक अपने जिले में नियत मालगु-

जारी से अधिक वसूल कर सका, तो वह अपनी जेब मे रख सकता है।

देश की अपनी मुद्रा-प्रणाली है, जिसकी मूल आर्थिक इकाई सैग है तथा अपनी डाक-प्रणाली भी है। डाक अनियमित व्यवस्था से चलती रहती है। डाक हरकारे, घंटी लगे भाले लेकर, जो उनके पद का चिह्न है पहाडी मार्गो पर पाच मील की झडी-दौड लगाते हुए ल्हासा से ग्यान्त्सी तक पत्र पहुंचाते रहते हैं। वहा से डाक भारत सरकार के प्रबन्ध मे 'टट्टू-डाक' द्वारा खच्चरो की पीठ पर जाती है।

तिब्बत सरकार मे एक अतिरिक्त, यद्यपि गैर-सरकारी भाग अनेक दैवी प्रवक्ताओं और ज्योतिषियो का रहता है, जिनके शकुनो पर सरकार के अनेक निर्णय आधारित होते है। ऐसे अनेक भविष्यवक्ता दलाई लामा की राजधानी मे पनपते है। किन्तु सबसे प्रभावशाली ल्हासा के समीप नेचुंग का दैवी प्रवक्ता है, जो राष्ट्र का मुख्य भविष्य-वक्ता है। यह भविष्य-वक्ता महीने मे एक बार समाधि-प्रवेश करता है और अधिकारियो के निर्णय तथा जन-साधारण के जीवन के पथप्रदर्शन के लिए भविष्य की झाकी लेता है। तिब्बतियो को दैवी प्रवक्ता पर महान आस्था है और उनकी भविष्यवाणियो पर पूर्ण विश्वास रखते है।

हमारे अनेक मित्रों ने हमसे पूछा कि ल्हासा में हमारी साधारण दिनचर्या क्या थी। उदाहरण के लिए ४ सितम्बर को ले लीजिये। ७ बजे प्रात. पोटाला की सूर्य की किरणो से चमचमाती सुनहरी छतों की ओर देखते हुए हम अपने सोने के गर्म थैलो से बाहर निकले। इस समय हमारा कमरा बड़े असुविधाजनक ढग पर ठडा था, क्योकि इसे गर्म करने का कोई साधन नही था और १२ हजार फुट पर गर्मी की रातें भी ठडी रहती हैं। यह शुक्ल पक्ष और पूर्ण चन्द्र का अवसर था और इसके फलस्वरूप ल्हासा के कुत्तो ने हमे रात-भर सोने नही दिया। ये सफाई करनेवाले, दिन मे सड़कों पर गुडी-मुडी होकर पड़े रहते हैं, पर रात मे इनका चीखना, भौंकना और लड़ना वर्णन से परे की बात है।

मेरे पिता कपड़े पहनते हुए बड़बड़ाये, "ल्हासा मे कुत्ते को सबसे अच्छा मित्र कहना कठिन है।"

अपने नौकर से हम प्रत्येक प्रभात मे वही शब्द दोहराते थे, "सिर-दार, ओ सिरदार, गुड मार्निंग, क्या गरम पानी तैयार है ?" साधारण तौर पर हमारे बूट के फीते बाधते-बाधते हाथ-मुह धोने के लिए केतली आजाती थी। तब कहा जाता था, "सिरदार, नाश्ता तैयार है ?"

सिरदार का हमेशा वही उत्तर होता था, "हां, साब, नाश्ता तैयार, अभी आता है।" नोर्बू के धुआभरी भट्टी रसोई से सिरदार हमारे लिए उबले बेर, ओट के गर्म दूध मे बना दलिया, टोस्ट और उबले अडे ले आता था।

नाश्ते के बाद ही दोर्जे हमे दिन की रौंद पर ले जाता था। पहला विराम अर्थमन्त्री सिपोन शकापा का शानदार घर था। यह वह अधिकारी था, जिसे हमे ल्हासा आने की अनुमति दिलाने के लिए सबसे अधिक श्रेय था और जिससे हम उत्सव के लच से पूर्व मिल चुके थे। लगभग ४५ वर्ष का, देखने मे सुन्दर सिपोन, ससार मे आजकल होने-वाली घटनाओ और वर्तमान अशान्त परिस्थितियो मे अपने देश के सम्मुख समस्याओ से भली-भाति परिचित था।[१]

चाय के कुछ प्याले समाप्त करते-करते हम अपने मेजमान से व्यापार के विषय मे कुछ प्रश्न पूछते और दोर्जे हमारे लिए अनुवाद करता था। उसने अमरीका से अपने व्यापार-मिशन की असफलता पर निराशा प्रकट की। तिब्बत की आर्थिक स्थिति उसके निर्यात पर निर्भर है, जो अधिकतर भारत द्वारा होता है। ऊन सबसे प्रमुख निर्यात है। उसके बाद कस्तूरी, फर और याक की पूछ। सयुक्त राज्य के साथ व्यापार का औसत २० से ३० लाख डालर वार्षिक का है। किन्तु सिपोन ने स्पष्ट किया कि यह सारा व्यापार भारत द्वारा होता है, वह मध्यस्थ के रूप मे रुपयो मे भुगतान करता है। यह व्यवस्था उन तिब्बतियो को सन्तुष्ट नही करती, जो यह समझते हैं कि उन्हे डालरो मे भुगतान पाने का अधि-

---

१. १६५३ की गर्मियो मे जब मैं हिमालय की तराई मे स्थित कालिम्पोग गया, सिपोन शकापा वहीं रहता था, किन्तु राजनैतिक कारणो से वह मुझसे नहीं मिला।

कार है।

"जबतक भारत तिब्बती व्यापारियों को डालरो में भुगतान नही करता, हमे डालरवाले देशो से सीधे व्यापार का रास्ता निकालना पड़ेगा।" उसने दोर्जे के अनुवाद द्वारा कहा। सुदूर तिब्बती तक अमरीका के हरी पीठवाले नोटो का मूल्य जानते है।

नगर के पूर्वी किनारे पर स्थित शकापा के घर से दोर्जे हमे विदेश कार्यालय वापस ले गया, जहां हम माननीय कशग—मन्त्रि-परिषद—के सदस्यो से मिले। जब उनके वरिष्ठ कशग के सदस्य प्रविष्ट हुए, कार्यालय के सभी लिपिक नीचे झुके। केवल तीन महत्वपूर्ण शापे उपस्थित थे और चौथा चीन के सीमान्त पर साम्यवादी खतरे को रोकने चाम्दो गया हुआ था।

महत्वपूर्ण त्रयी मे कालोन लामा, राम्पा सवांग लामा, वरिष्ठ मन्त्री सबसे आगे था। कालो-लामा ने अपने गजे सिर को छिपाने के लिए टोप नहीं पहन रक्खा था। दोनों सामान्य (अभिक्षु) शापे सरखाग सवांग चैम्पो, तिब्बत के विदेश मन्त्री का पुत्र और रगचार सवाग उसके पीछे थे। उनके पीले रेशमी कपड़े लाल पटकों से बधे थे। उन्होने अपने चौडी बाडवाले सुनहरे जरीदार टोप, जिनपर दो इंच लम्बी फीरोजे की काटियो से लाल मुकुट चढ़ा हुआ था, उतारे और अपने शासकीय शीर्षावरण को प्रकट किया। उनके काले बाल दुहरी चोटी में लाल फीते से बधे थे, जिनके मध्य मे फीरोजे और सोने का आभूषण लगा था और लम्बी चोटी पीठ पर लटक रही थी। यह आभूषण एक मन्त्र-मंजूषा है, जिसे उच्च अधिकारी धारण करते हैं।

कालो-लामा कशग की ओर से बोले और रिमशी क्यिपुप ने अनुवाद किया। दोनो सामान्य मन्त्री उसकी वरिष्ठता का पूर्ण सम्मान करते थे। उन्होने अपना मुह कठिनता से ही खोला होगा और वे महान लामा के कथन पर स्वीकृतिपूर्वक गरदन हिलाकर ही सन्तुष्ट रहे। यात्रा-सम्बन्धी व्यावहारिक कुशल प्रश्न के उपरान्त कालोन लामा ने वह प्रश्न पूछा, जो आजकल तिब्बत में प्रत्येक की जीभ पर मालूम होता है, "क्या साम्यवाद चीन मे स्थायी रूप से रहेगा और क्या यह समस्त एशिया

मे फैल जायगा ?"

मेरे पिता ने कहा, "इन कठिन प्रश्नो का उत्तर कोई नही दे सकता, किन्तु मेरे विचार से चीन की युगो पुरानी सभ्यता और संस्कृति पर साम्यवाद स्थायी प्रभाव नही डाल सकेगा। चीन का जीवन अभी तक कुटुम्ब और धर्म पर केन्द्रित रहा है और इन सस्थाओ का लाल सिद्धात विरोधी है। यदि साम्यवाद पूरी तौर से फेंका न भी जा सका, तो भी चीन उसका इस प्रकार सशोधन कर सकता है कि वह मास्को-प्रेरित विश्व-विजय की एक योजना-मात्र न रह जाय।"

"हम आशा करते हैं, जैसा आप कहते हैं वैसा ही हो और शीघ्र हो, जिससे तिब्बत की रक्षा मे सहायता मिले।" कालोन लामा ने गम्भीरतापूर्वक अपने साथियो की ओर से भी घोषित किया, जिन्होंने सम्मति मे ध्यानपूर्वक सिर हिलाया।

जव शापे विदा हो गये, दोनो विदेश-मन्त्रियो ने—सरखाग ज़ाज़ा, जोडे का सामान्य मंत्री और ल्यूशहर ज़ाज़ा लामा, भिक्षु मत्री—हमसे मक्खनी चाय के प्याले अपने साथ ग्रहण करने को कहा। वे तिब्बत की दो प्रधान समस्याओ, चीन और साम्यवाद के विषय मे हमें वताने लगे। ये समस्याए ही मुख्य कारण थी, जिनपर ध्यान रखकर दलाई लामा और उनकी सरकार ने हमे ल्हासा आने की अनुमति दी थी। भाग्यवश अपनी प्रार्थना के समयानुकूल होने के कारण, हम अपने देशवासियो को तिब्वत की अन्तर्राष्ट्रीय समस्याए वताने और वाशिंगटन (अमरीकी सरकार) तिब्वत को क्या सैनिक सहायता दे सकता है, यह पूछने के के लिए चुने गए।

एक पिछले अध्याय मे, विदेश मन्त्रियो के साथ अपनी वार्तालाप का विवरण मैं दे चुका हू। उन्होने हमे वताया कि तिब्वत सन १९१२ से पूर्णतया स्वतन्त्र है, भले ही चीन इसे अपने देश का एक प्रान्त मानने के लिए हठ करता रहा हो और उन्होने यह भी समझाया कि चीन, तिब्वत-विजय पर क्यो तुला है।

चीन-तिब्वत-सवधो के विस्तृत विवरण की समाप्ति पर, जो हमे टुकडे-टुकडे करके दुभाषिये क्यिपुप ने अनुवाद करके वताया, दोनो मन्त्री

विना किसी छिपाव के सीधी बात पर आ गये, "यदि तिब्बत पर साम्यवादी हमला होता है, तो क्या अमरीका सहायता करेगा ? और किस हद तक ?"

इस प्रश्न का उत्तर देना मुश्किल था। हम तिब्बत मे व्यक्तिगत नागरिक की हैसियत से थे, सयुक्त राज्य के प्रतिनिधियो के रूप में नही। स्वभावतः हम उन्हे कोई आश्वासन नही दे सकते थे। हम केवल इतना ही कहने का साहस कर सके कि हमारा रुख सहानुभूतिपूर्ण होगा, किन्तु वास्तविक सज्जा-सहायता, मुख्य रूप से संयुक्त राज्य के जनमत पर, जो काग्रेस की कार्यवाही से विदित होगा, निर्भर है। उन्हे इस उत्तर से विशेष सन्तोष नही हुआ। तिब्बतियो के लिए प्रजातान्त्रिक प्रणाली को, जो उनकी सामन्तवादी सरकार के बिल्कुल विपरीत है, समझना बडा मुश्किल है।

वास्तव मे, ल्हासा मे हमसे यह प्रश्न बार-बार पूछा गया। भिक्षु तथा सामान्य जन दोनो ही अपने राष्ट्र के भविष्य के विषय मे अत्यन्त चिन्तित थे।[1]

विदेश मन्त्रियों को यह अनुमान नही था कि वे किस प्रकार की सैनिक सहायता चाहते है। मुझे सन्देह है कि तिब्बती सेनाध्यक्ष भी अपनी आवश्यकताओं को स्पष्ट तौर पर लिखित रूप मे दे सकते थे। वे दे भी कैसे सकते थे, क्योंकि अपनी सीमा के बाहर होनेवाली सैनिक प्रगतियो के विषय मे वे सर्वथा अनभिज्ञ थे ?

चीनी साम्यवादी यदि आक्रमण करेंगे तो कुम्बुम और कोको नूर झील के प्रदेश होते हुए, उत्तरी पठार और रेगिस्तान से करेंगे। उस रास्ते से ल्हासा लगभग छ. सौ मील है। पहले दो सौ मील सरल है,

---

१. आक्रमण के तुरन्त बाद सरखांग ज़ाज़ा ने दलाई लामा के साथ भारतीय सीमांत के निकट चुम्बी घाटी में शरण ली। वह परम पवित्रात्मा के साथ अगली गर्मियो में ल्हासा लौटा और शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हुआ। अनेक लोग उसकी मृत्यु का कारण तिब्बती स्वतन्त्रता के विनाश के फलस्वरूप होनेवाला शोक बताते हैं।

किन्तु वहा से गुरिल्ला युद्ध मे निपुण सैनिको के लिए आक्रान्ता को परेशान करना, उसकी रसद रोक देना, कठिन नही है, जिससे शत्रु का यह साहस अत्यन्त व्यय-साध्य हो जायगा।

सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता निश्चय ही निपुण गुरिल्ला सैनिक है। इनकी तैयारी के लिए तिब्बत को अस्त्र-शस्त्र और बाह्य परामर्श की आवश्यकता है। अस्त्र-शस्त्रो मे वे हथियार सम्मिलित होगे, जिनकी गुरिल्ला युद्ध के लिए आवश्यकता है, जैसे गेरेन्ड राइफल, मशीन गन, छोटी तोप, हथगोला और सुरगें। परामर्श ऐसी प्राविधिक सहायता के रूप मे आवश्यक होगा, जो उन्हे आधुनिक युद्ध-सामग्री का उपयोग और सभाल बताये तथा उत्कृष्ट गुरिल्ला युद्ध की नवीनतम चालें बताये।

मैं विश्वास करता हूं कि सुरक्षा के लिए तिब्बत मे जनशक्ति पर्याप्त है, यदि वह ठीक से सुसज्जित और प्रशिक्षित हो जाय। साथ ही, ल्हासा मे हमे *यह भी आभास मिला कि सैनिक परामर्शदाताओ की एक टोली* के अतिरिक्त मित्र-राष्ट्रो की अधिक सेनाए भी पसद नही की जायगी।

यदि चीनी आक्रमण करते है तो उन्हे तिब्बत मे पैदल ही प्रवेश करना पडेगा। बर्फीले पहाडोवाले देश मे, जहा सडकें नही हैं और जहा की औसत ऊचाई १४ हजार से १८ हजार फुट है, ट्रक और टैंक काम मे नही लाये जा सकते। साम्यवादी पैराशूट द्वारा भी सैनिको को तिब्बत मे उतारने का प्रयत्न कर सकते हैं। यह सभावना तब है जबकि रूस वायु-सेना से सहायता दे। चीनी उस समय तक प्रतीक्षा कर सकते हैं जबकि वायु से सेना भेजने के लिए मौसम साफ हो। ऐसी योजना को पूरा करने के लिए एक ही दिन पर्याप्त है। वायु द्वारा लाये जानेवाले लाल सैनिको के लिए उचित जवाब उत्कृष्ट तिब्बती स्थल सेना ही हो सकती है।

मुझसे बार-बार पूछा जाता है कि हमारा देश तिब्बत की सहायता के लिए हाथ क्यो नही बढाता ? मेरे पिता और मैंने अपनी सरकार के प्रधानो से तिब्बत की समस्याओ पर विचार-विमर्श किया। उत्तर यह मालूम होता है : यदि सयुक्त राज्य तिब्बत को किसी भी प्रकार की सामरिक सहायता देता है, तो हमारे देश को तिब्बत की स्वतन्त्रता

पंचम दलाई लामा की स्वर्ण प्रतिमा
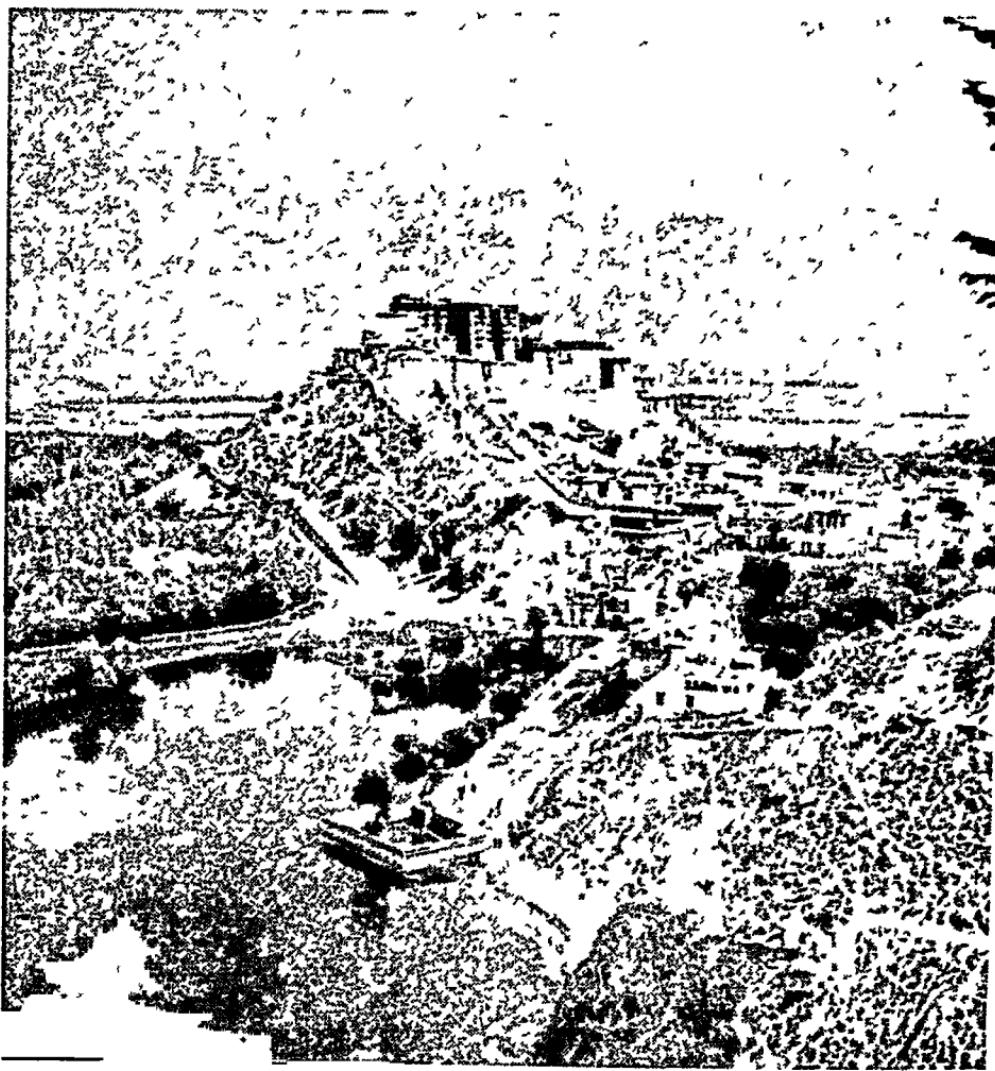
सुप्रसिद्ध बौद्ध मठ पोटाला : एक दृश्य

ससार का
विशालतम मठ
ड्रेपुंग गोम्पा
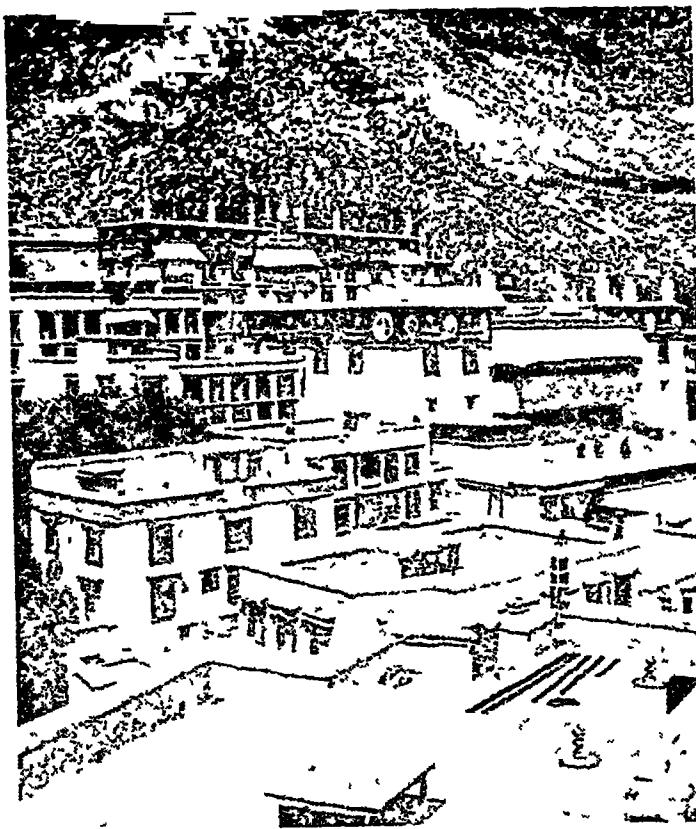
पुण्य कमाने के लिए प्रार्थना-चक्र घुमाता एक तिब्बती वृद्ध

तिब्बत का लोकप्रिय पेय याक-मक्खन की चाय मथते हुए

ग्रीष्मोत्सव के चित्र-विचित्र वस्त्रो मे एक तिब्बती महिला और उसका पुत्र

डाक
हरकारा

एक तिब्बती
किसान अपने
कुत्तो के साथ

तिब्बत का एक धनिक परिवार

लेखक और उसके पिता

बनाये रखने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए। किन्तु यदि चीनी साम्यवादी युद्ध पर उतर आयें, तो हम हिमालय-पार अपनी सेनाए किस प्रकार ले जा सकेंगे ? कैसे इसे रसद पहुंचायेंगे ? इसका अन्तिम विश्लेषण यह है कि संयुक्त राज्य इस कार्य को हाथ मे नही ले सकता।

सन् १९५० की समाप्ति के लगभग ल्हासा के हमारे मित्रो से सूचना मिली कि तिव्वत को सास लेने का अवसर मिला है—शायद १९५१ के वसन्त तक और संभवतः ग्रीष्म ऋतु के आरभ तक आक्रमण नहीं होगा। उस समय तक तिव्वत-शान्ति-मिशन, जो हमारे मित्र सिपोन शकापा की अध्यक्षता मे इस समय नई दिल्ली मे है, लाल चीन से किसी समझौते पर पहुंचने की आशा रखता है।

मेरे लिखते समय शकापा और भारत-स्थित चीनी साम्यवादी राजदूत मे वातचीत प्रारंभ हो गई है। जैसाकि एक भारतीय अधिकारी ने कहा है, "चीनी और तिब्वती दोनो ही मामले मे ढीलढाल करने में निपुण हैं," चीनी-तिब्बती विचार-विमर्श कई महीनो तक चल सकता है, किन्तु सकेत है कि किसी भी समझौते के अनुसार चीन की नाममात्र की प्रभुता मे तिव्वत को स्वायत्त शासन मिल जायगा। उस दिन हमारी मिलन-सूची मे एक अन्य अधिकारी था, सरोग शापे, जो तिब्वती सेना का भूतपूर्व जनरल था। आजकल अवकाश-प्राप्त ६३ वर्षीय सरोग शापे अपने देश का प्रसिद्ध सबसे धनी मनुष्य है। वह एक तीर बनानेवाले का पुत्र है, जिसका ल्हासा में एक निर्धन लडके के रूप मे जीवन प्रारंभ हुआ और तिव्वत के राकफेलर के रूप मे समाप्त हो रहा है। एक सामन्तवादी समाज मे, जो निम्न श्रेणी के नवयुवक को भिक्षुत्व के अतिरिक्त कोई अवसर कठिनता से देता है, यह महान् उपलब्धि है। सरोग को, जो मूलरूप मे सेनसान नमग्याल था, वर्तमान नाम और उपाधि त्रयोदश दलाई लामा ने दी थी। इस लड़के ने सर्वप्रथम दलाई लामा के ग्रीष्म भवन नोर्बू लिंग के मैदानो के अधिकारी के रूप मे कार्य प्रारभ किया। बाद में जब वह राज्य-चिकित्सक की सेवा मे था, उसपर दलाई लामा की दृष्टि पडी, जिन्होंने आकृति से प्रभावित होकर उसे अपना सहायक पार्श्विचर बना लिया। वह भक्ष-

राजा का अत्यन्त प्रिय हो गया। जब सन् १६०४ में अग्रेजो ने तिब्बत पर आक्रमण किया तब निष्कासन मे वह मंगोलिया उनके साथ गया और भारत भी गया जब चीनियो ने १६१० ई० मे आक्रमण किया।

भारत को भागने के अवसर पर, सेनसान ने, जो दलाई लामा के सैनिक दल का अधिकारी था, चीनी सिपाहियों के बडे दल को शासक के निकल भागने तक बडी वीरता से रोके रक्खा।

१६१२ई०मे राजधानी वापस आने पर दलाई लामा ने पाया कि सरोग-परिवार का मुखिया—वह परिवार तिब्बत का सबसे पुराना और सबसे धनी सामन्त परिवार है—चीनियो के साथ सहयोग कर रहा था। इस-पर मुखिया और उसके परिवार के लोग पोटाला की छत से नीचे फेंक दिये गए। तब उसने उस परिवार की स्त्रिया, उनकी जागीर और सरोग नाम, नौजवान सेनसान को दिया, जिसने उसकी जान बचाई थी और निष्कासन मे इतनी वफादारी से उसकी सेवा की थी। उसने उसे शापे, शक्तिशाली कशग का सदस्य और तिब्बती सेनाओ का सेनाध्यक्ष भी बनाया।

भारी शरीर, छोटा कद, झुर्रीदार चेहरा और विरल बालोवाला सरोग शापे ल्हासा जानेवाले सभी व्यक्तियो मे अत्यन्त प्रिय है, क्योकि वह ऐसा तिब्बती वृद्ध पुरुष है, जो विस्तृत दृष्किोण, आकर्षक व्यक्तित्व और मनोरजक परिहास-प्रियता रखता है। नगर के बाहरी भाग मे स्थित सरोग का मकान तिब्बती और पश्चिमी निर्माण-कला का मिश्रित नमूना है। ल्हासा मे यह सर्वश्रेष्ठ व्यक्तिगत निवास है। सर्वसाधारण तिब्बती आगन के चारो ओर बना होने के बदले, यह एक सुन्दर उद्यान से घिरा है, जो अनेक प्रकार की झाडियो, वृक्षो और फूलो से सुन्दर बनाया गया है। इसकी सारी खिडकिया शीशे की हैं। कुछ कमरे पश्चिमी ढग पर सजे हैं और दूसरे तिब्बती परपरा के अनुसार। अपने विशाल, आतिथ्यपूर्ण गृह मे सरोग और उसका परिवार उदारता से, राजसी ढग पर और बहुधा अतिथि-सत्कार करते हैं। उसका लडका, जब वह 'बाहर' के स्कूल मे गया, अपने साथियो मे जार्ज कहलाता था। आजकज पठार के लोगो की स्थिति उन्नत करने का कार्य करके वह अपने परिवार की असाधारण परम्परा का

अनुसरण कर रहा है। सरोंग अंग्रेजी नहीं बोलता, परन्तु जार्ज ने दुभाषिये का काम किया। सरोग विशेष रूप से रूस के विषय मे हमारे विचार जानने को इच्छुक था।[1]

"क्या यह सच है कि रूसियो का कोई धर्म नही है ?" सरोग ने बातचीत के प्रसग मे पूछा।

"साम्यवादी दल के पालित ब्यूरो से लेकर नौजवान स्वयंसेवकों तक एक ही धर्म है," डैडी ने उत्तर दिया,"साम्यवाद का धर्म—विश्व-क्रान्ति। यही है, यदि आप इसे धर्म कह सकते हो।"

'किन्तु रूसी जनता के विषय मे क्या है ?" सरोंग ने फिर पूछा, "क्या उनसे ससार की घटनाओ और रूस से बाहर की दशाओं के विषय मे सत्य कहा जाता है ?"

डैडी का उत्तर, शायद आप पहले ही समझ गये हो, दृढतापूर्ण 'नही' था।

सरोग ने अपने वर्जित देश को पश्चिमी विचारो और आधुनिक उन्नति के लिए, जो कि लाभप्रद सिद्ध होंगी, खोलने की सदैव वकालत की है। अधिक कट्टर लामा—विशेष रूप से ल्हासा के तीनो मठो के—जो किसी भी परिवर्तन या नये विचार के विरुद्ध है, उसके कटु विरोधी है। किन्तु सरोग साहसी है। क्या उसने अपने स्वामी त्रयोदश दलाई लामा की रक्षा के लिए अपने प्राण सकट में नही डाले ? और अपने विनोदी स्वभाव के साथ ही वह दृढ विचारवाला भी है। सरोग चाहता है कि तिब्बत को पश्चिम से कूटनीतिक स्वीकृति मिले, उसका सयुक्त राष्ट्र सभा मे प्रवेश हो और उसे अपने सीमान्त की सुरक्षा के लिए एक शक्ति-

---

१. मैं जार्ज से उसके घर कालिम्पोग, पश्चिमी बंगाल में १९५३ में फिर मिला। उस समय वह बिजली के उपकरण ल्हासा पहुंचाने का प्रबध कर रहा था। वह चीनियों द्वारा अधिकृत तिब्बत के संबंध में अपना मुह बंद किये रहा और केवल इतना ही बोला, "सबकुछ पूर्ववत ही है।" सरोंग शापे, उसके पुत्र जार्ज के अनुसार, ल्हासा में अवकाश-प्राप्त जीवन व्यतीत कर रहा है।

शाली सेना तैयार करने मे सहायता दी जाय ।

सरोग शापे के अनुसार ससार की समस्त समस्याओ का मूल लोभ है। इसका अन्तिम हल विश्व-सरकार है, किन्तु सभी राष्ट्रो द्वारा प्रदर्शित स्वार्थ के कारण अभी उसके लिए अनुकूल समय नही आया है; तथापि वह तृतीय विश्वयुद्ध को अनिवार्य नही समझता, क्योकि उसने हमसे कहा कि प्रतिद्वन्द्वी शक्तिया अन्तिम क्षण मे इस निष्कर्ष पर पहुच सकती है कि जीवित रहने के लिए, विश्व-सहयोग ही एक मात्र साधन है ।

१५ | तिब्बत का राजमन्दिर पोटाला

यदि इटली मे समस्त सडकें रोम और वैटिकन[1] को पहुंचाती है, तो तिब्बत की तमाम पगडडिया भी ल्हासा और पोटाला[2] पहुचाती है। ल्हासा पहुचने से पूर्व दूर से हमे इसकी सुनहरी छतो की झलक मिली थी और हमने अनुभव किया कि इस इमारत का पहला दृश्य, जो ससार मे विलक्षण और अद्वितीय है, उस धार्मिक और श्रात यात्री के लिए, जो ऊचे पहाडी दर्रो को और लम्बे मार्गों को तय करके पवित्र नगर मे पहुचा है, क्या अर्थ रखता है, यहातक कि हमारे जैसे दूसरे धर्मवाले विदेशी यात्री भी इस ऊचे उठे हुए लाल और सफेद पत्थर की निर्माण-कला को, ल्हासा से एक मील बाहर से ही देखकर रोमांचित हो जाते हैं ।

यह नगर पर लाल पहाडी पर से शासन-सा करती है । यह ऐसी

---

१ पोप का निवास-स्थान २. दलाई लामा का शीतकालीन निवास ।

चट्टानदार पहाड़ी है, जो बिलकुल अप्रत्याशित रूप से यहां निकल आई है और ऊचे तिब्बती मैदान से पृथक है।

पुराने मिशनरियो के समय से ही प्रत्येक पश्चिम निवासी ने, जिसे ल्हासा पहुंचने का सौभाग्य हुआ है, पोटाला के देदीप्यमान वर्णनों का अपना योग देकर वृद्धि की है। इसके बनाने मे फौलाद या लोहे का उपयोग नहीं किया गया है, तथापि इसका ढांचा इतना परिपूर्ण है कि १६३६ ई० में ल्हासा गए ब्रिटिश मिशन के सदस्य स्पेन्सर चैपमैन ने लिखा, "पोटाला को देखकर यह आभास नही होता कि इसे मनुष्य ने बनाया है। यह अपने चारो ओर के वातावरण और वस्तुओं से इतना मिलता-जुलता है कि वही उगा हुआ मालूम होता है।" हरकोई उससे पूर्ण सहमत है कि यह भवन-निर्माण-कला की बेजोड़ करामात है, जिसमें एक अवर्णनीय जादू का-सा चमत्कार है और जैसाकि उसने आगे कहा है, "इस संसार की सभी दृष्टियो से पूर्ण कुछ इमारतों में गिने जाने-वाले पोटाला में कुछ इन्द्रियातीत विशेपता है, जो न तो किसी कुशल निर्माता या कारीगर की निपुणता के कारण है, न किसी ऐतिहासिक संयोग के कारण है और न इसी कारण है कि यह अगणित धार्मिक भक्तो का ध्रुव तारा है।" इस "देवताओं के भवन" को देखनेवाला उस विशेषता का स्वयं अनुभव कर लेता है, जिसे चैपमैन 'स्वर्गीय उत्कृप्टता" कहता है।

हम ल्हासा मे प्रतिदिन पोटाला की अनुभूति करते रहते थे। प्रातः-काल उठते ही हम अपनी खिडकी से बाहर धूप मे चमचमाती इसकी छतो को देखते थे और शाम को नगर के दूसरे कोने मे रहनेवाले किसी तिब्बती अधिकारी के प्रचुर आतिथ्य को प्राप्त करके शाम को घोडे पर जब घर लौटते थे, उसका विशाल सफेद और लाल बाहरी भाग, बच्चों की परियों की कहानी के जादुई महल का रूप धारण कर लेता था, या अपनी विशालता और गौरव के कारण जिन्न द्वारा उडाकर ले जाते हुए अलादीन के आकाश-स्थित महल जैसा मालूम होता था। जहां कही भी हम गये, हमने पोटाला को किसी-न-किसी कोण से देखा और वह प्रत्येक बार पिछली बार से अधिक आकर्षक लगता था।

यद्यपि हम भेंटो, पार्टियो मे तथा विशिष्ट अधिकारियो से उनकी सकटपूर्ण और आवश्यक समस्याओ पर प्रतिक्रियाओ को प्राप्त करने मे अत्यन्त व्यस्त थे, तथापि हमने अपने एक व्यस्त दिन का अधिक-से-अधिक भाग दलाई लामा के शीत-निवास मे खर्च करने का निश्चय किया हुआ था। इसलिए एक सुवह हम इस कथा-प्रसिद्ध इमारत के, जो मध्य एशिया मे सबसे अधिक प्रसिद्ध है, फोटो लेने तथा सैर करने चले। कुछ दूरी से या लौह-पर्वत के शिखर से, जहा चिकित्सा महाविद्यालय स्थित है, देखने पर पोटाला, जो हिमशिखरोवाले पर्वतो के वृहत वृत्त और हरे वृक्षो तथा उपवनो के भीतरी वृक्षो से घिरा है, भारत के ताजमहल से भी अधिक भव्य नियोजन से युक्त दीखता है। किन्तु यह ताज के समान उत्कृष्ट पच्चीकारी और लेस के कामवाला 'सगमरमर का रत्न' नही है।

इसकी जिन चीजो को मनुष्य सास रोककर देखता है, वह है इसका विशाल आकार, इसके साधारण और आडम्बरशून्य बाह्य रूप की भव्यता और इसकी नीव का विचित्र निर्माण, जो चट्टानो से प्राकृतिक रूप मे निकलती दीखती है। यह कहा नही जा सकता कि कहा पहाडी समाप्त हुई और इमारत शुरू होगई। पोटाला लम्बाई मे ९०० फुट और ऊचाई मे सडक की सतह से इसकी अपेक्षा अधिक है, अर्थात न्यूयार्क की एम्पायर स्टेट बिल्डिंग से ऊचाई मे दो-तिहाई। सम्पूर्ण ल्हासा पर यह जिस तरह शिखर के समान सुशोभित है, उसे देखकर हमे अमरीका की गगन-चुम्बी इमारतो की याद आती थी। दीवारें किसी कदर अन्दर को ढाल लिये है, खिडकियो की लम्बी पक्ति, जो सिरे की अपेक्षा नीचे की ओर चौडी है, सामान्य प्रभाव और समरूपता को दबाती-सी लगती है। दक्षिण की ओर विशाल सफेद दीवार से ऊपर निकला हुआ गहरा लाल रग केन्द्रीय भाग है, जो इस भाग मे स्थित पूजागृहो की विशेष पवित्रता की ओर सकेत करता है।

सूर्य की चमक से रक्षा करने के लिए लगाये गए याक के वालो के पर्दे सितम्वर मे हटा दिये जाते है और दीवारो पर सफेदी की जाती है। हमने इसकी वार्षिक स्वच्छता का काम नही देखा। सफेदी पोटाला के

समीप तैयार की जाती है तथा औरतो की पीठ पर लेजाई जाती है और दीवारो पर कूचियों से पोती जाती है। दीवार के उस भाग पर, जहां नीचे से नही पहुचा जा सकता, ऊपर की खिड़कियो से सफेदी छिडकी जाती है।

प्रसिद्ध तिब्बती सम्राट सोग सेग गाम्पो ने, जो अपनी दो बौद्ध रानियों द्वारा बौद्ध धर्मावलम्बी वनाया गया था, सातवी सदी मे लाल पहाटी पर अपने लिए एक सयुक्त दुर्ग और महल वनवाया, किन्तु इसका अधिकाश भाग वाद मे आक्रमणकारी मगोल सेनाओ ने नष्ट कर दिया। इस स्थान पर महान पंचम दलाई लामा ने १६४१ ई० मे पोटाला का निर्माण प्रारम्भ किया। इसका निर्माण उतना ही कठिन रहा होगा, जितना कि मिस्र के पिरामिडों का, क्योंकि भवन-निर्माण-कला का यह वेजोड़ नमूना आदिकालीन औजारों से वनाया गया और वे ही औजार आज भी तिब्बत में प्रचलित हैं। एक-एक पत्थर दूर की खदान से गधो पर या आदमी और औरतों की पीठ पर याक के चमड़े की रस्सियो से वाघकर लाया जाता था। इस कार्य का अधिकतर वास्तविक निरीक्षण दलाई लामा ने अपने योग्य प्रधान मन्त्री सँग-ग्ये ग्यात्सो को सौंपा हुआ था। महान पंचम का, इमारत समाप्त होने से पूर्व ही, १६८० ई० मे स्वर्गवास होगया। सँग-ग्ये ग्यात्सो नौ वर्ष तक उनके 'स्वर्ग-प्रयाण' को छिपाये रहा। उसने घोषित कर दिया कि परम पवित्रात्मा एकान्त मे ध्यानावस्थित हैं। यह स्पष्टीकरण तिब्बतियो के लिए विश्वसनीय और स्वीकार्य दोनों ही है। इससे चतुर मन्त्री पोटाला को पूर्ण करा सका। भक्त लोग इन भारी श्रम को स्वेच्छापूर्वक करते रहे, विना किसी वेतन के, अपने जीवित ईश्वर के लिए और उसके नाम पर, जिसे वे अभी तक सशरीर अपने मध्य मे समझे हुए थे, न कि मन्त्री के लिए, वह कितना ही महत्वपूर्ण क्यों न रहा हो। चेन्रेजी के अवतारों का निवासस्थान लगभग ५० वर्ष में वना। यह समय कुछ अधिक नहीं मालूम होता, जबकि हम यूरोप के गोथिक गिर्जाघरो के विषय में सोचते हैं, जिनके परिश्रमपूर्ण निर्माण में और भी अधिक समय लगा और न्यूयार्क का 'सेंट जान दी डिवाइन' (देवतुल्य सत जान) का गिर्जाघर १८९२ ई० में प्रारम्भ हुआ तथा आधुनिक

मशीनायुग के द्रुत निर्माण के साधनो की सुविधा होते हुए भी अभी दो-तिहाई ही पूरा हुआ है।

नये महल का नाम भारत के धुर दक्षिण मे कुमारी अन्तरीप पर स्थित एक पहाडी के नाम पर पडा है, एक पर्वतीय स्थान, जो दया के देवता के लिए, जिसे भारतीय अवलोकितेश्वर और तिब्बती चैन्रेजी के नाम से पूजते है, पवित्र माना गया है। स्वयं तिब्बती इस पवित्र महल को 'पोटाला' शायद ही कभी कहते हो। वे इसे 'पोटाला शिखर' या साधारण तौर पर 'शिखर' ही कहते है।

पचम दलाई लामा के स्वर्गवास से पूर्व कुछ समय पोटाला के निर्मित भाग मे रहे, और रीजेन्ट तथा प्रधान मन्त्री भी वहा रहे, जबकि यह महान कार्य समाप्ति पर आ रहा था।

इस पवित्र मन्दिर मे निवास करनेवाला अगला व्यक्ति सैंग याग ग्यात्सो था, जो छठे दलाई लामा के रूप मे प्रसिद्ध हुआ। मन्त्री द्वारा महान् पचम के स्वर्ग-प्रयाण को नौ वर्ष तक छिपाये रहने के कारण खोजे जाने के समय उसकी आयु स्वाभवतः ९ वर्ष की थी। उसका चरित्र तथा अभिरुचिया लामा-सरक्षको के हाथ मे आने के पूर्व ही बन चुकी थी। अत वह अपने पूर्वजो के समान योग्य सिद्ध नही हुआ।

कहने की आवश्यकता नही कि मगोल और दूसरे भी सन्देह करते थे कि सैंग याग पचम महान का वास्तविक अवतार नही है। अन्त मे उसे मगोल सेनाए पकडकर ले गईं और या तो उसे मार डाला गया या उनके कठोर व्यवहार के कारण स्वय मृत्यु को प्राप्त हुआ। यह ध्यान रखने योग्य है कि तिब्बतियो ने उसे हटाने मे कोई भाग नही लिया। जब मगोलो ने ड्रेंपुग मठ, जहा कि वह छिपा था, पर आक्रमण किया तो वहा के पुजारियो ने उसे बचाने के लिए पर्याप्त प्रयत्न किया। अब भी तिब्बती उसपर वैसी ही अडिग श्रद्धा रखते हैं और उसके नियम-विरुद्ध व्यवहार को यह कहकर क्षमा करते है कि उसके दो शरीर थे, एक पोटाला मे ध्यानमग्न रहता था और दूसरा सडको पर अपने अनुयायियो की धर्म-परीक्षा के लिए जाता था।

ल्हासा का प्रत्येक निवासी और सभी तीर्थयात्री, जो वर्जित

नगरी की यात्रा करते हैं, वर्ष में एक बार पोटाला की परिक्रमा करते हैं। यह कई मील की यात्रा है और पोटाला को,पवित्रता के विचार से, हमेशा दाहिनी ओर रखते हुए गोलाई मे रखकर की जाती है। जब हम हाफते हुए टेढे-मेढे दैत्याकार जीने की बडी-बड़ी सीढियो पर चढे, उस समय परिक्रमा करते हुए अनेक तिब्बती हमारे पास से गुजरे। वे अपने प्रार्थना-चक्रो को घुमा रहे थे और 'ओ मणि पद्म हु' को जपते जा रहे थे।

पोटाला मे एक हजार से अधिक कमरे है। नीचे की मजिलों मे गोदाम, सरकारी दफ्तर, रसोइया और दो सौ या तीन सौ भिक्षुओ के निवास-स्थान हैं। उनमे से अनेक छोटे ब्रह्मचारी हैं, जो सामन्त वर्ग और अधिकारियो के पुत्रो मे से छाटे गये है। कुछ तो सरकारी नौकरी मे चले जाते है और कुछ पोटाला मे रहते हैं, जहा दलाई लामा का व्यक्तिगत मठ है, जो 'विजयी स्वर्ग का विद्यालय' कहलाता है। तिब्बत के चार कोषागारो मे से दो पोटाला मे है। एक 'ट्रेडे' दलाई लामा के व्यक्तिगत उपयोग के लिए सुरक्षित है। दूसरा 'स्वर्गपुत्रो का कोषागार' युद्ध के व्यय या दूसरे राष्ट्रीय सकटो मे उपयोग के लिए सुरक्षित है। मक्खन और चाय से लेकर सोने, चादी और बहुमूल्य रत्नो तक प्रत्येक वस्तु पोटाला की किले जैसी गहराइयो मे सग्रहीत है। पिछली ढाई शताब्दियो से भी अधिक समय से सग्रहीत इन कोषागारो के सग्रह अवश्य ही बहुमूल्य होगे। यह कहा जाता है कि तिब्बत की जलवायु मे याक-मक्खन सौ वर्ष रह सकता है, किन्तु मैं तो ऐसे प्रयोग की परवा नही करूगा। यहा कठोरता भी विद्यमान है, निचली अधेरी कोठरियो मे बदी रक्खे जाते हैं, कभी-कभी जीवन-भर के लिए।

ऊपर की मजिल मे अनेक पूजागृह, विस्तृत अतिथि-कक्ष और परामर्श-कक्ष है और दलाई लामा के निकट परामर्शदाता और परिचारको के कमरे हैं। किन्तु हमे प्रत्येक वस्तु देखने का समय नही था और न इसकी हमे आज्ञा ही मिलती, जैसे कि किसी आगन्तुक को 'ह्वाइट हाउस'[1] के सभी दफ्तरो या व्यक्तिगत कमरो मे झांकने की अनुमति नही मिल सकती। हमने दलाई लामाओ की समाधि और ऊपरी भाग पर ही

१. अमरीकी प्रेसीडेंट का निवासस्थान।

विशेष ध्यान दिया।

जैसेकि हम ऊपर चढे, हमने सैकडो भिक्षुग्रो को विशाल इमारत के अन्दर मन्त्र पढते सुना। वहा ढोलो की ढम-ढम, मजीरो की टुन-टुन, प्रार्थना-चक्रो की घर्र-घर्र और तुरहियो की गहरी ध्वनि हो रही थी।

पोटाला के पश्चिमी भाग मे कई दलाई लामाग्रो की समाधिया है। छठे की अनुपस्थिति स्पष्ट लक्षित होती है। समाधिया कुछ चैत्यो (चोर्टनो) के नमूने की जैसी बनी है और ऊपर सुवर्ण की पत्तर से ढकी हैं। ये खालिस सोने की गुम्बदें ही सूर्य की धूप मे खूब चमचमाती हैं और दूर से आनेवाले यात्री पोटाला की यही पहली झलक पाते हैं। हम उन पवित्र गर्भगृहो मे गये, जहा दलाई लामाग्रो के शरीर दो या तीन मजिल के सुनहरी छतवाले पिरामिडो मे समाधिस्थ है। गर्भगृहो के सामने सैकडो सोने के बर्तनो मे याक के मक्खन के दीपक जल रहे थे और पुजारी पूजा कर रहे थे। पचम महान की समाधि ६० फुट ऊची है और त्रयोदश महान की उससे भी ऊची, सबसे दैदीप्यमान है। ससार मे बौद्ध धर्म को माननेवाले सभी भक्तो ने स्वर्गीय दलाई लामा की समाधि बनाने के लिए उदारतापूर्वक धन दिया। मुख्य चैत्य सुवर्ण से ढका है, अलभ्य रत्नो से जडा है और भीतरी भाग अमूल्य चीनी मिट्टी के बर्तनो, आभूषणो, सोने के बर्तनो तथा एशिया की विभिन्न दुर्लभ कला-कृतियो से सुसज्जित है। समाधि की ऊपरी दीवारो पर एक दर्जन सर्वश्रेष्ठ तिब्बती कलाकारो ने फ्रेस्को चित्र बनाये हैं। अत्यन्त सुन्दरता से रगे ये चित्र त्रयोदश दलाई लामा के सघर्षपूर्ण जीवन की घटनाग्रो को स्मरण कराते हैं—उनका मगोलिया और चीन को निष्क्रमण, उनका भारत को पलायन और निष्क्रमण, रेलें, स्वचालित सवारिया और दूसरी विचित्र वस्तुए, जिनसे उन्हें बाह्य ससार मे वास्ता पडा, भिक्षुग्रो के जलूस, ल्हासा के दृश्य और उत्सव तथा पोटाला और उनके गृह-जीवन के अन्य कार्य। आठवें दलाई लामा की समाधि पर, जो १८०४ ई० मे स्वर्गवासी हुए, मीने के सुन्दर कामवाला एक भाग भी रोचक है, जहा उस काल के अग्रेज और उनके घरो को चित्रित किया गया है। यह निश्चय ही उनमे से एक होगा, जो चीन मे पुरानी ईस्ट

इंडिया कम्पनी के लिए बनाये गए थे। दलाई लामा अपने जीवन-काल मे ही बहुत-सा सोना, बहुमूल्य रत्न और सिक्के अपनी शानदार समाधियो के लिए एकत्र कर लेते थे।

समाधियो पर अपना सम्मान प्रदर्शित करने के उपरान्त हम पोटाला की चोटी पर सुनहरी छतो के मध्य चढे। ल्हासा का नगर पूर्व की ओर हमारे पैरो के नीचे था।

ठीक सामने लौह पर्वत पर तिब्बती चिकित्सा महाविद्यालय खड़ा था, जिसका मैंने पिछले अध्याय मे उल्लेख किया है। उत्तर और पश्चिम की ओर पहाड़ की तलहटी पर सिकुडे हुए सीरा और ड्रेपुंग के मठ थे, जिनमे हम लौटने से पूर्व जानेवाले थे। दूर-दूर की पहाडियो के ढालू किनारो पर अनेक छोटे मठ चिपके हुए-से दीखते थे। दक्षिण की ओर मैदान से घूमकर आती हुई, इस मैदान को तिब्बत में सबसे उपजाऊ बनानेवाली क्यी चु नदी देखी। हमारे ठीक नीचे एक गहरी नीली झील थी, जिसके मध्य के टापू पर एक छोटा सुनहरे गुबदवाला मठ था। यह एक मोहित करनेवाला और अविश्वसनीय जैसा चित्र-समूह था। केवल हमारे चलचित्र कैमरे की घरघराहट हमे यह याद दिला रही थी कि हम इसी पृथ्वी के जीव है, किसी अन्य पौराणिक ग्रह के नही।

उस दीवार के नीचे, जहां हम खडे थे, हमने उस घुमावदार सड़क को देखा, जो पूर्णतया दलाई लामा के उपयोग के लिए सुरक्षित है। वह जब भी अपने शीतकालीन निवास को लौटते है, उन्हे इसी रास्ते से पालकी पर लाया जाता है। तिब्बत मे पहियेवाली गाडियो का ही अभाव नही है, बल्कि प्राचीन पालकी का उपयोग भी, जिसे वाहक उठाते है, दलाई लामा, पणछेन लामा और वज्रशूकरी के अतिरिक्त सब के लिए निषिद्ध है। चीनी अम्बनों ने, जबकि उनकी शक्ति बहुत बढ गई थी, इसका धृष्टतापूर्वक अपने लिए उपयोग किया।

हम लोग जब छत पर थे, हमे अपने तिब्बती साथियो में एक से पता चला कि पोटाला, या दलाई लामा के ग्रीष्म-निवास या जोकाग के मन्दिर पर ओले नही गिरने चाहिए। तिब्बती [illegible] मा

जादूगर ल्हासा या उसके आस-पास ओलो का तूफान रोकने के लिए नियत किये हुए हैं। त्रयोदश दलाई लामा के समय मे इन तीनो इमारतो पर एक बार ओलो की वृष्टि हुई। स्वर्गीय दलाई लामा का दण्ड देने का अपना ही ढंग था। चूकि जादूगरो ने अपने विशेष कर्तव्य की 'उपेक्षा' की थी, इसलिए उन्हे बीरावृक्षो की कई पक्तिया लगाने की आज्ञा दी गई।

जब हम पोटाला से नीचे उतर रहे थे, हमने एक कणाश्म का स्तंभ देखा। इस खम्मे का शिखर कुछ मास पूर्व टूटकर गिर गया था। हमारे ल्हासा के मित्रो ने इसकी एक रोचक व्याख्या की। उन्होने कहा कि एशिया मे साम्यवादी इसी कारण जीत रहे है कि इस स्तम्भ का शीर्षभाग टूट गया है। उनकी इस व्याख्या से हमारे मन मे केवल यही धारणा दृढ हुई कि तिब्बत मे उत्तर दिशा से साम्यवादी विभीषिका कितनी बढी हुई है।

१६ | तिब्बत में धर्म सबसे पहले

तिव्वत मे अपने निवास की अवधि मे आध्यात्मिक वस्तुओ के महत्व और सासारिक वस्तुओ के पूर्ण निषेध की ओर हमारा निरन्तर ध्यान दिलाया जाता था। सम्पूर्ण देश मे मनुष्यो के जीवन और विचारो पर धर्म सबसे दृढ प्रभाव रखता है।

हमने तिब्बतियो को, हमारे कारवा के व्यक्ति भी इसमे शामिल हैं, ऊचे दर्रो पर प्रार्थना के झडे लगाने और दुष्ट आत्माओ के विरुद्ध मन्त्र-पाठ के लिए रुकते देखा। पगडडियो पर, नगरो की सडको पर जहा-जहा भी हम गुजरे, हमने लोगो को प्रार्थना-चक्र घुमाते और मालाओ पर, बौद्ध प्रार्थनाए करते पाया। तिव्वती अपनी १०८ दानो की माला के बिना

शायद ही कभी रहते होगे। ये दाने उनके जीवन के ऐसे भाग है कि इनका उपयोग केवल प्रार्थना के लिए ही नही, बल्कि गणना करने के लिए भी होता है और शोभा के लिए भी वे इनको धारण करते है। हरेक तिब्बती प्रार्थना करता है। पांच साल के बच्चे तक को लम्बी प्रार्थनाएं जबानी याद होती है। पुजारी घटो तक प्रतिदिन प्रार्थना करते हैं, एक सामान्य मनुष्य भी अक्सर दो या तीन घटे प्रतिदिन प्रार्थना और ध्यान में लगाता है। जैसाकि मैं कह चुका हूं, गरीब और अमीर सभीके घरों मे पूजास्थान या मन्दिर होते हैं और पवित्र दिनों मे सभी लोग समीप के नगर के मदिर या गाव के मठ मे, मक्खन के दीपक जलाने और बुद्ध की प्रतिमाओं पर सफेद रेशम के रूमाल चढाने के लिए एकत्र होते है। देश के प्रत्येक भाग मे तिब्बती लोग मठ, चैत्य और मन्दिरो को दण्डवत प्रणाम करते हुए और मार्ग के प्रत्येक प्रार्थना-चक्र को घुमाते हुए, परिक्रमा लगाते हैं।

जब हम ल्हासा में थे, हमने अक्सर भक्त तिब्बतियो को भावमग्न होकर ५ मील के पवित्र मार्ग 'लिंग-कोर' यानी उद्यान की परिक्रमा पर, जिसमे पवित्र नगर और पोटाला सम्मिलित है, जाते देखा। ल्हासा के कुछ अधिक श्रद्धावान भक्त यह क्रिया प्रतिदिन तक करते है। सबसे अधिक भक्तिभावाविष्ट तीर्थयात्री तो इस पवित्र परिक्रमा को, दण्डवत के रूप मे लेटकर, प्रत्येक फुट भूमि को शरीर से ढंकते चलते है। इनमे से कई तो ल्हासा तक सम्पूर्ण यात्रा ही, अपने पापो के प्रक्षालन के विचार से इसी प्रकार करते है।

लोगो को अपने पुजारियो पर बड़ी श्रद्धा है और स्वर्ग के प्रतिनिधियों के रूप मे उनकी शक्ति पर वे पूर्ण आस्था रखते है। संकट और रोग के समय समीप के पुजारियो के पास प्रार्थना के लिए निवेदन करते है। विद्वानों को घर पर प्रार्थना के लिए तथा बौद्ध धर्म-ग्रन्थो से पाठ के लिए आमन्त्रित करते हैं। कभी-कभी धनवान मनुष्य पुजारियों के एक समूह को अपने घरवालों के सामने सम्पूर्ण कांग्यूर पढकर सुनाने के लिए (एक अधिवेशन में कई दिन लगते हैं) पर्याप्त मात्रा मे धन देते है। प्राचीन और संश्लिष्ट भाषा में होने के कारण, इसपवित्र पुस्तक को परिवार बहुत कम समझ पाता है, किन्तु धर्मोपदेशक की एक ज्योति उनके

अन्दर आ जाती है। वे अनुभव करते हैं कि समस्त परिवार, पिता से लेकर घर का कुत्ता तक, पवित्रपाठ से धन्य हो गया।

समस्त देश का वातावरण ही धर्म से ओतप्रोत है। सुख, धन-धान्य और ऐहिक प्रसिद्धि उपभोग्य वस्तुए अवश्य हैं, किन्तु वे पृथ्वी के नश्वर जीवन मे क्षण मात्र सुख देनेवाले हैं, अत' तुच्छ लाभ है। एक तिब्बती अपने धार्मिक आचार-व्यवहार मे श्रद्धा-पूर्वक लगे रहकर ही—तिब्बती परपरा के अनुसार अच्छा बौद्ध होकर ही—पुनर्जन्म के अविराम चक्र से छूटकर अन्त मे निर्वाण प्राप्त कर सकता है।

अधिकतर पश्चिम-निवासी निर्वाण को आत्मा के क्षय के अर्थ मे समझकर भ्रान्त धारणा बनाते हैं। निर्वाण की परिभाषा करना असंभव है, किन्तु इसका आशय, सक्षेप मे, बौद्ध धर्म और बौद्ध कला के विश्व-प्रसिद्ध अधिकारी विद्वान स्वर्गीय डा० आनन्द के० कुमारस्वामी के सक्षिप्त कथन द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है, "निर्वाण आचार के नियमो के अनुसार काम, क्रोध और मोह का विनाश है—मनोवैज्ञानिक रूप से व्यक्तित्व से मुक्ति, एक जीवन्मुक्ति की स्थिति, जो यहा इसी ससार मे अनुभव की जा सकती है। जो इसे प्राप्त कर लेते है, वे ऐहिक बन्धनो से छूट जाते हैं और मृत्यु के उपरान्त फिर जन्म नही लेते।" सभी बौद्ध, चाहे वे तिब्बतियो के समान लामापथी हो या गौतम बुद्ध की मौलिक पवित्र शिक्षाओ के अनुसरण का दावा करनेवाले लका, बर्मा और थाईलैंड के निवासी हो, निर्वाण की कामना करते हैं, भले ही उनका मार्ग कुछ भिन्न क्यो न हो।

तब अच्छा बौद्ध होने से क्या आशय है ? जब हम ल्हासा मे थे, हमने नगर के चारो ओर स्थित पर्वतो के मध्य मे बने मठो मे जाकर इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त किया।

दूसरे देशो के बौद्धो के समान जिन्होने अपने पूजन की क्रियाएं अपनी पृष्ठभूमि और परपराओ के अनुसार बना ली हैं, अच्छे तिब्बती बौद्ध भी पूर्ण विश्वास के साथ 'श्रेष्ठ अष्टाग मार्ग'—यथार्थ विश्वास, यथार्थ अकाक्षाएं, यथार्थ वचन, यथार्थ कर्म, यथार्थ आचार, यथार्थ प्रयत्न, यथार्थ वृत्ति और यथार्थ आनन्द पर स्थिर रहते हैं। वे पूर्ण रूप से चार:

'महान सत्यो' को भी स्वीकार करते है—दु.ख, दुःख का कारण, दुःख से मुक्ति और अष्टांगमार्ग, जो दु खो से मोक्ष दिलाता है।

चार सत्य और अष्टाग मार्ग बौद्ध धर्म के मूलाधार समझे जाते हैं, किन्तु आठवीं शताब्दी मे भारत से बौद्ध धर्म के तिब्बत मे प्रवेश के पूर्व ही वहा प्राचीन बौद्ध धर्म के आचार तान्त्रिक अनुष्ठानों से मिले-जुले,प्रचलित थे और फिर बौद्ध-मत की पूजा भी सम्मिलित हो गई, जो कुछ समय में क्षीण तो हुई, पर नष्ट कभी नही हुई। इस प्रकार आजकल तिब्बती बौद्ध न केवल बुद्ध और उनके प्रचारित सिद्धान्तो पर ही विश्वास करते हैं, अपितु अपने जीवित देवताओ और लामाओं पर भी और बड़ी सीमा तक, विशेष रूप से अज्ञानी और अन्धविश्वासी सामान्यजन तो भूतविद्या, भविष्यवाणी और गुप्त तथा अलौकिक क्रियाओ को करनेवाले जादूगरो पर विश्वास करते हैं।

सभी स्थितियो मे, एक तिब्बती अनुभव करता रहता है कि यद्यपि प्रार्थना-चक्र का परिचालन, मन्त्र और प्रार्थनाओं का जाप, बुद्ध के सामने मक्खन के दीपको को भरना और पवित्र परिक्रमाओं का लगाना उसे आध्यात्मिक मार्ग पर सहायता करेंगे, तथापि मृत्यु के उपरान्त उच्च योनि मे जन्म लेने के लिए उसे पवित्र-उदार और भ्रातृ-प्रेम-पूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहिए। यदि एक किसान अपने जीवन मे दृढता से बुद्ध की और अवतारी लामाओ की शिक्षाओ के अनुसार चलेगा तो अगले जन्म मे वह स्वय भी एक राज्य अधिकारी या उच्च लामा के रूप मे जन्म ले सकता है। पापपूर्ण जीवन उसे निचली कोटि मे ले जायगा और उसे एक भिखारी के रूप मे, यहातक कि पशु या कीड़ा बनकर रहना पड़े। अगले जन्म मे अच्छी स्थिति प्राप्त करना दलाई लामा की प्रजा के विचारो मे सबसे अधिक महत्व रखता है, चाहे वे किसी भी प्रकार के सासारिक कार्य में क्यों न सलग्न हों।

चालीस लाख तिब्बतियों को उच्च आध्यात्मिक स्तर और अन्त में निर्वाण प्राप्त कराने मे सहायता देने के लिए, सारे देश मे सैंकड़ो मठ फैले हुए है—कम-से-कम एक प्रत्येक नगर या गाव मे जिनमे भिक्षुओं की संख्या लगभग दो लाख होगी।इसके साथ ही कई हजार भिक्षुणियां

और सामान्य तौर पर लगभग एक हजार अवतारधारी लामा हैं।

ससार के शिखर पर स्थित प्राचीन धर्म-प्रधान सरकार मे ये मठ बडा प्रभाव रखते है, किन्तु इस बडे समूह मे सबसे शक्तिशाली ल्हासा के समीप के तीन विशाल मठ है, जो राज्य के 'तीन स्तम्भ' के नाम से प्रसिद्ध है। उनमे २० हजार से अधिक भिक्षु रहते है। यह संस्था ल्हासा की पूरी सामान्य जनसख्या के लगभग बराबर है।

'महान् तीन' का सम्मान और अधिकार भी अत्यन्त विस्तृत है। अन्य लामा-मठो के साथ-साथ वे विस्तृत भूमिखडो के स्वामी हैं, जो मोटे तौर पर राष्ट्र के ८ लाख वर्गमील का एक-तिहाई है। इसके साथ-साथ मक्खन, चाय, जौ और धन की असीम भेंटें इन मठो की सहायता के लिए सरकार, सामन्तवर्ग और किसानो द्वारा दी जाती है।

तिब्बत निर्धन देश है और मठ जनता की आजीविका पर एक बड़ा भारी बोझ हैं। उनके पुजारी ऐसे निरकुश हैं कि दलाई लामा तक उन्हे अप्रसन्न करने का साहस नही करते। त्रयोदश महान ने साहस, उत्साह और दृढ इच्छाशक्ति से इसका सामना किया। महान् पंचम के उपरान्त वह प्रथम दलाई लामा थे, जिन्होने उनके अबाध अधिकारो के दुरुपयोग का विरोध किया और उन्हे चतुरतापूर्वक नियन्त्रण मे रखा। राज्य के धर्म-निरपेक्ष प्रधान की हैसियत से, अपने हित के विचार से और जनता के हित के विचार से, उन्होने प्रमुख पुरोहितो को उनकी राजभक्ति और दृढता की दृष्टि से स्वय चुना। जब महान त्रयोदश केवल २४ वर्ष के थे, उन्होने सीरा के पुजारियो को गाववालो पर अन्याय करने के लिए दृढतापूर्वक अनुशासित किया।

भूतकाल मे इन तीनो मठो से भिक्षु, उस शासन के विरुद्ध जिसे वे स्वीकार नही करते, विद्रोह करने के लिए निकलते रहे है। सबसे नवीनतम घटना १९४७ की है, जब सीरा के पवित्र निवासियो ने बलपूर्वक और असफलतापूर्वक वर्तमान रीजेन्ट को हटाने का और पिछले रीजेन्ट रेटिंग रिम्पोशी को, जो तिब्बत पर चीनी प्रभुत्व का पक्षपाती था, फिर से स्थापित करने का प्रयत्न किया था। हम गेन्डेन अर्थात आनन्दित, मठ मे, जिसे चौदहवी शताब्दी के मध्य मे तिब्बत के महान

सुधारक सौंग कापा ने स्थापित किया था, नही जा सके। ल्हासा से तीस मील उत्तर-पूर्व मे स्थित गेन्डेन विद्या के लिए प्रसिद्ध है तथा अपने संस्थापक की समाधि के कारण तीर्थ-यात्रा का प्रसिद्ध स्थान है। १९०४ ई० मे यगहस्बेन्ड-दल के ल्हासा मे प्रवेश करने पर त्रयोदश दलाई लामा ने निष्कासन मे जाने से पूर्व गेन्डेन के मुख्य पुरोहित को ही रीजेन्ट नियुक्त किया था और गेन्डेन के रीजेन्ट ने, जो राजनीतिज्ञ न होकर धार्मिक मनुष्य ही था, पोटाला के पवित्र सभा-भवन मे ब्रिटिश-तिब्बत-सन्धि पर दलाई लामा की लाल मुहर जड दी थी।

हमे सीरा और ड्रेपुग जाने का समय मिल गया। उस दिन बडी तीव्र वर्षा थी, जब हम ल्हासा के उत्तर मे कई मील पर स्थित सीरा गोम्पा को गये। नगर की सड़के पानी से भरी थी और लोग भीगने से बचने के लिए दरवाजो के पास भीड लगाये हुए थे। कुछ अधिक गरीब स्त्रिया वर्षा से बचने के लिए बडे-बडे गोभी के पत्ते सिर पर रक्खे हुए थी।

सीरा सात हजार सात सौ भिक्षुओ का निवास-स्थान है, जिनमे सौ अवतारी लामा हैं, जो परोपकारी आत्माओ के स्वर्ग मे प्रवेश करने से पूर्व की सर्वोच्च और अन्तिम योनि मे पहुंच चुके हैं। मठ सफेद पुती इमारतों के समूह से निर्मित है, जो पहाड पर एक के बाद दूसरी पक्ति करके उठती चली गई है। सबसे ऊपर घाटी की सतह से कई सौ फुट ऊपर मुख्य मन्दिर की चमचमाती सुनहरी छत है।

सीरा के द्वार पर हमे कठोर दीखनेवाले दो बलवान भिक्षु मिले, जो प्रशास्ता (प्रोक्टर) थे, जिनका काम मठ मे अनुशासन स्थापित करना था। भारी, लाल और सुनहरे वस्त्र, जो उनकी शारीरिक सामर्थ्य मे योगदान कर रहे थे, पहने और हाथ मे सुवर्ण से विभूषित दड लिये, उन्होने बिना मुस्कराहट के चिह्न के हमारा स्वागत किया। उनके सकेत पर हम उनके पीछे-पीछे मठ मे घुसे। आगे-आगे उनके सहायक हाथ मे लम्बी बीरा की लाठिया लिये थे, जिनसे वे उत्सुक भिक्षुओ की भीड़ से मार्ग बनाते जाते थे। इधर-उधर दर्शक पीछे हट जाते थे, जबकि वे अपनी लाठी हिलाते थे और ऊचे स्वर मे 'फा ग्यूक' (हट जाओ) चिल्लाते थे।

पूजा के केन्द्रीय मन्दिर तक पहुचने के लिए हमे तग और चक्करदार सडको और बरामदो के समूह से चढकर जाना पडा। यहा सीरा के वारह प्रधान पुरोहितो ने, जिनके सिर या तो घुटे थे या गजे थे और जो अन्य भिक्षुओ की भाति गहरी लाल पोशाक मे थे, हमारा स्वागत किया। वे साठ और सत्तर वर्ष के वीच के वयोवृद्ध व्यक्ति थे। (हमे ऐसा कोई प्रमाण नही मिला कि तिब्वती दूसरे देश के व्यक्तियो से अधिक काल तक जीते है।)

वे हमे अपने स्वागत-कक्ष मे, जो सबसे ऊपरी मजिल मे था, अनेक अन्धकारपूर्ण जीने चढाकर ले गये। हमे कमरे के शीर्षस्थान पर पश्चिमी ढग की कुर्सिया वैठने को दी गई, जबकि मठाधीश हमसे नीची गद्दियो पर वैठे। साधारण तौर पर मठ मे आगन्तुको के सामने अधिक मात्रा मे तिब्बत की मक्खनी चाय रक्खी जाती है। हम अधिक भाग्यवान थे कि हमारे सामने दार्जिलिग की चाय के प्याले और भारत के मीठे बिस्कुट रक्खे गये। मठाधीशो के फोटो खीचने के लिए सूर्य के निकलने की प्रतीक्षा करते हुए हम चाय की घूट लेने लगे और उनसे वौद्ध धर्म के विभिन्न अगो पर वात करते रहे। उन्होने अपने धर्म की कुछ विशेषताओ की, पुनर्जन्मवाद पर विशेष जोर देते हुए, व्याख्या की। उन्होने स्पष्ट किया कि लामा-मत पुनर्जन्मवाद को मानने के सिद्धान्त के कारण ही मुख्यतया बौद्ध धर्म से भिन्न है। इसका एक उदाहरण वह परपरा है, जिसके अनुसार तिब्बती एक वालक को दलाई लामा के अवतार के रूप मे चुनते है, जब भिक्षु-राजा, 'सम्मानित सरक्षक', स्वर्गीय निवास में चला जाता है। इस चुनाव की शैली का वर्णन दलाई लामा के अध्याय मे किया जा चुका है।

मठाधीशो के साथ मैत्रीपूर्ण वार्तालाप के उपरान्त, हमे मुख्य कक्ष मे ले जाया गया। यह विशाल कमरा बारीक कढाई के काम, फ्रेस्को चित्र और लामा-मत-सवधी असख्य मूर्तियो से सजा था। इनके सम्मुख याक मक्खन के दीपक जले हुए थे। यह कमरा भिक्षुओ के लिए प्रार्थना के मुख्य स्थान का काम देता है और वे यहा दोपहर को जौ और मक्खनी चाय के भोजन के लिए भी एकत्र होते है। हमने पाच हजार

से अधिक भिक्षुओ को दोपहर की प्रार्थना और भोजन मे सलग्न पाया। पक्तियो मे पास-पास पालथी मारकर बैठे हुए, वे अपने लकडी के कटोरों को, भिक्षु लडको द्वारा मिट्टी की सुराहियो मे रसोई से दौड-दौड़कर लाई गई चाय से भरे जाने के लिए, फैलाये बैठे थे।

जब वे भोजन कर रहे थे, कमरे के एक सिरे पर ऊचे मच पर बैठा एक प्रमुख भिक्षु मेढक की जैसी अविरत ध्वनि से मन्त्रपाठ कर रहा था। भोजन के उपरान्त भिक्षुओं की धार्मिक प्रार्थना हुई। सम्पूर्ण मण्डली इतने उत्साह से उच्चारण कर रही थी कि कमरे की ऊंची छत के पर्दो से ढके खम्भे काप रहे थे। इस क्रिया के अद्भुत प्रभाव मे योग-दान करते हुए भिक्षुओ के घुटे हुए सिर अपने गायन के साथ-साथ मूर्च्छाविष्ट के समान हिल रहे थे।

जैसा पीछे कहा जा चुका है, लगभग एक-चौथाई तिब्बती मर्द भिक्षु बन जाते है। इसके दो विशेप कारण है। प्रथम प्रत्येक परिवार से कम-से-कम एक पुत्र के भिक्षु बनने की आशा की जाती है। दूसरे, उस पूर्णतया सामन्तवादी राज्य मे एक निम्न श्रेणी के व्यक्ति के लिए उन्नति का केवल यही मार्ग है। वे लडके, जिन्हे धार्मिक जीवन के लिए चुना जाता है, सात या आठ वर्ष की अवस्था मे ही मठो मे भेज दिये जाते हैं। वे भिक्षु-अध्यापको की देखरेख मे रहते हैं और उन्हे लिखना-पढना तथा धर्म-ग्रन्थो को कण्ठ करना सिखाया जाता है। बालक भिक्षु अपने अध्यापको के लिए नौकर का काम भी करते हैं। एक सफल भिक्षु बनने के लिए बालक की स्मरण-शक्ति तीव्र होनी चाहिए, जिससे वह धर्म-ग्रथो के पृष्ठ-पर-पृष्ठ कठस्थ कर सके।

कुछ नवदीक्षित भिक्षु धार्मिक कृत्यों मे सफल न होने के कारण मठ मे नौकरों का काम करते हैं और रसोई मे चाय उबालने के बडे-बड़े देगचो पर नियत कर दिये जाते हैं। दूसरे कलात्मक रुझान या चेहरे लगाकर भेद-पूर्ण नाचो मे योग्यता दिखाते हैं। यदि ऐसा हो, तो उस प्रकार के तथा अन्य गुणो को प्रोत्साहन दिया जाता है।

दूसरे अपने मठ या राज्य सरकार मे उच्च पद प्राप्त कर लेते है। कुछ ऐसे भी रहते है, जो गम्भीरता-पूर्वक विचारमग्न जीवन व्यतीत

करते है और गहरे ध्यान तथा अध्ययन मे लगे रहते है। विस्तृत भिक्षु-जीवन की किसी एक दिशा मे उन्नति प्राप्त करने के लिए एक योग्य नवयुवक को अनेक अवसर है, क्योकि तिब्बती भिक्षुओ को अपने धर्म का मुख्य अग मानते है और उनका वहा के जीवन पर गहरा प्रभाव है।

तिब्बत के धार्मिक जीवन के विषय मे अधिक-से-अधिक देख सकने का निश्चय करके हम वियु चू नदी के साथ-साथ चार मील के मार्ग से ससार के सबसे बडे मठ—ड्रेपुग (चावलो का ढेर) को देखने के लिए अगली सुबह चले। ड्रेपुग की स्थापना १५ वी शताब्दी के प्रारभ मे सौग कापा के प्रधान शिष्य और उत्तराधिकारी द्वारा की गई, जिसने बाद मे शिगात्से का ताशी-ल्हुनपो मठ, जो पणछेन लामा की गद्दी है, बनवाया। ड्रेपुग मे पचम दलाई लामा का वह कमरा, जिसका वह पोटाला बनवाने के दिनो मे उपयोग करते थे, अभी तक सुरक्षित है। ड्रेपुग के भिक्षु अनेक बार उद्दण्ड, अशात और झगडालू सिद्ध हुए हैं, किन्तु वे तिब्बती राष्ट्रवादियो के प्रति हमेशा सच्चे रहे हैं, जबकि ताशी ल्हुनपो का झुकाव अक्सर चीन की ओर रहता है।

अधिकतर तिब्बती मठो के समान ड्रेपुग पहाडी ढाल पर घनी और योजनाहीन बडी-बडी सफेद इमारतो का एक समूह मालूम होता है, जो तग पत्थर जडे रास्तो से अलग होती है। यह सफेद पुती हुई इमारतो का समूह, जिनके ऊपर सुनहरे मीनार निकले है तथा जहा दस हजार से अधिक भिक्षु रहते है, अपने मे एक नगर ही है।

सीरा के समान ही ड्रेपुग के प्रवेश-द्वार पर भी हमे दो विशालकाय प्रशास्ता मिले। जीनो की लम्बी पक्ति और जडी हुई सीढियो की थका देनेवाली चढाई के उपरान्त हम मठ की केन्द्रीय इमारत मे और उसके सूर्य से प्रकाशित स्वागत-भवन मे पहुचे, जहा मठाधीश हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। हमारे स्थान-ग्रहण करते ही चाय के प्याले आ गये। चाय के साथ ही धार्मिक परपरा के अनुसार चावल के कटोरे भी लाये गए, जिनमे से हमे एक चुटकी भरकर देवताओ के लिए बिखेर देना था। हमारे सामने लाल वस्त्रधारी गजे सिरवाले दस भिक्षु बैठे थे, जो ड्रेपुग के प्रमुख कार्यकर्त्ता थे। उनके चेहरे आयु के कारण झुर्रियो से भरे थे

और आंखें धर्म-ग्रन्थो के निरन्तर पढते रहने के कारण स्थायी रूप से भेंगी हो गई थी।

पुजारियों ने वक्ता द्वारा स्पष्ट किया कि वे लामाओ के अवतार नहीं हैं, जो अपना पूर्ण समय और शक्ति केवल धार्मिक कार्यो मे व्यतीत करते हैं। वे ऐसे भिक्षु हैं, जिनको प्रशासनिक और राजनैतिक अधिकार प्राप्त हैं। अनेक बार राज्य के मामलो मे उनका प्रभाव अत्यन्त महत्व-पूर्ण रहता है। यह कहा जाता है कि ये लोग सीरा और गेन्डेनवालो के साथ सिंहासन की सहायक शक्ति के प्रतिरूप हैं। वास्तव मे कुछ सामन्तो के साथ ये लोग तिब्बत के शासक ही है।

इसलिए उस दिन हमने बडी उत्सुकता और रुचि के साथ उनसे बातचीत की। यही सम्भवतः ऐसा अवसर था कि हिमालय की विद्वत्ता से पूर्ण धर्म-गुरुओ से ज्ञान प्राप्त किया जाता।

उन्होंने अमरीका के विषय मे क्या सुना था? केवल इतना ही कि यह संसार का सबसे धनी और सबसे शक्तिशाली देश है—आविष्कारो का जन्म-स्थान और गगनचुम्बी मकानो तथा रसीले उद्यानो की भूमि है।

लाबसांग ताशी, ड्रेपुग के ७३ वर्षीय ज्येष्ठ पुजारी ने हमसे कहा, यह सुना गया है कि अनेक साथी बौद्ध अमरीका मे अच्छा काम कर रहे हैं। उसने आशा प्रकट की कि अत मे अमरीका बौद्ध हो जायगा। उसकी पवित्र बौद्ध भावनाओ के विषय मे हमने कोई टिप्पणी नहीं की।

मैं अपने देश मे बहुचर्चित प्रश्न के विषय मे तिब्बत के पवित्र मनुष्यो की सम्मति जानने के लिए काफी समय से प्रतीक्षा कर रहा था। अपने पर्वतीय राज्य के एकान्त मे बैठे हुए, अपने मठो मे युद्धों से तथा वर्तमान सभ्यता की अशान्ति और उथल-पुथल मे निःशक, उन लोगो को शेष संसार के पागलपन पर विचार करने का पर्याप्त अवसर मिलता होगा। ज्योही अवसर मिला, मैंने पुजारियो के सामने अपना प्रश्न उप-स्थित कर दिया कि वे युद्ध और भय की समस्या को हल करने के लिए विश्व-सरकार के विषय में क्या विचार रखते हैं?

पुजारियों के प्रवक्ता ने कहा कि विश्व-सरकार एक उत्तम विचार

है, किन्तु बौद्ध धर्म-ग्रन्थो के अध्ययन से प्रतीत होता है कि यह सरकार काम नही कर सकती। भारत भगवान बुद्ध के समय मे शान्तिपूर्ण और सतुष्ट था। क्या वह शान्ति प्रतिद्वन्द्वी राज्यो के उदय से छिन्न-भिन्न नही हो गई ? नही, जबतक प्रतिद्वन्द्वी शक्तिया है, विश्व-सरकार काम नही कर सकती ? ससार मे शान्ति तभी अवतरित होगी, जब मनुष्य अपने आन्तरिक विचारो को समझे, आत्मा को पहचाने और लोभ का नाश करके दूसरो की सहायता का विचार करने लगे।

ड्रेपुग के हमारे अतिथियो मे सबसे अधिक वाग्मी लोबसाग जगने ने यहांतक कहा कि ससार मे निश्चित रूप से बुद्ध के अनेक अवतार प्रच्छन्न वेशो मे विश्व के हित के लिए घूम रहे होगे। "उदाहरण के रूप मे," वह मुस्कराया, "अपने राष्ट्रपति को ही लीजिए, निश्चय ही वह जीवित बुद्ध हैं।"

राष्ट्रपति हैरी एस, ट्रूमैन ह्वाइट हाउस मे रहनेवाले जीवित बुद्ध है, निश्चय ही यह मौलिक विचार है ! किन्तु सारे भिक्षु ल्हासा, शिगात्से, ग्यान्त्सी के बडे-बडे मठो या धार्मिक जीवन के भीड से भरे केन्द्रो मे ही नही रहते। छोटे-छोटे मठ, पहाडियो के तटो पर या एकान्त पहाडो पर, जहा शान्त वातावरण और प्राकृतिक छटा से आध्यात्मिक प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है, बिखरे पडे है। फिर कुछ ऐसे लामा और भिक्षु भी है, जो पूर्ण वैरागी हो जाते है और अंधेरी गुफाओ का प्रवेश-मार्ग बडे पत्थर से ढककर अपनेको सर्वथा पृथक कर लेते है। कुछ इस कठोर तपस्या को तीन महीने या तीन वर्ष तक साधते है। एक छोटे खुले मार्ग से, उनके अनुयायी मक्खनी चाय का छोटा कटोरा और जौ उन्हे प्रतिदिन दे जाते है। वैरागियो की सेवा करनेवाले अधिकतर समीप के मठ-निवासी ही होते है। इनमे कुछ तपस्वी मृत्यु-पर्यन्त वही रहते है, कभी बाहर नही आते और फिर कभी बात नही करते।

एक दिन मेरे खटखटाने पर, ऐसे पूजा-स्थान पर मक्खनी चाय का प्याला पहुचानेवाले एक तिब्बती ने कहा, "कोई उत्तर नही मिलेगा और मेरी भेट लेने के लिए हाथ भी बाहर नही निकलेगा।" जब एक वैरागी इस प्रकार दी गई भोजन की भेंट नही स्वीकार करता, उसके

सेवक कुछ दिन प्रतीक्षा करते है, और भोजन लाते रहते हैं। तव यह निश्चित हो जाने पर कि वह मर गया है ,वे गुफा को खोलते है और करुणाजनक अवस्था मे क्षीण शरीर को सम्मानपूर्वक निकालकर उसके सन्तजनोचित सस्कार करते है। तव उसे ऊपर पर्वतो पर ले जाते हैं, जहा बडी निपुणता और आदर के साथ विभक्त करके सदैव प्रतीक्षा करनेवाले गिद्धो को खिला देते है। केवल वैरागी ही नही, अधिकतर मृतको को इसी प्रकार निवटाया जाता है। चूकि तिब्बत मे अधिकतर चट्टाने है या अधिक-तर भाग पर जमा हुआ वर्फ चट्टान की तरह सख्त होता है, थोडी ही लाशे दफनाई जाती है। और उतनी ऊचाई पर ईधन इतना महगा और दुर्लभ है कि उसे अन्तिम क्रियाओ पर वर्वाद नही किया जा सकता।

अनेक अमरीकी यह जानने को उत्सुक है कि क्या हमने जादू की क्रियाओ का—जैसे हवा मे उडना, मूर्च्छावस्था मे आश्चर्यजनक भविष्य-वाणी करते हुए दैवी प्रवक्ता या अन्य रहस्यपूर्ण उपाधि का, जो तिब्बत के नाम के साथ जुडी है, कोई प्रयोग स्वय भी देखा ? स्पप्ट शब्दो मे हमारा उत्तर है कि हमने नही देखा। हम इनना ही कह सकते हैं कि साधारण तिब्बती किसान श्रद्धालु और अन्ध-विश्वासी होता है और वह विलक्षण कृत्यो की अनन्त कहानिया कहता है। किन्तु वास्तविक अर्थ मे वह गम्भीर धार्मिक भी है। मैं इतनी दूर और ससार की अशान्तियो से घिरा हुआ होने पर भी, ध्यान लगाकर, मन्द-मन्द स्वर मे निकलनेवाली तथा निरन्तर दोहराई जानेवाली 'मणि पद्म हुं' की ध्वनि को अव भी सुन सकता हू।

तिब्बत मे आजकल यूरोपीय मिशनरी नही है। एक-दो सदी पूर्व कुछ वहा थे। तथ्य तो यह है कि इस वर्जित भूमि मे प्रवेश करनेवाले सवसे पहले पश्चिमी, रोमन कैथोलिक मिशनरी थे। यह विचित्र वात थी कि उन्हे तिब्बत के शासको की ओर से कोई कठिनता नही हुई, यद्यपि भिक्षुओ का व्यवहार सदैव मित्रतापूर्ण नही रहता था।

यह कहा जाता है कि फ्रायर ओडोरिक सन् १३२८ ई० में कैथे से ल्हासा पहुंचा, किन्तु उसकी यात्रा का कोई विश्वसनीय उल्लेख नही मिलता और इस दावे को स्वीकार नही किया जाता। तिब्बत मे सर्वप्रथम

यूरोपियन होने का श्रेय पुर्तगाली जैसुएट पादरी एन्टोनियो डि एन्ड्राड को है, जो सन् १६२६ ई० मे पश्चिमी तिब्बत मे मिशन स्थापित करने मे सफल हुआ। अनेक संकट और कठिनाइया झेलने के उपरान्त एन्ड्राडा और उसके छोटे दल ने कुछ वर्ष वाद अपने मिशन को छोड दिया।

ल्हासा पहुचनेवाला एक अन्य यूरोपीय एक आस्ट्रिया-निवासी जैसुएट जोहान ग्रूबर था, जिसका एक साथी वैल्जियम-निवासी जैसुएट एलवर्ट ड ओर्विल था। फादर ग्रूवर, जो पीकिंग के मचू-राज्य मे गणना-सहायक था, मिशनरी कार्य के लिए यात्रा नही कर रहा था। चीन से यूरोप का साधारण मार्ग, जो पुर्तगाल-अधिकृत मैकाओ से होकर थरा, उस समय डच लोगो द्वारा अवरुद्ध था और ग्रूवर, ल्हासा होकर चीन से यूरोप पहुचने का अच्छा स्थल-मार्ग खोजने निकला था। पीकिंग से अप्रैल, १६६१ मे चलकर ग्रूवर और वैल्जियन ने चीन के पश्चिमी सीमान्त पर स्थित सीनिंग से कारवा-मार्ग पकडा और कोकोनूर झील के प्रसिद्ध कारवा-मार्ग से होकर तीन महीने वाद ल्हासा पहुच गये। पवित्र नगर के मार्ग पर आते हुए उनसे किसीने छेड-छाड या झगडा नही किया, किन्तु यह वडी ही कठिन और कष्ट-साध्य यात्रा थी, जहा अनेक प्राकृतिक रुकावटें थी।

दोनो जैसुएटो ने ल्हासा मे एक मास व्यतीत किया, किन्तु वे दलाई लामा से नही मिले, क्योकि उन्होने स्पष्ट कर दिया कि वे तिब्बत के सर्वश्रेष्ठ जीवित देवता के सामने झुकेगे नही। ल्हासा-निवास की अवधि मे ग्रूवर ने व्यक्तियो, उनकी पोशाको, पोटाला तथा अन्य इमारतो के अनेक स्कैच तथा चित्र वनाए, जो वाद मे प्रकाशित हुए।

दक्षिण-पश्चिमी मार्ग से होकर पहाडो को वर्ष की सवसे खराव ऋतु मे पार करते हुए, वे नेपाल पहुचे। छोटे हिमालियन प्रदेश की राजधानी काठमाडू मे, जो हमारे समय मे आगन्तुको के लिए दृढता से वन्द था, उनका अच्छा स्वागत हुआ। वे पीकिंग छोडने के लगभग एक वर्ष वाद अप्रैल, १६६२ मे आगरा (भारत) पहुचे। वेचारा ड आर्विल यात्रा की कठिनाइयो के कारण वहा पहुचते ही मर गया। ग्रूवर अपने खगोलिक और भौगोलिक अन्वेषणो के साथ यूरोप पहुचा। ग्रूवर पहला

वास्तविक भूगोल-शास्त्री था, जो तिब्बत मे प्रवेश पा सका। उसके उपकरणो की अपरिशुद्धता का विचार करते हुए उसके निष्कर्षो की शुद्धता एक विशिष्ट वैज्ञानिक उपलब्धि ही समझनी चाहिए।

उसके बाद १७०८ ई० मे केपुचिन मिशनरी आये। उन्होने नेपाल मे एक मिशन पहले ही स्थापित किया हुआ था। अपने ईसाई धर्म के सन्देश को नये क्षेत्रो मे लाने के उद्देश्य से चार केपुचिन पादरी ल्हासा को चले और बिना किसी क्षति के दो महीने मे वहा पहुच गये। उनमे सबसे प्रमुख था फादर ओरेजियो देला पेना जो कभी-कभी 'तिब्बत का 'लिविंगस्टन' भी कहलाता है।

पादरियो को अनेक उत्थान और पतन देखने पडे। उन्हे रोम से अपने उच्च अधिकारियो से सहायता मिलने मे कठिनता होने लगी, क्योकि वे समझते थे कि धर्म-परिवर्तन के कार्य मे विशेष व्यय की आवश्यकता नही है। किन्तु केपुचिन पादरी प्रभावशाली तिब्बती अधिकारियो से सहायता पाने मे सफल हो गये और उन्हे ल्हासा मे एक छोटा मठ और गिर्जाघर बनाने की आज्ञा मिल गई, जो कि राजधानी मे बननेवाला प्रथम और एक ही गिर्जाघर था।

जिस समय गिर्जा बन रहा था, क्यूची नदी ने, जो ल्हासा के समीप से बहती है, गर्मी की वर्षाओ मे अपने किनारे तोड डाले और बाढ का पानी नगर मे आ गया। द्वेषी लामाओ ने अन्य जनता के साथ, इन बाढो के लिए विदेशी पादरियो के अनधिकार प्रवेश को दोषी ठहराया और उनको मारने चले। किन्तु केपुचिन पादरियो ने उस फसाद को पीले साटन पर लिखित और दलाई लामा तथा राजा की स्पष्ट मुहरवाले आज्ञा-पत्रो को दिखाकर शान्त कर दिया। इस घटना के बाद राजा ने घोषणा प्रकाशित कराई, जिसके अनुसार पादरियो को पीडा देना या उनकी सपत्ति को हानि पहुचाना दडनीय अपराध कर दिया गया और यह भी कहा कि बाढे पादरियो की उपस्थिति के कारण नही हैं, किन्तु तिब्बतियो के अपने ही पापो के कारण है।

दूसरी अडचन जैसुएटो ने उत्पन्न की और तिब्बत मे मिशन स्थापना के लिए प्राथमिकता का दावा किया। अन्त मे रोम ने इस झगडे को

केपुचिनो के पक्ष मे तय कर दिया।

तिब्बत के अन्दरूनी राजनैतिक मतभेदों की इस छोटे मिशन पर बुरी प्रतिक्रिया हुई। ल्हासा के और आसपास के मठो के सैकडो बौद्ध भिक्षु राजमहल पर चढ दौडे और राजा पर विदेशियो की ओर पक्ष-पात का दोष लगाया। राजा मे शक्तिशाली तिब्बती भिक्षुओ को अप्रसन्न करने की हिम्मत नही थी और उसने केपुचिनो की सहायता बन्द कर दी। सडको पर उनका मज़ाक उडाया गया और बेइज्जती की गई।

पादरी कुछ समय रुके रहे, पर वे अपने कार्य मे प्रगति नही कर सके। वे इतने साहसी थे कि उन्होने तिब्बती बौद्धधर्म के गढ में ईसाई केन्द्र स्थापित कर दिया। अन्त मे उनके प्रमुख फादर ओरेजिओ डेला पेना ने वृद्धावस्था और मिशनरी कार्य के कठोर श्रम की थकान से जर्जर होकर अपने दो शेष सहायको के साथ अनिच्छापूर्वक चले जाने का निश्चय किया। केपुचिन मिशन १७४५ ई०मे बन्द हो गया। इसका अब चिह्न भी नही है। छ सप्ताह के बाद भग्न-हृदय डेला पेना नेपाल के केपु-चिन मिशन मे मर गया। उसने तिब्बत मे २२ वर्ष व्यतीत किये थे।

दूसरा प्रारंभिक यूरोपीय आगन्तुक इप्पोलिटो डैसीडैरी एक जैसुएट था, जिसे उसके उच्च अधिकारियो ने तिब्बत मे एक शताब्दी पूर्व समाप्त हुए जैसुएट मिशन के सबधो को फिर से स्थापित करने का भार सौपा। काश्मीर मे लेह नामक स्थान पर दो महीने ठहरने के उपरान्त वह तिब्बती पठारो की कठोर यात्रा पर चल पडा और छ महीने बाद मार्च १७१६ मे, उसकी यात्रा से थकी आखो के सामने पोटाला की चमकती हुई छतो का सुन्दर दृश्य आया। जब वह पहुचा, केपुचिन मिशन अस्थायी रूप से बन्द हो चुका था, किन्तु राजा और उसके प्रधान मत्री ने 'विदेश से आये हुए लामा और कानून के डाक्टर' के रूप मे उसका खूब स्वागत किया तथा उसे धर्म-प्रचार और मक्खन खरीदने तक की आज्ञा दे दी, जो कि एक विदेशी के लिए असाधारण अनुग्रह था।

डैसीडैरी भाषा और धर्म के गहन अध्ययन मे जुट गया, जिससे कि वह अपने दृष्टिकोण से उसकी त्रुटियो के विषय मे लिख सके और

कैथोलिक धर्म का पक्ष पुष्ट कर सके। यह विस्मयजनक है कि किस प्रकार लामा लोगो ने उदारता-पूर्वक उसके अध्ययन मे सहायता दी। उनकी मनोवृत्ति अत्यन्त सहनशील थी, जबकि जैसुएट का मुख्य उद्देश्य बौद्ध धर्म की जड खोदना था। उसे प्रसिद्ध सीरा मठ मे भी बुलाया गया, जहा उसे एक मकान दिया गया तथा गिर्जा बनाने की और ईसाई धर्म के अनुसार पूजा आदि की अनुमति दी। वह धार्मिक मामलो मे भिक्षुओ से वाद-विवाद भी करता था।

डैसीडैरी ने तिव्वती भाषा मे एक पुस्तक लिखी और उसीके कथनानुसार उसने वडी हलचल पैदा की। तिव्वती मठ और विश्वविद्यालय से विद्वान भिक्षु उसके घर पुस्तक को देखने और पढने आये। डैसीडैरी ने पुस्तक राजा को समर्पित की, जिसने उसीके कथनानुसार उसे एक आम जलसे मे ग्रहण किया और जोर से पढवाया। लामाओ और तत्वज्ञों ने निर्णय दिया कि उसके सूत्रवाक्य और सिद्धान्त बडी अच्छी तरह निष्पादित किये गए है, किन्तु वे उनके मत और विश्वासो के पूर्णतया विरुद्ध है।

१७२१ ई० मे दो साल की यात्रा के वाद एक पत्र डैसीडैरी के पास रोम की आज्ञा लेकर पहुचा कि उसे तिव्वत छोडना है। वह वहा ५ वर्ष रह चुका था और अधिकतर समय वह केपुचिनो के साथ मेल से रहा, यद्यपि रोम मे जैसुएटो के साथ झगडा चल रहा था। उसका तिव्वती रीति-रिवाज, धर्म और इतिहास का वर्णन उस समय तक लिखे गये किसी भी यूरोपीय के वर्णन से अधिक परिपूर्ण और महत्वशाली था।

१७ | तिब्बत-निवासी दो अंग्रेज

तिब्बत मे चार यूरोप-निवासी रहते हैं। वे वहा उसी तरह रहते है, जैसे कि तिब्बती रहते है और उस देश, वहा के मनुष्यो और रहन-सहन मे पूर्ण आनन्द लेते हैं। वे हमारे पश्चिमी जीवन की दौड-धूप और बैचेनी से दूर, जो अधिकतर उच्च रक्तचाप तथा समय से पूर्व दिल के दौरो को जन्म देती है, विश्राम और शान्ति के साथ रहते हैं।

पहला यूरोपीय एक लन्दन-निवासी रेजीनाल्ड फौक्स है। इसका कहना है कि उसने ल्हासा मे अपना घर बना लिया है और अब इंग्लैंड कभी नही लौटेगा। वह तिब्बत मे किसी भी यूरोपीय से अधिक रह चुका है। वास्तव मे सभी दृष्टिकोणो से अब उसे तिब्बती ही समझना चाहिए, यूरोपीय नही।

फौक्स की तिब्बती पत्नी है और चार बच्चे हैं। सबसे बडे तीन,दो लडके और एक लडकी, भारत मे शिक्षा पा रहे है। चूकि तिब्बत मे विदेशी भाषाओ का ज्ञान दुर्लभ है और यह आजकल क समय मे पूरी तरह आवश्यक है, रेजीफौक्स के आग्ल-तिब्बती पुत्रो को दलाई लामा के शासन मे किसी दिन ऊचे पद प्राप्त हो सकते हैं।

प्रथम विश्वयुद्ध के प्रारभ मे सन् १९१४ मे रेजी ब्रिटिश सेना मे भर्ती हुआ। इस समय केवल १४ वर्ष का होने के कारण उसे अपनी आयु के विषय मे झूठ बोलना पडा। किन्तु वह किचनर की भीड के साथ फ्रान्स पहुचने मे सफल हो गया। साढे चार वर्ष तक उसने मोटर-साइकल द्वारा सन्देश-वाहक का काम किया। उसी समय उसने बेतार के तार के कार्य का ज्ञान प्राप्त किया। युद्ध के बाद लन्दन लौटने पर उसे मध्य-पूर्व मे कार्य पर भेजा गया। साढे तीन वर्ष तक वह बगदाद के सचार-विभाग मे काम करता रहा। वहा से उसका भारत को स्थानान्तर किया गया। इस बार आग्ल-भारतीय

रेल विभाग में एक दिन, चौदह वर्ष हुए, उससे पूछा गया कि क्या वह तिब्बत जानेवाले ब्रिटिश दल के साथ कोई कार्य स्वीकार करेगा। उसने वह अवसर तुरन्त स्वीकार कर लिया और तब से वही रहता है।

ज्यो-ज्यो समय बीतता गया, उसने निश्चय किया कि किसी तिब्बती लडकी से विवाह कर लेना उपयुक्त होगा। उसने भारत सरकार के पद से त्यागपत्र दे दिया और ल्हासा मे दलाई लामा के अधीन पद स्वीकार कर लिया।

जैसाकि मैं बता चुका हूं, तिब्बती यद्यपि अपने देश को बन्द ही रखने के पक्ष मे दृढ हैं, तथापि वे पिछले कुछ वर्षों मे हुए विश्वव्यापी परिवर्तनो के प्रति सचेत होते जा रहे हैं। वे अनुभव करते है कि जो कुछ अन्यत्र हो रहा है, अपनी सुरक्षा के लिए उन्हे उससे सम्पर्क बनाये रखना चाहिए।

द्वितीय विश्व-युद्ध मे हमारे भारत-स्थित सैनिक-दल ने दलाई लामा को एक रेडियो सेट भेंट किया, जो संसार के सभी मुख्य स्टेशनो को ग्रहण कर सकता था। इसीके लिए फौक्स की आवश्यकता हुई। उसका एक काम पीकिंग, मास्को, बी० बी० सी०, अमरीकी नभवाणी, टोकियो, दिल्ली जैसे केन्द्रो से रेडियो पर सम्पर्क स्थापित करना है। हर सुबह रेजी दलाई लामा की सरकार को विश्व की नवीनतम विशिष्ट प्रगतियो तथा तिब्बत से विशेष सम्बन्धित समाचारो के सार से अवगत कराता है।

रेजी इससे भी महत्वपूर्ण कार्य, आन्तरिक संचार का प्रबन्ध करके करता है। उसने तिब्बत मे रेडियो-चालको का एक दल तैयार कर दिया है। उसके अथक उद्योगो के कारण, अब तिब्बत मे प्रत्येक महत्व-पूर्ण स्थान (युद्ध की दृष्टि से) पर विशेषतया चीनी सीमान्त पर रेडियो स्टेशन सम्पूर्ण योजना का नाडी-केन्द्र है और शासन के लिए शीघ्र समाचार-सचारण का एकमात्र साधन है। तिब्बतियों को एक ऐसा व्यक्ति चाहिए, जिसे गोपनीय सरकारी कार्यो को सौपा जा सके। इतने वर्षो से उन्हें लन्दन मे पैदा हुए रेजी फौक्स पर पूरा विश्वास है।

जब हम अमरीकी नभवाणी द्वारा घर के समाचार पाने

के लिए उसके साथ बैठे थे, हमे विदित हुआ कि साम्यवादी समाचार-सचार रोकने का काम कैसी लगन से कर रहे हैं। उन्होने अमरीकी समाचार-कार्य को सभी तरगो पर पूर्ण रूप से मिटाया हुआ है। हमने रेजी को तिव्वत मे अपने दूसरे अग्रेज साथी वौव फोर्ड को समाचार भेजते भी देखा। फोर्ड शाही वायुसेना का एक भूतपूर्व रेडियो-चालक है, जो हाल ही मे आया है। फौक्स उसे लाया और वहनीय रेडियो सामग्री से लैस करके उसे उत्तर-पूर्व तिव्वत मे एक विशेष सकटपूर्ण स्थान पर नियत किया, जवकि तिव्वती लामा चीनी साम्यवादियो की आगे वढती लहर से वैचेन हो रहे थे। जव वौव, रेजी को सीमान्त की प्रगतियो के विषय मे सूचना दे चुका, तो हमने परस्पर वार्तालाप किया। वौव वहुत दूरस्थ नगर मे रहता है जहा कोई यूरोपीय नही है। उसके नगर के व्यक्ति अग्रेजी नही बोल सकते, पर वह अव तिव्वती कुछ-कुछ समझने लगा है। यदि फोर्ड अपने अनुभवो की डायरी रक्खे, तो निश्चय ही इस समय की बहुत आकर्षक कहानी सिद्ध हो।

रेजी अपने समय का वहुत-कुछ भाग ससार के सभी अव्यवसायी लघु-तरग चालको से बातचीत मे व्यतीत करता है। वह विशेष रूप से अमरीकी हम से वात करना पसन्द करता है। और वे सव भी एक साथ उससे ल्हासा पर सपर्क करना चाहते हैं। ज्योही रेजी समाचार प्रसारण प्रारभ करता है, वीसियो अव्यवसायी रेडियो-चालक उसे वातचीत के लिए आकर्षित करना चाहते हैं। जव रेजी इन अनौपचारिक भूमण्डलीय वार्तालाप मे सलग्न था, हम कई रात उसके समीप बैठे। वह अनेक अमरीकी लघुतरग चालको को अपना व्यक्तिगत मित्र समझने लगा है, यद्यपि उसने उन्हे कभी देखा नही हैं। फौक्स जैसा व्यक्ति तिव्वत मे स्थायी रूप से क्यो रहना चाहता है ?

छोटे कद के, कुछ-कुछ सफेद वालोवाले उस रेडियो-चालक ने स्पष्ट किया, "आप यह समझलें कि मैं ससार की छत पर वैठना पसन्द करता हू। मैं इस देश और यहा के आदमियो को पसन्द करता हू। तिव्वत ने मेरे साथ भलाई की है, मैं इसे छोडने का कोई कारण नही देखता।"

यह और भी आश्चर्यजनक है जबकि फौक्स के स्वास्थ्य की समस्या भी गम्भीर है। कई वर्षों तक वह सन्धिवात गठिया से पीडित रहा। इस पीडादायक रोग मे जोडो पर बुरी तरह की सूजन बढ जाती है। जब हम ल्हासा मे थे, उसके पैर सूजे हुए और पीड़ायुक्त थे और वह महान कष्ट के साथ दोनो हाथो मे बेत लेकर लडखडाता चलता था। उसकी दशा मे कोई भी दूसरा व्यक्ति चिकित्सा के लिए कभी का पश्चिम चला गया होता, पर रेजी नही गया।

फौक्स एक अमरीकी साप्ताहिक समाचार-पत्र मगाता है। उसके एक अक मे उसने एक नई ओषधि के विषय मे पढा, जो कुछ प्रकार के सन्धिवातो का पूर्ण उपचार करनेवाली बताई गई। उसे निश्चय था कि उसकी बीमारी उसी सूची मे आती है। फौक्स ने पूछा कि हम इस नये अन्वेषण 'कोर्टेजन' के विषय मे क्या जानते है? यद्यपि हम इसके विषय मे कुछ नही जानते थे, हमने रेजी से वादा किया कि हम घर पहुचकर नई ओषधि के विषय मे पूरा पता लगायेंगे और सभव हो सका तो कुछ मात्रा मे उसे भेजेगे।

अक्तूबर के अन्त मे अमरीका पहुंचते ही डैडी और मैने तुरन्त कोर्टेजन के विषय मे पूछताछ की। पहले जो कुछ हमे ज्ञात हुआ वह अत्यन्त निराशाजनक था। हमे बताया गया कि कोर्टीजन अभी प्रयोगात्मक स्थिति मे ही है और इसका बनाना भी इतना कठिन है कि यह कहना असभव है कि वह कबतक मिल सकेगी।

शीतकाल के मध्य मे रेजी ने मुझे एक लम्बा पत्र लिखा, जिसमे उसने सन्धिवात के नये दौरे का उल्लेख किया, जो पिछले सभी दौरो से तीव्र था, जिसके कारण वह कई सप्ताह बिस्तर पर पडा रहा। उसने पूछा कि हम वह चमत्कारिक ओषधि उसे कब भेज सकेंगे। हम केवल यही उत्तर दे सकते थे कि हम मार्ग निकालने के प्रयत्न मे है। कुछ महीनो बाद रेजी ने भारत को समाचार प्रसारित किया, जो हमे प्रसारित किया गया—"सन्धिवात गठिया अब बहुत तीव्र हो गया है। ओषधि शीघ्र भेजे।"

यह स्पष्ट था कि हमारे अंग्रेज मित्र की सहनशीलता चरम सीमा पर

पहुच चुकी थी, पर हम क्या कर सकते थे ? निराशा से व्याकुल होकर हमने ओषधि वनानेवाली एक सस्था मेरेक एड कपनी से कृत्रिम रचना द्वारा कोर्टेजन तैयार करने के लिए सम्पर्क किया। उन्होने फौक्स के विपय मे हमारी कहानी रुचि से सुनी। हमने पूछा कि कुछ हो सकता है ? उन्होने कहा, शायद। डा० जेम्स कार्लिस्ले मैरेक के चिकित्सा-विशेषज्ञ ने स्पष्ट किया कि उसे पिछले जाडो मे ही ओषधि के विपय मे ज्ञात हुआ है और उसे वनाने का सरल ढग भी खोजा जा चुका है। उसने हमे वताया कि रेजी की समस्या को शीघ्र ही हल कर सकने की पूरी सभावना है।

अविलम्ब ही और विना हिचकिचाहट के मैरेक प्रयोगशाला ने इस दुर्लभ ओषधि का पूरे वर्ष मे निर्मित स्टाक, जिसका मूल्य हजारो डालर था, विना मूल्य के फौक्स को भेजने के लिए हमे दे दिया। मेरे इन पक्तियो को लिखते समय रेजी फौक्स, जो तिब्बती सचार का अपरिहार्य धुरा है, कलकत्ता पहुचने के लिए वडे कष्ट के साथ घोडे पर वैठकर हिमालय को पार कर रहा है। वहा पहुचकर वह सयुक्त राज्य के प्रधान समुपदेष्टा चार्ल्स डैरी से कोर्टीजन की रसद प्राप्त करेगा, जो हमने हवाई जहाज से भेजी है। हम आशा करते है कि इससे रेजी ठीक हो जायगा। यदि ऐसा होगा, तो वह तिब्बत को वचाने मे सहायता दे सकेगा।

यद्यपि वाशिंगटन मे दलाई लामा के देश के लिए अमरीकी सहायता पाने मे हमारे प्रयत्न निरर्थक रहे, तथापि हमे सन्तोष है कि हम रेजी के कष्ट को दूर करने मे सहायक हो सके। मैरेक एण्ड कम्पनी की उदारता से डैडी और मैं तिब्बत की कम-से-कम इतनी सहायता तो कर सके।[1]

---

१ इन चारो मे से अब कोई भी तिब्बत मे नहीं है। इस संस्करण का अन्तिम अध्याय, जो १९५५ ई० मे मूल पुस्तक मे जोड़ा गया है, अन्य बातो के साथ यह भी बताता है कि सन् १९४९ ई० मे हमसे भेंट के उपरान्त उनका क्या हुआ।

१८ | शांग्री ला को पलायन

तिब्बत मे अन्य दो यूरोपीयो की कहानी रेजी फौक्स से भी, जो अपने जन्म-स्थान लन्दन की अपेक्षा ल्हासा मे अधिक सुख मानता है, ज्यादा रगीली है। यह दो भागे हुए युद्ध-बन्दियो से सम्बन्धित है, जो अब ल्हासा मे रहते हैं। वे वहा किस प्रकार पहुचे, यह कहानी हमारे समय के साहसिक कार्यों मे शीर्षस्थानीय गिनी जा सकती है।

सन् १९३९ के वसन्त मे आस्ट्रिया-निवासी दो पर्वतारोही काश्मीर घाटी मे आये। उन्होने भारतवर्ष की यात्रा नगा पर्वत पर चढने के लिए की थी, जो कि उस समय हिमालय का अपराजित देव था। जब वे पर्वत से उतरे, हिटलर ने युद्ध प्रारभ कर दिया था। यूरोप मे युद्ध की ज्वाला भडक उठी थी और उन्हे शीघ्र ही भारत के युद्ध-वन्दी शिविर मे भेज दिया गया। मौका पाकर वे देहरादून के बन्दी-शिविर से, जो दिल्ली से १२० मील उत्तर हिमालय की तराई मे है, भाग निकले। कई महीनो तक वे सीमान्त रक्षको और तिब्बती अधिकारियो से लुका-छिपी खेलते रहे। उन्होने ऊचे पर्वतो, अज्ञात मरुस्थलो और वर्फ के मैदानो से यात्रा की और अन्त मे वर्जित नगर मे पहुंच गये, जहा उनका स्वागत हुआ।

द्वितीय विश्व-युद्ध को समाप्त हुए अनेक वर्ष हो गये है, पर वे अभी तक ससार की छत पर ही निवास कर रहे है। आज वे दोनों दलाई लामा की सेवा मे तिब्बती अधिकारी हैं। उन्होने हमे बताया कि उन्होने शाग्री ला, जहां कि वे भागकर पहुच गये हैं, कभी न छोडने का निश्चय कर लिया है।

इन दोनो पर्वतारोहियो के नाम क्या है ? एक पेटर आफ्शनेटर है, जो व्यवसाय से इजीनियर और आस्ट्रिया के सुन्दर नगर किरज ब्यूहल का निवासी है। दूसरा ग्राज नगर का हेनरी हैरर है। बड़ा पेटर ५० वर्ष का, छोटा हेनरी ३६ वर्ष का भूरे बालोवाला सुन्दर युवक है।

युद्ध से पूर्व वह आस्ट्रिया की ओलपिक स्की[1] टीम का सदस्य था।

जिस समय हम ल्हासा के उस भवन की छत पर, जहा हम ठहरे थे, वैठे हुए थे, उन्होने नक्शे आदि सामने फैलाकर अपनी कहानी पहली वार विस्तार से सुनाई।

अग्रेजो ने उन्हे अन्य जर्मनी और आस्ट्रियावालो के साथ देहरादून मे वन्द कर रक्खा था। तार के जगले के पार वे वर्फ से ढकी हिमालय की चोटियो को देख सकते थे, जिनकी दूरी अधिक मील नही जान पडती थी। यदि वे उस ऊचाई तक भागकर पहुच सकते, तो वे जानते थे कि भारत के कुछ ही सैनिक या पुलिसवाले उनका पीछा कर सकेंगे।

छुटकारे के कई प्रयत्न किये गए और हैरर तथा आफशनेटर उन सवमे सम्मिलित थे। उन्होने अप्रैल १९४४ मे अन्तिम प्रयत्न किया, जो शिविर के नये अग्रेज अफसर की असावधानी के फल-स्वरूप हुआ। जेल की सीमा मे, कमीशन-प्राप्त या विना कमीशनवाले अग्रेज अफसरो के साथ देशी मजदूरो के दल अक्सर आया करते थे। वन्दी लोग किसी तरह पर्याप्त अग्रेजी और भारतीय पोशाके अपने वेश वदलने के लिए एकत्र करने मे सफल हो गये। एक दिन उनमे से पाच ने अपने चेहरे और हाथ पोटाशियम परमेगनेट (लाल दवा)से रग लिये और भारतीय मजदूर का रूप वनाया। दूसरे दो ने अग्रेज अफसरो का वेश वनाया। सातो वेधडक होकर वन्दी शिविर से वाहर हो गये, जैसे किसी काम पर नियुक्त हो।

हेनरी हैरर उस पलायनदल का सदस्य नही था। वह दूसरी तरह निकला। कैम्प के चारो ओर दो ऊचे तारो के घेरे थे, उनके बीच मे एक चौडा स्थान छूटा था, जिसे वन्दी 'चिकन रन'[2] कहते थे। इसके ऊपर एक स्थान पर एक घेरे के ऊपर तक छत जैसी पडी थी, जो सन्तरी के वचाव के लिए थी। हेनरी उसी छत से होकर दोनो घेरो के पार हो गया, उसी दिन जवकि ये सब भागे थे। उसपर गोली दागी गई, पर चूक गई और वह उस मिलन-स्थान पर पहुचने मे सफल हो

---

१. वर्फ का खेल २ मुर्गो के भागने का स्थान।

गया, जहा कि भागनेवालो ने मिलना निश्चय किया था।

भागे हुए बन्दियो मे से दो, अंग्रेज अफसरो की चुराई हुई पोशाक पहने, भारत से बाहर जाने के प्रयत्न मे रेल के स्टेशन की ओर चले। शेप छ. तिब्बत को अपना लक्ष्य बनाकर हिमालय की ओर चल पडे। ग्यारह हजार फुट की ऊचाई पर वे नीलग के आबादी-रहित गाव मे पहुंचे। गाववाले, जो दर्रो के बर्फ से बद हो जाने पर प्रत्येक शीत ऋतु में नीलंग को छोड जाते है, अभी तक नही लौटे थे, इसलिए बन्दियो ने अपनेको सुरक्षित समझा। उन्होने वहां दस दिन विश्राम किया और तिब्बत-सीमा की ओर, जो अभी दो दिन के रास्ते की दूरी पर थी, बढना जारी रखने का फैसला किया।

नीलग पर भगोडो के दल के एक सदस्य ने निश्चय किया कि देहरा-दून शिविर का जीवन ससार के इस सबसे बर्फीले निर्जन स्थान से अच्छा है। वह लौट गया। शेप पाच हिमालय की ऊपर की दिशा मे, सतलज नदी की घाटी की ओर, जो मध्य एशिया की एक बडी नदी है, चल पडे।

यहा यह मतभेद हो गया कि किस मार्ग से जाना चाहिए। समूह के दो भाग हो गये। दो आदमी पश्चिम की ओर स्पिती घाटी की तरफ बढे। तिब्बत का यह प्रदेश हत्यारे लुटेरो के लिए प्रसिद्ध है। पेटर आफ्शनेटर, हेनरी हैरर और तीसरा व्यक्ति कौप उत्तर की ओर सिन्धु नदी की घाटी को लक्ष्य करके बढे।

सीमा के पार उनका प्रथम गन्तव्य स्थान पश्चिमी तिब्बत का थोलिंग स्थित सबसे विशाल मठ था। यह मठ एशिया के उस भाग मे दूर-दूर तक प्रसिद्ध है। यह लामा-मठो मे सबसे पुराना और सबसे धनी एक मठ है।

तिब्बती अधिकारियो को उस ओर आनेवाले तीनो यूरोपीयों की हवा मिल गई। उनके आने की प्रतीक्षा करने के स्थान मे तिब्बत के उस दूरस्थ कोने मे नियुक्त दलाई लामा का प्रतिनिधि स्वयं आगे बढा और उनको थोलिंग से दो दिन के मार्ग पर मिल गया। उन्होंने भगोडे आस्ट्रिया-निवासियों से कहा कि उनको लौट जाना चाहिए। प्रारंभ मे मे तिब्बती अधिकारियो ने उनसे नम्रता और नम्रतापूर्वक व्यवहार

किया, किन्तु जब उन्होने देखा तीनो यूरोपीय आगे बढने पर अडे है, तो उन्होने सडक को बन्द कर दिया और कठोरतापूर्वक हठ किया कि उनको वापस लौट जाना चाहिए। फिर भी भगोड़े बन्दी उन्हे धक्का देकर आगे निकल गये और थोलिंग की ओर चढते रहे। उस विशाल मठ पर पहुचकर उन्होने मुख्य पुजारी से मिलने की माग की। प्रधान लामा अधिकारी ने स्पष्ट किया कि यद्यपि वह उनकी सहायता करना चाहता है, तथापि वहा ऐसा कुछ न था कि वह सहायता कर सकता। उसने परामर्श दिया कि वे कुछ दिन और आगे बढें और उसने शाग्त्सी नगर तक, जो उत्तर-पश्चिम की ओर दो दिन की दूरी पर था, रक्षक दल भी साथ भेज दिया।

वहापर उन्हे स्थानीय तिब्बती अधिकारी ने जोग पोन, उस प्रदेश के गवर्नर, के हवाले कर दिया। जोग पोन ने उन्हे परम्परागत रेशमी रूमाल भेंट किया और उनके लिए दावत की व्यवस्था की गई, जिसमे उनको अगणित याक-मक्खन की चाय के प्याले दिये गए। उसने उनकी कहानी को नम्रता और सहानुभूतिपूर्वक सुना, किन्तु उसने स्पष्ट किया कि बिना ल्हासा की आज्ञा के वह भी कुछ नही कर सकता। उन्हे भारत वापस चला जाना चाहिए। वास्तव मे, उसने उन्हे सबसे सीधे रास्ते शिपकी दर्रे से लौट जाने की आज्ञा दी।

भग्न हृदय से वे दक्षिण को लौटे, किन्तु वे सीमा पर पहुचे कि उनको फिर आशा हुई। उन्हे सीमान्त रक्षक नही मिले। केवल एक तख्ती लगी थी—'शिमला २०० मील।' भारत की ग्रीष्मकालीन राजधानी शिमला तो अन्तिम स्थान था, जहा वे जाना चाहते।

भाग्य से शाग्त्सी के जोग पोन ने उन्हे भारत की सीमा मे घुसा देने के लिए सशस्त्र प्रहरी नही भेजे थे। उसने केवल जाने की आज्ञा ही दी थी। तिब्बत-भारत-सीमा पर उन्होने अधिकारियो से कहा कि वे 'अमरीकी' है। मध्य एशिया के उस दूर स्थित कोने मे भी अमरीकी शब्द मे जादू है या था। आफ्शनेटर और हैरर का भारत लौटने का विचार नही था। उन्होने तिब्बत मे ही रहने का निश्चय कर लिया था। किन्तु उनका साथी कौप उनको छोड गया और अपनेको सौपने

देहरादून लौट गया।

सीमा पर तिब्बतियो को विना वताये ही कि उनके मन मे क्या है, दोनो आदमी पहाडो पर चढने लगे और उत्तर-पूर्व की ओर वढे, जिसे वजारों ने भी कदाचित पार किया होगा। इसका नाम वुद-वुद ला है और ऊचाई १८००० फुट है।

पेटर और हेनरी रात में ही यात्रा करते थे तथा गावो और वजारों के डेरो से दूर रहते थे। पाच दिन वाद वे सिंधु घाटी पर उतरे, जहा वे तिब्बत के एक वड़े कारवा-मार्ग पर पहुच गये, जो कि लद्दाख और ल्हासा का मुख्य व्यापार-मार्ग है। यह पूर्व-पश्चिम काश्मीर से दलाई लामा की राजधानी तक जाता है। व्यापारी तथा दूसरो ने, जिनसे मार्ग मे उनका सामना हुआ, उनकी ओर ध्यान नही दिया।

इस कारवा-मार्ग पर पाच दिन और यात्रा करके वे पश्चिमी तिब्बत की वर्तमान राजधानी गर्टोक पहुंच गये। यहा वे दलाई लामा के प्रतिनिधि भिक्षु-अधिकारी तथा सामान्य सामन्त से नही वच सके। इस वार भाग्य उनके साथ था। उन्होने उन दोनो अधिकारियो को मित्र वना लिया, जिन्होने उन्हे दक्षिण-पूर्व की ओर वढ जाने दिया, किन्तु इसमे भी एक पकड थी। उन्हे इस भरोसे पर आज्ञा दी गई थी कि वे लगभग एक मास तक कारवां के मार्ग द्वारा यात्रा करेंगे। उस समय के अन्त मे जवकि वे उस जोड पर पहुचे, जहा एक प्रमुख पहाडी मार्ग दक्षिण की ओर नेपाल को घूमता है, उन्हे वह रास्ता पकड लेना होगा और तिब्बत छोड़ देना होगा। गर्टोक में उन्होने जो मित्र वनाये, उन्होने उनसे वड़ा अच्छा व्यवहार किया, उन्हे तिब्वती वस्त्र दिये, यात्रा के लिए भोजन दिया और सामान लादने के लिए तीन याक दिये।

गर्टोक से दक्षिण-पूर्व आठ दिन चलकर यह आस्ट्रियाई जोडा एशिया की एक ऊची कथा-प्रसिद्ध झील पर पहुचा। भारतवासी इसे मानसरोवर झील कहते है। स्वीडन-निवासी अन्वेषक स्वेन हेडन ने इसे एशिया की सवसे सुन्दर झील वताया है। यह हलकी नीली झील मध्य एशिया के अधिकतर निवासियो और हिन्दुओ द्वारा पवित्र मानी जाती है। सहस्रों यात्री यहां प्रतिवर्ष आते हैं। यह सोलह हजार फुट की

ऊचाई पर है और बर्फ से ढकी चोटियो से घिरी है। इनमे से एक गुर्ला मान्धाता वीस हजार फुट ऊची है।

यद्यपि गुर्ला मान्धाता मानसरोवर झील से ऊपर दीखनेवाली सबसे ऊची चोटी है तथापि समीप ही एक और चोटी अधिक पवित्र है। कैलास पर्वत, २२ हजार फुट ऊचा हिमालय का सम्राट 'माउण्ट आफ ओलिम्स' और 'फ्यूजी यामा' के साथ पृथ्वी पर सबसे सम्मानीय पर्वत गिना जाता है। करोडो हिन्दुओ और बौद्धो के लिए कैलास पर्वत— भगवान शिव, जो हिन्दुओ के त्रिदेवो मे से एक तथा अणुशक्ति के देव है, उनका निवास—एशिया का सबसे पवित्र शिखर है। दोनो आस्ट्रिया-वासियो ने आसपास के प्रदेश के अन्वेषण मे कुछ समय लगाया और आगे बढ गये। दिन-प्रतिदिन, सप्ताह-पर-सप्ताह, दोनो आदमी पुराने कारवा मार्ग पर बढते चले गये।

आफ्शनेटर और हैरर का भाग्य अभी तक सीधा ही था। जब वे कारवा-मार्ग के इस जोड पर पहुचे, जहा से उन्हे दक्षिण की ओर नेपाल जाने की आज्ञा थी, उन्हे दो उच्च अधिकारी मिले, जिनसे उन्होने मित्रता कर ली। गर्टोक पर दी गई आज्ञा के पुष्टीकरण के स्थान पर उन्होने उन्हे त्रेडून के छोटे नगर मे ठहरने और एक-दो सप्ताह आराम करने की आज्ञा दे दी। अधिकारियो ने उन्हे एक दूसरे नगर मे जाने का पास भी दिया, जो उनकी सारी लम्बी और श्रम-पूर्ण यात्रा मे अभी तक मिले सभी स्थानो से अधिक सुखद निकला। यह एक तिब्बती गाव कीरोग ज़ोग, था जो नौ हजार फुट की ऊचाई पर था, जिसे तिब्बती लगभग समुद्री सतह की ऊचाई के बराबर समझते है।

यह नगर वन-प्रदेश की पक्ति से नीचे है और इसकी जलवायु समस्त देश से भिन्न है। दोनो आस्ट्रियावासी पर्वतो से घिरे और उनके ही कथनानुसार आश्चर्यजनक वन के सुन्दर स्थान पर महीनो ठहरे।

सन् १९४५ के शरद मे उन्होने फिर अपना रास्ता पकडा। इस वार तिब्बती अधिकारियो ने उन्हे दक्षिण की ओर नेपाल मे यात्रा करने की आज्ञा दी। पेटर और हैनरी उस ओर वढे, किन्तु जैसे ही अन्धेरा शुरू हुआ, वे पीछे घूमे और उत्तर की ओर चल पडे। वे अभी तक

ल्हासा पहुंचने का दृढ निश्चय किये हुए थे। उसके बाद वे चौतीस दिन तक चाग तांग के पार, जो विशाल उत्तरी मैदान और तिब्बत का सबसे जगली भाग है, यात्रा करते रहे। तिब्बत के कुछ सबसे ऊचे दर्रो से अपना रास्ता निकालते हुए उन्होने अपने सामान ढोनेवाले पशुओं को पूर्णतया निर्जन प्रदेश से हाका, जहा अनेक नदिया और हजारो झीले थी। चांग ताग की सभी नदिया निकास-रहित झीलो मे बहती है। यही झीलें एशिया की नमक और सोहागे की मुख्य खाने है।

अपनी लम्बी यात्रा के इस भाग मे वे ऐसे वीरान प्रदेश मे थे, जहां गाव नही हैं। चाग ताग के ऊचे मैदानो पर कुछ अनाज भी नही उगता। वहां गिने-चुने निवासी कुछ बजारे और इनके याक है। इसी प्रदेश मे १९४५ ई० के क्रिसमस से कुछ दिन पूर्व वे बाल-बाल बचे। पेटर और हैनरी को ऐसा आभास हुआ कि उनका पीछा किया जा रहा है और वे यह अनुमान करने के लिए पर्याप्त अनुभवी थे कि पिछले दर्रों से उनका पीछा करनेवाले लुटेरे हैं। यह तिब्बत का वह भाग है, जहा सभी जानते है कि लुटेरे यात्रियो की केवल कपडे छीनने के लिए ही हत्या कर डालेंगे। दोनो आस्ट्रियाई आरोहको ने तग पगडडी को छोड-कर लुटेरो को धोखा दिया और पीछे घूमकर जल्दी-जल्दी एक चोटी पर चढ गये। तब उन्होने ग्लेशियर और ऊची पहाडियो से होकर मैदान को पार किया। जनवरी मे जब उन्होने हिसाब लगाया तो पता चला कि वे ल्हासा से एक सप्ताह की यात्रा पर है। उन्होने एक और बर्फीला मैदान पार किया और बर्फीली आधियोवाले १९,३०० फुट ऊचे गुरिंग ला की चोटी पर पहुचे।

वहा से वे क्यी चू की घाटी मे उतरे और वर्जित नगर मे जनवरी १९४६ के दूसरे सप्ताह मे रात के समय प्रविष्ट हुए। उनके चेहरे मौसम के प्रभाव और सूर्य की जलन से ऐसे बदरग हो गये थे कि उन्हे यूरोपीय के अतिरिक्त कुछ भी समझा जा सकता था। उनकी लम्बी दाढिया थी, फटी हुई भेड की खाल की जाकेट, फर के टोप और थके हुए पैरों पर याक के बालो के जूते थे।

एक बार और सबसे महत्वपूर्ण मौके पर भाग्य ने फिर उनका साथ

दिया । उनको एक अतिथि-सत्कार करनेवाला मित्रतापूर्ण व्यक्ति थागमे नाम का तिव्वती मिल गया । उसने उन्हे अपने घर वुलाया । उनकी कहानी सुनने के बाद उसने इसे अपने कुछ प्रभावशाली मित्रो को सुनाया ।

हमे सन्देह है कि वह तिव्वती उनका बडा प्रशसक वन गया, विशेषत उनके १९,३०० फुट ऊचे दर्रे को मध्य शीत मे पार कर सकने के साहस से । जो भी हो, दिन और सप्ताह बीत गये और वे अधिकाधिक मित्र बनाते गये । दलाई लामा की सरकार के अधिकारियो ने निश्चय किया कि उनको ठहर जाने की अनुमति दे देना वुद्धिमत्तापूर्ण होगा । दोनो आस्ट्रिया-निवासियो ने अपनेको उपयोगी सिद्ध करने के लिए, जो कुछ भी हो सकता था, किया । तिव्वत मे इजीनियर नही थे, उन दोनो को कुछ ज्ञान था, जो काम मे लाया जा सकता था । धीरे-धीरे उन्होने दलाई लामा तथा उसके आसपास काम करनेवालो का विश्वास प्राप्त कर लिया ।

महीने और वर्ष बीतते गये । इस प्रकार वे तिव्वती वन गये । जब हम ल्हासा मे थे, दोनो व्यक्ति महत्वपूर्ण कार्यो पर तैनात थे । ल्हासा के वाहरी भाग मे आफ्शनेटर एक नहर की खुदाई का निर्देशन कर रहा था । हेनरी हैरर तिव्वत के विदेश-सस्थान मे काम करता है और हमने उसे अत्यन्त आवश्यक नक्शो को दोहराकर ठीक करते पाया । दोनो गुलावी वस्त्र पहनते हैं, तिव्वती भोजन खाते है और देश के लोगो के समान भाषा वोलते हैं । तिव्वतियो मे वे लोकप्रिय हैं । वे भी तिव्वतियो को पसन्द करते है । इस प्रकार यह अत्यन्त सन्तोषजनक जोडा मालूम होता है, यहातक कि पेटर और हेनरी दोनो ने अपना शेष जीवन तिव्वत मे व्यतीत करने का फैसला कर लिया है ।

जब हमने ल्हासा छोडा, पेटर और हैनरी हमे विदा करने आये । हमने उनसे पूछा कि क्या वे हमारे साथ सम्मिलित होना और अपने घर तथा परिवार मे लौटना पसन्द नही करेंगे ?

पेटर आफ्शनेटर ने सिर हिलाया, "जब तुम यूरोप मे लडाई के उपरान्त की वर्वादी को देखते हो तो क्या तुम्हे आश्चर्य होता है कि

हेनरी और मैंने अपने सच्चे और अच्छे मित्रो के साथ यहा तिब्बत मे रहना क्यो पसन्द किया है ?" मई १९५० के अपने एक पत्र मे हेनरी ने अपने नवीनतम तिब्बती कार्यक्रम के विषय मे लिखा—जाडो मे मैंने दलाई लामा के लिए एक छोटा सिनेमा (१६ मि० मि० विद्युत उत्पादक से चलनेवाला) नौर्बू लिगा की पीली दीवारों के अन्दर बनाया और जब से वह पोटाला से अपने ग्रीष्म-कालीन निवास मे आये, हम उनके लिए प्रदर्शन करते है। मुझे हरएक चीज समझानी पडती है। वह इतने जिज्ञासु और बुद्धिमान् है कि मैं विस्मित रह जाता हूं। अधिकतर हम अकेले होते है और सब प्रकार की बाते करते है। १६ वर्ष की आयु मे उनके ज्ञान और इच्छा-शक्ति से बडे राजनीतिज्ञ होने की प्रतीति होती है।

१९ | वापसी

किन्तु ल्हासा छोडने का समय इतना शीघ्र आ गया कि हमे पता ही न चला। दिन इतनी जल्दी निकल गये कि कारवा को तैयार करना हमारी सबसे महत्वपूर्ण समस्या हो गई। चूकि तिब्बती बडे अन्ध-विश्वासी होते हैं, हमे एक शुभ दिन सोमवार, बुधवार या रविवार को चलना था। यदि किसी तिब्बती को किसी ऐसे दिन यात्रा पर चलना पडता है, जो शुभ नही है तो अक्सर अपना टोप या कोई दूसरा वस्त्र, दूत द्वारा मार्ग पर शुभ दिन को ही भेज देता है, जिससे कि वह देवताओ को यह विश्वास दिलाकर फुसला सके कि उसने उसी दिन यात्रा प्रारभ की थी।

यद्यपि हमने ल्हासा शुभ दिन को ही छोड़ा था तो भी हम उस पिशाच को धोखा न दे सके, जो दलाई लामा के रहस्यपूर्ण राज्य मे

प्रवेश करने का साहस करनेवाले विदेशियो के प्रत्येक कारवा का पीछा करता मालूम होता है। दुर्भाग्य, जैसाकि अक्सर होता है, ऐसे मौके पर आया जबकि उसकी आशका बिल्कुल नही थी, अन्यथा हम उसके लिए तैयार हो जाते।

हमे ल्हासा से बडा सुन्दर प्रस्थान मिला। उफनती हुई क्यी-ची नदी पर खाल की नावो पर चुशूल तक ४० मील तेज चाल से छ घटे मे पहुच गये, जबकि आते समय हमे दो दिन लगे थे। हम पहाडो पर भी काफी तेज चाल से चढते चले गये और १ अक्तूबर तक न्यूयार्क पर उतरने की आशा किये हुए थे। १६,६०० फुट ऊचे कारो-ला को पार करके हमने उस ऊचे दर्रे के ग्लेशियरो को पीछे छोडा और अपने जान-वरो को रालुग मैदान के ढालू उतार पर लिये चले गये।

हमे पवित्र नगर से घर के मार्ग पर पाचवा दिन था और ग्यान्त्सी से दो दिन के मार्ग पर थे, जब देवताओ की कुदृष्टि हुई। मैं आगे चल रहा था और डैडी ने, जो कुछ गज पीछे थे, घोडे पर फिर से चढने का विचार किया। अकस्मात कुछ हलचल और हाथापाई-सी हुई। मैंने मुडते ही उन्हे हवा मे फैके जाते और नुकीले पत्थरो पर गिरते देखा। उनका घोडा चौका और उन्हे बडी जोर से जमीन पर पटककर भाग गया, जबकि उनका एक पैर रकाब पर और दूसरा काठी पर आधी दूरी पर ही पहुचा था।

डैडी उठ नही सके और बिल्कुल बेदम हो गये। वह ऐसे ही सफेद दीख रहे थे, जैसाकि हमारे ऊपर का बर्फ। वह होश बनाये रखने का प्रयत्न कर रहे थे। इतनी ऊचाई पर, जहा वायु मे ओषजन की मात्रा बहुत कम रहती है, ऐसी दुर्घटना से शीघ्र ही प्राणान्त हो सकता है। दुर्बल हृदय सभवत इस आघात को न सह पाता। एक महीने से अधिक समय बाद जबतक हम न्यूयार्क न पहुचे, यह पता न चला कि उनका पैर कूल्हे से नीचे आठ स्थानो पर टूटा है।

इस भाग्य-परिवर्तन ने हमे अत्यन्त विषम स्थिति मे डाल दिया। हमारे पास कोई डाक्टर न था और हमारा प्राथमिक चिकित्सा का सामान भी कई मील पीछे धीरे चलनेवाले कारवा के साथ था। देर भी

होती जा रही थी। अंधेरा होने मे लगभग एक घटा था और ठंड बढ रही थी। रालुग, सबसे पास का गाव और हमारा आज का गन्तव्य स्थान मैदान के पार चार मील था। अब क्या करे? सबसे नजदीक डाक्टरी सहायता, हमारा अनुमान था, ग्यान्त्सी मे मिल सकती थी, जो दो पडाव दूर था और वह भी संदिग्ध ही थी। हम पगडडी पर प्रतीक्षा के अतिरिक्त और कुछ नही कर सकते थे, यह आशा करके कि हमारा कारवा अधेरा होने से पहले हमे पकड लेगा। दुभाषिये सेवाग को मैंने घोडे पर रालुग को दौडाया कि वह कुछ गाववालो को डैडी को ले चलने के लिए घेरकर लाये।

सौभाग्य से हमे अपने सरदार और उसके याक और गधों के लिए अधिक प्रतीक्षा नही करनी पडी। बिस्तर को निकालकर हमने डैडी को सोने के थैले मे लपेटा और सेना की चारपाई पर उठाकर लिटा दिया। किन्तु हमारे प्राथमिक चिकित्सा के थैले मे मार्फीन नही थी। उनकी पीडा को शान्त करने और धक्के के असर को कम करनेवाली भी कोई चीज नही थी।

चार घटे उपरान्त अन्धकार और शीत मे, जो उतनी ऊचाई पर स्वाभाविक ही है, अत्यन्त कष्टप्रद सवारी के बाद, डैडी को शरण मिली। छ गाववाले, जिन्होने उनको मैदान से उठाकर लाने मे सहायता दी थी, बडी कठिनता से उस मुडनेवाली चारपाई को टूटी-फूटी सीढी से होकर, जो हमारे विश्राम-गृह के सोने के कमरे मे जाती थी, अन्दर पहुचा सके।

पहली रात डैडी की याद मे सबसे दु.खदायी थी। आकस्मिक आघात और शीत मे उघडे रहने के कारण तीव्र ज्वर और बार-बार बेहोशी हो जाती थी। उनके टूटे हुए कूल्हे पर तो भयानक पीड़ा थी। कोई भी स्थिति आरामदेह नही थी। नीद भी असंभव थी। इस ग्रह पर सबसे अधिक दुर्गम और सुविधा-शून्य स्थान पर वह अत्यन्त वेदना और चिन्ता की रात्रि थी, जिसका एक-एक क्षण व्याकुलता से व्यतीत हुआ। एक ऐसे स्थान पर विपदग्रस्त होने का अनुमान कीजिये, जहा के निवासी डाक्टरो पर विश्वास नही करते और समस्त रोगो के उपचार

के लिए लामाओ के मन्त्र, पूजा-पाठ और जडी-वूटियो पर ही आस्था रखते है।

अगले दिन मैं और सेवाग रालुग के टेलीफोन पर गये। टेलीफोन यह भी हमारा सौभाग्य ही था, क्योकि गगटोक से ल्हासा तक के मार्ग पर थोडे-से गाव ही तार की एक पक्ति से, जो दो स्थानो को जोडती है, सवधित हैं। मैंने प्रार्थना की कि लाइन टूटी न हो, जैसा अधिकतर सप्ताहो तक होता है और ग्यान्त्सी से भारतीय सेना का डाक्टर हमारी रक्षा के लिए आ जाय। यह लगभग जीवन और मरण का प्रश्न था। डाक्टर द्वारा डैडी के पैर पर पटरिया वाधे विना मैं उनके घर पहुच सकने की कोई सूरत नही देखता था।

टेलीफोन का चालक वहुत चिल्लाने और उस पूरे वैटरी-सचालित यन्त्र पर घन्टी वजाने के उपरान्त ग्यान्त्सी को जगाने मे समर्थ हुआ। यद्यपि ग्यान्त्सी केवल ३३ मील दूर था, तथापि सम्वन्ध इतना क्षीण था कि वात को समभा सकने से पूर्व कम-से-कम चार-चार वार दोहराना पडता था। जैसे-तैसे हम भारतीय सेना के डाक्टर रायवहादुर ब्रह्मेन्द्र-चन्द्र पाल से सम्वन्ध स्थापित कर सके। सेवाग ने अपने भाई से, जो भारतीय व्यापार एजेन्सी मे क्लर्क था, वात करके हमारी दशा अवगत कराई और कैप्टन पाल तिब्वती सरकार से स्वीकृति मिलने पर आने को तैयार हो गये। अपने अन्य भारतीय साथियो की भाति डाक्टर को भी ग्यान्त्सी से आगे केवल सात मील तक जा सकने की आज्ञा थी, जहाकि भारतीय डाक-सेवा की अन्तिम चौकी थी। तिब्वत मे आगे वढने के लिए विशेप आज्ञा आवश्यक थी।

सौभाग्य से तिब्वती व्यापार एजेन्सी ने स्वीकृति दे दी और उस भले डाक्टर ने, जो तिब्वत के चार मे से एक है, ग्यान्त्सी से रालुग एक दिन मे पहुचने के लिए विना रुके कठिन यात्रा की। आजतक डैडी को और मुझे अन्य किसीको देखकर इतना हर्ष न हुआ होगा, जितना कि वर्दीधारी भारतीय डाक्टर को देखकर हुआ, जो घोडे पर सारे दिन कठिन यात्रा करने के उपरान्त भी प्रसन्न और मुस्करा रहा था, जबकि वह रात के नौ वजे सीढी पर चढा और हमसे अभिवादन किया।

विना एक्स-रे यंत्र के—जो तिब्बत मे अलभ्य था—डाक्टर पाल निश्चय-पूर्वक नही बता सकता था कि डैडी के कूल्हे की हड्डी टूट गई है या नही। उसने बताया कि वह केवल चिकित्सक है, शल्य चिकित्सक (सर्जन) नही, और वह अपना चिकित्सा-विज्ञान का अध्ययन समाप्त करने के पूर्व ही भारतीय सेना मे प्रविष्ट हो गया था। वास्तव मे तिब्बत के चार डाक्टरो मे से केवल एक ही चिकित्सा महाविद्यालय का स्नातक है।

फिर भी प्रारभिक जाच के उपरान्त डा० पाल ने कहा कि चोट केवल पुट्ठे से ही सबधित हो सकती है, जिससे अस्थिबन्धक तन्तु टूट गये हो और बुरी तरह मोच आ गई हो। यह कुछ आश्वासनप्रद था और हमने, जितनी जल्दी हो सके, ग्यान्त्सी पहुंचने का फैसला किया।

अग्रेज अन्वेषक एडवर्ड एमडसन ने एक बार कहा था, "समस्त तिब्बत समुद्र के समान है, जिसकी विशाल तरगे पूर्वी और पश्चिमी वायुओ से प्रताडित होकर अपनी भीषणतम दशा के क्षण मे जमकर पत्थर बन गई है।" इसी प्रकार के भूमि-प्रदेश का हमने तीन दिन सामना किया और इसे अपने जीवन-भर याद रक्खेगे।

कभी-कभी ढालू पथरीली पगडडियो पर डैडी के स्ट्रैचर को ले चलने के लिए दस तिब्बती लगाने पडते थे, जो खाइयो को लाघते और तीव्र झरनो को पार करते घोंघे की चाल से चलते थे, जिससे कि वह (डैडी) नीचे नदी मे छटककर न जा गिरे। उनका पैर पटरियो से बधा था और उनको स्ट्रैचर से बाध दिया था।

जब सूर्य निकलता तब वे भुनने लगते और उसके वादलों के पीछे छिपने और ठडी हवा चलने पर सर्दी से जकड जाते थे। गोब्शी मे पहली रात को बाहर ठड मे सोने के लिए हमने तिब्बती डेरे मागे। सैनिको का एक दल हमसे कुछ आगे आया था। तिब्बत मे सैनिको की ओर कोई अगुली नही उठा सकता, जो अपनी वेतन की कमी को, जिस वस्तु को वे चाहे लेकर, पूरा करने के आदी है।

अगली रात को हम अधिक भाग्यशाली रहे, क्योकि जिग्मे तैरिंग नाम के तिब्बती ग्रामीण सज्जन के, जिनसे हम ल्हासा मे मिल चुके थे,

घर मे हमें लोरपाइया मिल गईं। उसने हमे घर लौटते हुए ग्यान्त्सी रोड पर पड़नेवाले अपने घर पर ठहरने का निमन्त्रण दिया था। तीसरे दिन हम ग्यान्त्सी पहुचे, जहा दुर्गरक्षक मरहठा सेना के क्वाटर, रास्ते के उन कष्टमय दिनो के उपरान्त, स्वर्ग जैसे मालूम पडे।

डा० पाल और मरहठा दल के सेनाधिकारी कैप्टेन रामचन्द्र पाटिल ने अत्यन्त सौजन्यपूर्ण व्यवहार किया। उनके साथ निवास के दस दिनो मे अतिथि-सत्कार असीम था। डा० पाल डैडी की बराबर देखभाल करते थे और उन्हे भारतीय ढग के पलग पर लिटाया गया था। यह अब अविश्वसनीय-सा लगता है कि एक सप्ताह तक लेटे रहने के उपरान्त भी डैडी किस प्रकार उस बुरी तरह टूटे हुए पैर से चल सके। केवल एक बेंत की सहायता से वह धीरे-धीरे और बडे कष्ट से बीस गज की दूरी पर स्थित भोजन के कमरे तक जा सकते थे। मैं समझता हू कि अपनी इच्छा-शक्ति और साहस के कारण ही वह उस अग से, जबकि जघास्थि आठ जगह चटकी हुई थी, चल सकते थे और उस समय, उनके इस प्रयास के कारण ही, हम यह विश्वास करने की मूर्खता कर बैठे थे कि पैर टूटा नही है। अब हमने सभ्य ससार की ओर बढने की योजना प्रारभ कर दी।

शीघ्र लौट जाना नितान्त आवश्यक भी था। शीघ्र ही घना बर्फ हिमालय के दर्रो को बन्द कर देनेवाला था और हम १९५० की गर्मियो तक फस जाते। क्या एक हवाई जहाज हमे उठाकर ले जा सकता? यह असभव था। अधिक-से-अधिक हम अपना एक जादुई गलीचा डैडी के लिए तैयार कर सकते थे—लकडी की एक मजबूत आराम कुर्सी, जो तिब्बतियो के कन्धो पर ले जाई जाय।

घोडे से विवाद मे डैडी के हारने के दो सप्ताह उपरान्त हमने फिर घर का रास्ता पकडा और यह काफी लम्बा रास्ता था। ग्यान्त्सी से गगटोक तक दोसौ मील से कुछ अधिक रास्ता तय करने मे हमे सोलह दिन लगे, औसत चाल एक से दो मील तक प्रति घटा थी। भाग्य से अधिकतर समय तक एक डाक्टर हमारे साथ था। डा० राय बहादुर बो एक अधेड सज्जन, जो यद्यपि चिकित्सा के स्नातक नही थे, तथापि

चिकित्सा मे काफी अभ्यस्त थे, हमारे साथ पहले दिन ग्यान्त्सी से इसलिए चले कि रास्ते मे दम घटे ऊबड़-खाबड यात्रा का डैडी पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसकी जाच कर ले। अगले दिन यातुग पर स्थित अपने सैनिक दल की ओर जाते हुए डा० पाल हमसे आ मिले। वह हमारे साथ यातुग पहुचने के एक दिन के मार्ग तक रहे और हमारी चिन्ता को बीच-बीच मे डाक्टरी जाच करके कम करते रहे।

चार-चार तिब्बती बारी-बारी से डैडी की पालकीनुमा कुर्सी को लेकर चलते थे। धीरे-धीरे चलते हुए कदम मिलाने के लिए वे गाते जाते थे या मन्त्र बोलते थे। कभी-कभी 'ओ मणि पद्म हु' या अन्य कोई बुद्ध की परिचित प्रार्थना बार-बार दोहराते थे। अधिकतर वे एक छोटा गीत गाते थे, जिसका अनुवाद था, "हे ईश्वर, हमारा भार हलका करो।" दूसरी चीज, जिससे डैडी नही बच सकते थे, वे थे रास्ते के झटके, जो उनको लकडी की डोली पर बीच-बीच मे लगते जाते थे। भाग्य से हमारे पास एक हवा भरनेवाला गद्दा था, जिसे फुलाकर हमने कुर्सी पर रख दिया था, फिर भी उस ऊबड-खाबड और रोमाचकारी मार्ग मे उसने पीडा से बचाने मे बहुत थोडी सहायता दी। उन तग मोडो को, जहा कुलियो को अपना भार सभालना कठिन था, डैडी कुर्सी छोड़कर किसी प्रकार लड़खड़ाते पार करते थे। कई स्थानो पर रास्ता इतना सकीर्ण था कि उन्हे अपना रास्ता चलने के लिए कुर्सी को खाई की ओर झुकाकर निकालना पडता था।

डैडी ने अपनी प्रसन्न प्रकृति बनाये रक्खी और नये तिब्बती गीत सीखने का प्रयत्न किया। रात्रि मे अपनी अर्धमूर्च्छित निद्रा मे वह कहते रहते थे, "हे ईश्वर! हे बुद्ध! हमारे भार को हलका करो।" उनकी प्रार्थना सुन ली गई और इस यात्रा मे डैडी का २० पौड वजन घट गया।

५ अक्तूबर को नई दिल्ली से अमरीकी राजदूत लाय हैडर्सन द्वारा भारत सरकार के सहयोग से भेजी गई बचाव-पार्टी हमे यातुग पर मिली। इसमे रायल बिस्बी, हमारे दूतावास के एक सदस्य, एमिली बेटमैन दूतावास के स्वास्थ्य अधिकारी और मेजर ए० के० बोस भारत सेना

के एक अग्रगण्य शल्य-चिकित्सक थे । स्वभावत उन्हे देखकर हम अत्यन्त प्रसन्न हुए, यद्यपि हमने अपना बचाव लगभग स्वय ही कर लिया था और ग्यातुंग से गगटोक थोडे ही दिनो का मार्ग है । राजदूत हैण्डर्सन, भारत सरकार तथा अन्य लोगो के लिए, जो डैडी की सहायता के लिए आये आभार-प्रदर्शन के लिए हमारे पास शब्द नही है ।

बचाव-पार्टी को मानो काफी न समझते हुए सयुक्त राज्य की हवाई सेना ने, आवश्यकता पडने पर हमे निकाल लाने के लिए, सबसे नजदीक के हवाई अड्डे पर एक वायुयान तैयार रखने की आज्ञा देदी थी। सिलीगुडी पर, जो गगटोक के ठीक दक्षिण मे है, अमरीकी नभ-सेना के एक अफसर ने हमे अपने सी-४७ वायुयान मे चढाया और कलकत्ता उडा ले गया । वहा से अमरीका पहुचना कोई समस्या ही न थी । जितना समय लामाओ के देश मे कष्ट-दायक चालीस मील चलने मे लगता है, उतने समय मे हम आधी दुनिया पार करके पहुच गये ।

घर पहुचते ही डैडी को अस्पताल पहुचाने मे कुछ भी देर नही की गई और वहा सफलता पूर्वक उनके पैर का आपरेशन किया गया। उनकी दाहिनी जाघ की हड्डी, जो दुर्घटना के बाद के एक महीने मे बेढगी तौर से जुडने लगी थी, फिर तोडी गई और ठीक-ठीक जमाई गई । यद्यपि जाडो-भर और मई तक डैडी को बैसाखिया लगानी पडी, तथापि अगस्त के महीने मे—गिरने के एक साल के अन्दर ही—वह स्की के खेल मे भाग लेने अलास्का पहुच गये ।

हमारी ल्हासा की अद्‌भुत यात्रा सम्पूर्णत उस दिन समाप्त हुई, जब मैंने, हम दोनो की ओर से, कागजो का एक मुट्ठा राष्ट्रपति ट्रूमैन को समर्पित किया । ह्वाइट हाउस स्थित अपने कार्यालय मे मेरा स्वागत करते हुए राष्ट्रपति ने मुझसे यात्रा के सबध मे प्रश्न किये । तब मैंने एक नक्शा उनके सामने फैलाया और उस मार्ग को दिखाया, जो हमने ग्रहण किया था । मि० ट्रूमैन ने उसका कुछ देर अध्ययन किया और उत्सुकता-पूर्वक सास लेकर बोले, "मैं भी बहुत समय तक ल्हासा जाने का स्वप्न देखता रहा, किन्तु शायद मुझे कभी जाने का अवसर न

मिलेगा।" जो सन्देश मैंने राष्ट्रपति ट्रूमैन को दिया था, वह तिब्वती वृक्ष की छाल से बने भोजपत्र पर बास के कलम से तिब्वती लिपि मे लिखा था। इसपर तारीख थी—भूमि वृद वर्ष के सातवे महीने का १६, वा दिन (७ सितम्बर, १६४६) और आशय निम्नलिखित था .

'लावेल थामस सीनियर और लावेल थामस जूनियर तिब्वत की यात्रा कर चुके है और इसके तथ्यो से भली-भाति परिचित हो चुके है। इसलिए तिब्वत सरकार आशा करती है कि उनके द्वारा सयुक्त राज्य के राष्ट्रपति, अमरीका की जनता और दूसरे देशों मे रहनेवाले व्यक्ति भी शीघ्र ही तिब्बत के विपय मे अधिक जान सकेंगे। यह एक पवित्र, स्वतन्त्र और धार्मिक देश है, जिसका शासन परम पवित्रात्मा दलाई लामा द्वारा, जो चैन्रेजी अर्थात 'दयालु बुद्ध का अवतार' है, होता है। साथ ही, समस्त तिब्वती नागरिक जनता तथा भिक्षु सब पूर्णतया धर्म मे लीन है।

"दुर्भाग्य से हमें यह ज्ञात हुआ है कि वर्तमान काल मे इस ससार मे शान्ति और सुख का अभाव है। यह जन-समुदायो के बीच झगडो तथा अनेक प्रकार के विरोध तथा वैर के कारण विद्यमान है। हम, तिब्वत की सरकार और तिब्वती जनता—संसार की, जिसमे हम निवास कर रहे है—इस दशा पर गभीरपूर्वक चिन्तित और व्याकुल है और हम यह विदित कराने के लिए उत्सुक है कि तिब्वत मे—एक देश, जो पूर्ण रूप से धर्माश्रित है—हम लोग, हमारी समस्त जनता, साधारण जन और भिक्षु, सच्चे अन्तःकरण से प्रार्थना कर रहे है कि ईश्वर मानवमात्र को स्थायी शान्ति और सुख प्रदान करे।"

: १ :

बाद की घटनाएं

सन् १६४६ मे, ससार के इस भाग से अन्तिम यात्रियो के रूप मे जानेवाले डैडी और मैं अपने कुछ तिब्बती मित्रो से हिमालय के परली पार होनेवाली घटनाओ के विषय मे समाचार पाते रहे हैं। इसके उपरान्त अप्रैल १६५३ मे सिनेरमा[1] के लिए एक चल-चित्र बनाने के कार्य से मैं अपनी पत्नी के साथ कुछ समय के लिए उत्तरी भारत मे हिमालय की तराइयो मे घूमा। उस समय तिब्वत से नये आनेवाले तिब्वतियो से और ऐसे व्यक्तियो से वातचीत की जो वहा की घटनाओ के समाचारो को जानते थे। उनसे नीचे लिखा चित्र सम्मुख आया :

जब चीनी सेनाओ ने पूर्वी सीमा पर आक्रमण किया, तिब्वत की पुरानी किस्म की सेनाओ ने अस्त-व्यस्त ढग से सामना किया। कुछ टुकडिया तवतक लडती रही जबतक कि गोला-बारूद समाप्त न हो गया और कुछने बिना एक भी गोली चलाये हथियार डाल दिये। यह चम्दोके किले मे हुआ, जहा समय से पूर्व ही वारूद का सग्रह उडा दिया गया। यही पर रेजीफौक्स के बेतार-चालक बॉब फोर्ड का चीनी सेनाध्यक्ष ने तिब्वतियो के सामने अनादर किया। फोर्ड, जो फौक्स की तरह पूरी तौर से तिब्बती सरकार के लिए काम कर रहा था, समस्त चीनी और तिब्वती सेनाओ के सामने लाया गया और उसके बाद चीनी सेनाध्यक्ष ने कहा, "हम सब भाई हैं, हम एक जैसे दीखते है, हमारी आखें समान रग की है, हमारी नाक एक जैसी है, हमारी चमडी का

---

१ एक विशेष प्रकार का चलचित्र।

रग भी एक जैसा है, किन्तु यह आदमी कौन है, यह हममे से नही है, यही हमारी तमाम विपत्तियो की जड है।"

फोर्ड पर एक लामा को मारने का भी झूठा आरोप लगाया गया, पश्चिम के लिए जासूसी का आरोप तो था ही।

तिब्बत की पूर्वी सेनाओ के पतन के उपरान्त ही रीजेण्ट टोक्रा ने अपना पद छोड़ दिया और १६ वर्षीय दलाई लामा ने तिब्बत के आध्यात्मिक और सासारिक मामलो को पूरी तौर से अपने हाथ मे ले लिया। साधारण तौर पर यह १८ वर्ष की आयु प्राप्त करने से पूर्व नही होता, किन्तु यह इस कारण किया गया मालूम होता है कि कही बाद में चीनी दलाई लामा को प्रभुत्व ग्रहण करने से रोक ही न दें। साथ ही,सरकार का यह विश्वास भी था कि इस प्रकार जनता का अधिकतम सहयोग और स्वामिभक्ति मिल सकेगी।

स्थिति को जहातक हो सके, संभालने के लिए परम पवित्रात्मा ने पीकिंग को एक शान्ति मिशन भेजा। साथ ही बुरे-से-बुरे अवसर के लिए तैयार होकर, विशेष रूप से ल्हासा पर चीनियो की वेगपूर्ण चढ़ाई या पवित्र नगर पर नभ सैनिको के पैराशूट से उतरने की आशंका से, दलाई लामा, उनकी सरकार के सदस्य—सभासद और सामन्त लोग दक्षिण की ओर, चुम्बी घाटी मे स्थित यातुंग मे, जो भारतीय सीमान्त के अत्यन्त निकट है, चले आये, जिससे परिस्थिति प्रतिकूल होने पर भागकर भारत जा सके।

आक्रमण के उपरान्त, मई १९५१ मे, चीनी सरकार और तिब्बती सरकार के प्रतिनिधियो ने पीकिंग मे एक समझौते पर हस्ताक्षर किये। इसके अनुसार तय हुआ कि तिब्बत के विदेशी मामलो का संचालन चीन के हाथ मे चला जायगा और तिब्बत का प्रचलित राजनैतिक ढांचा अपरिवर्तित रहेगा तथा दलाई लामा, भिक्षु वर्ग और सामन्त पूर्ववत् बने रहेंगे। पणछेन लामा की पिछली स्थिति, जैसीकि त्रयोदश दलाई लामा और तत्कालीन पणछेन लामा के समय में मैत्री-पूर्ण थी, फिर से स्थापित की जायगी, तिब्बत के सैनिक चीन की सेना के भाग होंगे और चीनी तिब्बत मे सैनिक अड्डा बनायेंगे। समझौते में तिब्बतियों

की उन्नति और सामान्य आर्थिक प्रगति का भी उल्लेख था।

संक्षेप मे, यदि पीकिंग-समझौते को गम्भीरता-पूर्वक ग्रहण किया जाय तो यह आभास होता है कि तिब्बतियो के लिए अरुचिकर परिवर्तन दो ही है—१ चीन द्वारा सैनिक अधिकार, २. विदेशी मामलो तथा सुरक्षा के मामलो मे अपने नियन्त्रण का अभाव, किन्तु पिछले अनुभवो के कारण यह सीधा-सादा समझौता किसी हद तक सन्देह की दृष्टि से देखा जाना चाहिए।

कम-से-कम वे व्यक्ति, जिनसे इस ग्रीष्म मे मुझे तिब्बत के दक्षिणी सीमात पर वात करने का अवसर मिला, सशयपूर्ण थे। उन्होने मुझसे कहा कि अभी तक दलाई लामा तिब्बत के प्रत्यक्ष शासक है और विशाल लामा समुदाय तथा सामन्त वर्ग पूर्ववत् चल रहे है। साथ ही, भविष्य मे होनेवाले वडे परिवर्तनो की ओर सकेत किया। तिब्बती समाज मे परिवर्तन शीघ्रता से या पीडा देकर नही किये जायगे, किन्तु वे आगे चलकर तिब्बत के वर्तमान युवको द्वारा ही, जिन्हे नये स्थापित विद्यालयो मे लामावाद के स्थान मे साम्यवाद के सिद्धान्तो मे दीक्षित किया जा रहा है, प्रविष्ट होगे।

उन्होने कहा कि दलाई लामा की सामन्तवादी धर्माश्रित सरकार को उखाडने की चीन की यह दीर्घकालीन योजना है।

तीन यूरोपीय, जो चीन के आक्रमण के समय अभी तक ल्हासा मे थे, सरकार के साथ यातुग पलायन मे शामिल हो गये, किन्तु दलाई लामा और अन्य लोगो के समान, जो १९५० ई० के ग्रीष्म मे ल्हासा वापस चले आये, रेजी फौक्स, पेटर आफ्शिनेटर और हैनरी हैरर नही लौटे और उन्होने देश को पूर्ण रूप से छोड दिया। उनके ऐसा करने के विषय मे प्रश्न की आवश्यकता न थी, क्योकि पीकिंग-सन्धि की प्रथम धारा मे घोषित किया गया था, "तिब्बती जन सगठित होंगे और साम्राज्यवादी आक्रमणकारी शक्तियो को तिब्बत से निकाल वाहर करेंगे।" पिछली चीनी घोषणाओं मे ये तीनो वौब फोर्ड के साथ 'पश्चिमी साम्राज्यवाद के एजेन्ट' घोषित किये जा चुके थे।

रेजी फौक्स, जो अभी तक बुरी तरह सन्धिवात से पीडित था,

हिमालय को पार करके कालिम्पोग, पश्चिमी बंगाल भारत मे चला आया। वहा उसने और उसकी पत्नी नीमा ने एक स्काटलैंड के मिशन स्कूल डा० ग्रैहम्स होम्स मे, जहा एग्लो भारतीय बच्चे शिक्षा पाते है, अपना घर बना लिया। यही उनके बच्चे शिक्षा पा रहे हैं।

ल्हासा-यात्रा के उपरान्त यहीपर मैं रेजी से पहली बार मिला, किन्तु मैं खेद से स्तब्ध रह गया कि वह शारीरिक दृष्टि से पूर्णतया अशक्त होकर बिस्तर पर पडा था। यह सम्भवत. कोर्टीजन की अधिक मात्रा के कारण हुआ था। यह रेजी से भेंट का अन्तिम अवसर था। जून मे उसका देहान्त हो गया।

तिब्बत की स्वाधीनता की रक्षा के लिए रेजी फौक्स से अधिक किसी ने सघर्ष नही किया। ल्हासा के अपने रेडियो स्टेशन पर, ससार-भर के दूर-दूर के समाचार लघुतरग धारा पर सुन-सुनकर वह साम्यवाद की एशिया मे प्रगति को अकित करता था और उसने दूरदृष्टि से जान लिया था कि तिब्बत के सामने क्या आनेवाला है। उसने अपने अधिकारियो को साम्यवादियो की प्रगति पर परामर्श ही नही किया, बल्कि तिब्बत के सुरक्षा-साधनो को तैयार करने मे भी सहायता दी और इस कार्य मे उसके साथ आफिशनेटर, हैरर और फोर्ड भी शामिल हुए। उसने स्वतन्त्र ससार के राष्ट्रो को दलाई लामा की सरकार के लिए नैतिक और सज्जा-सबधी सहायता की अपील करते हुए समाचार प्रसारित किये। उसके प्रसारण बी० बी० सी० ने ग्रहण किये और पुन· प्रसारित किये। यह उसका दोष नही था कि सहायता न मिल सकी। रेजी फौक्स ने बडी मुस्तैदी से लड़ाई लडी। पेटर आफिशनेटर ने दूसरों से कुछ समय बाद तिब्बत छोडा। वह हिमालय पार करके नेपाल पहुंचा, जहा उसका प्रेमपूर्ण स्वागत हुआ और उसे एक महत्वपूर्ण सरकारी पद दिया गया।

तिब्बत के मामलो पर नेहरू-सरकार की सहायता के लिए कुछ महीनों को उसे भारत बुलाया गया। मेरी पत्नी और मैं पेटर से नई दिल्ली में मिले। बातचीत करने पर मैं इस पर्वतारोही इंजीनियर के तिब्बत के प्रति प्रेम और सम्मान से अत्यन्त प्रभावित हुआ। वह उन

दिन का स्वप्न देखता है जबकि हिमालय पार की स्थिति सुधर जायगी और वह वापस लौटकर दलाई लामा की सेवा मे अपनेको समर्पित कर सकेगा। उस समय तक मेरा अनुमान है कि वह नेपाल मे ही बना रहेगा।

पेटर आफ्शिनेटर का नगा पर्वत का साथी हैनरी हैरर अपनी साहसपूर्ण यात्राओ पर अत्यन्त सफल पुस्तक लिखने के लिए आस्ट्रिया अपने घर लौट गया।

जब तीनो यूरोपीय देश से भागे तथा दलाई लामा अपनी राजधानी चुम्बी घाटी मे यातुग को हटा ले गये तभी से चीनी अग्रगामी दल धीरे-धीरे ल्हासा की ओर बढते रहे और उन्हें पवित्र नगर मे पहुचने मे कई महीने लगे। उन्हें प्रकृति के अतिरिक्त और किसी रुकावट का सामना नही करना पडा, किन्तु वही अत्यन्त विकट थी। चीनी सेनाओ ने पश्चिम की ओर बढते हुए बर्फीले पहाडो और तीव्र आधियोवाले दो से तीन मील तक ऊचे रेगिस्तानो पर एक कामचलाऊ सडक बनाई और यद्यपि सेनाए ल्हासा पहुच चुकी है, उनकी सडक अभीतक वहा नही पहुच सकी है। ऐसी प्राकृतिक बाधाए मार्ग मे है। चीनियो के अधीन ल्हासा के तिब्बतियो की एक अत्यन्त गम्भीर समस्या है खाद्य पदार्थों के मूल्य मे असाधारण वृद्धि। भूखी चीनी सेना के वहा बसे होने के कारण वहां का उत्पादन माग की पूर्ति मे असमर्थ है।

अभी तक चीनी सैन्य दल प्रमुख व्यापार-मार्गों पर ही पहुचे हैं और भ्रमणशील कबीलो को, जो अपने याकों के समूह को लेकर मैदानो मे घूमते फिरते है और याक के बालो के तम्बुओ मे रहते है, परिवर्तन का कुछ भी पता न चला होगा।

हमे आशा करनी चाहिए कि भविष्य मे जो भी परिवर्तन होगे, वे दलाई लामा की प्रजा की स्वीकृति से होगे और तिब्बत की महान आध्यात्मिक प्रवृत्ति सदैव बनी रहेगी।

: २ :

दलाई लामा तिब्बत से भारत किस प्रकार आये ?

ल्हासा मे प्रवेश के बाद से चीनी सेनाओ का देश के कार्यो में हस्तक्षेप बढता जा रहा था। देश मे आन्तरिक विद्रोह की आग सुलग रही थी। दलाई लामा के अधिकार सीमित किये जा रहे थे। इसी अवसर पर १० मार्च, १९५९ को चीनी सैनिक कैम्प मे होनेवाले एक नाटक मे दलाई लामा को आमान्त्रित किया गया। चीनी जनरल के शिष्टताशून्य पत्रो तथा उसके आक्रामक व्यवहार से सदिग्ध होकर 'कशग' तथा दलाई लामा के निकट परामर्श-दाताओ ने उन्हे सुरक्षा के विचार से तिब्बत छोड देने की सलाह दी।

ल्हासा-निवासियो को जब इस निमन्त्रण का समाचार मिला, वे अत्यन्त उत्तेजित हुए। लगभग ३० हजार व्यक्तियों ने 'नोर्बू लिंगा' ग्रीष्म-निवास को घेर लिया और दलाई लामा से नाटक मे न जाने की माग की तथा चीन-विरोधी प्रदर्शन किये। उधर चीनी सेनाओ की तैयारी से ऐसा प्रतीत हुआ कि नागरिको पर शीघ्र ही आक्रमण होगा। दलाई लामा ने शान्तिपूर्ण उपायों से दशा सुधारने का प्रयत्न किया, किन्तु कुछ लाभ न हुआ। अतः अपने कारण नागरिकों पर आनेवाली विपत्ति को टालने के लिए उन्होने देश छोड़ने का निश्चय किया।

१७ मार्च, १९५९ को शाम से ही तीन-तीन, चार-चार के दलो मे दलाई लामा के साथी, उनकी माता तथा परिवार के अन्य सदस्य महल से निकलते रहे। इस दिन बड़ा तूफान चल रहा था। ल्हासा की सड़कें नये वर्ष के उत्सव मे आये हुए यात्रियों से भरी थी और नोर्बू लिंगा सैकडो तिब्बती सैनिको तथा विद्रोही खम्पाओ से, जो चीन-विरोधी थे, घिरा था। इन सबसे भागनेवालों को उन चीनी सैनिको की दृष्टि से

पहुंचने में सहायता मिली, जो महल से तीन सौ गज की ही दूरी पर अड्डा जमाये थे। भोजन का सामान तथा दलाई लामा के वहुमूल्य खजाने का कुछ भाग खच्चरो पर लादकर रवाना कर दिया गया।

रात के १० वजे के लगभग दलाई लामा तीन अनुचरो के साथ महल के दक्षिण द्वार से निकले। उन्होने अपनी ऐनक उतार दी थी तथा साधारण भिक्षु का वेश बना रक्खा था। रेत के तूफान के पर्दे ने उन्हे चीनी सैनिको की निगाह से बचने मे वडी सहायता दी। उन्होंने नाव से क्यी-चू नदी पार की। दूसरे किनारे पर घोडे तैयार थे। आधी रात तक सारी पार्टी पूर्व-निश्चित स्थान नीथाग पर एकत्र हो गई।

इसके उपरान्त घोडे की पीठ पर, पैदल और नावो द्वारा यात्रा करते हुए २७,००० फुट ऊचे 'चे' दर्रे को पार करके पार्टी देश के उस भाग मे पहुच गई, जो खम्पाओ द्वारा पूर्णतया सुरक्षित था। पार्टी ने साधारण अनुमान के विरुद्ध दिन मे ही यात्रा की। स्थान-स्थान पर भीड उनके दर्शन करने को इकट्ठी होती थी और सब प्रकार की सुविधा उपलब्ध करती थी।

इस पलायन का चीनियो को १९ मार्च को पता चला। पर उन्होने अनुमान कर लिया कि अवतक दलाई लामा खम्पा-अधिकृत प्रदेश मे पहुच चुके होगे, अत पीछा करने से कोई लाभ न होगा। वायुयान द्वारा उनकी खोज मे भी बादलो के उस घने आवरण ने बाधा दी, जो उनके भारतीय सीमा मे प्रवेश तक हिमालय पर छाया रहा। यह विचित्र किन्तु सत्य है कि ३१ मार्च को जब दलाई लामा ने भारत की सीमा मे प्रवेश किया, वादल हट गये। यह लामाओ की दैवी शक्ति का प्रभाव कहा जाता है, जिससे वे प्रकृति को वश मे कर सकते है। १२ अप्रैल, १९५९ को दलाई लामा तवाग से होकर बोमडिला पहुचे जहा भारत सरकार ने उनका प्रेमपूर्वक स्वागत किया।

●

टिप्पणियां

पृष्ठ १४ क्रिपल क्रीक—सयुक्त राज्य अमरीका के कोलोरैडो प्रदेश मे पर्वतो पर स्थित खान मजदूरो का कैम्प।

पृष्ठ १६ लाय डब्ल्यू एण्डर्सन सयुक्त राज्य विदेश सेवा से अवकाश प्राप्त कर चुके है, किन्तु अब भी परामर्शदाता के रूप मे कार्य करते हैं।

पृष्ठ ६४ शम्भाला—बौद्ध धर्म मे वर्णित रहस्यपूर्ण देश है।

पृष्ठ ६६ वर्तमान पणछेन लामा की अवस्था २३ वर्ष है। वह इस समय तिब्बत मे ही है। शिगात्से मठ मे इनका अभिषेक १९५२ मे चीनियो की सहायता से हुआ।

पृष्ठ ८९ भूमापक जासूसो मे सबसे प्रसिद्ध भारतीय नैनसिंह थे, जो एक व्यापरी के वेष मे लद्दाख होकर तिब्बत पहुचे। इन्होने प्रार्थना चक्र मे कम्पास छिपा रक्खा था और १०८ दानो की माला का एक दाना १०० पग चलने पर सरकाते थे। यह १८६६ ई० मे तथा दूसरी बार १८७४ ई० में गये।

दूसरे भारतीय प० कृष्ण थे जो ए० के० कहलाते थे। यह १८७८ ई० मे ल्हासा पहुचे और वहा एक वर्ष तक छद्मवेश मे रहे।

तीसरे व्यक्ति शरतचन्द्र दास थे, जो छद्मवेश मे ताशी लुनुपो मठ मे गये और वहा से तिब्बती भाषा और सस्कृत की अनेक पुस्तके तथा उपयोगी सूचनाए लाये।

पृष्ठ ९७ व्योमिग, उटाह और निवेदा के मैदान संयुक्त राज्य अमरीका के पश्चिमी भाग मे है। ये या तो रेगिस्तानी भाग है, या घास के मैदान हैं।

पृष्ठ १४० ड्रेपुंग, सीरा और गेन्डेन के मठों मे साम्यवादियो के अधिकार होने के उपरान्त थोड़े ही भिक्षु रह गये है। स्वस्थ शरीर-वाले सभी भिक्षु बल-पूर्वक काम में लगा दिये गए हैं।

पृष्ठ १५५ रीजेन्ट टोक्रा का देहान्त हो चुका है। दोर्जे चांगवावा

स सम्म तिब्बत मे ही है।

पृष्ठ १६९ कशग के चार सदस्य दलाई लामा के साथ भारत आ ये है। दो सदस्य तिब्बत मे ही है।

पृष्ठ १७२ सिपोन शकापा इस समय भारत मे हैं और दलाई लामा की ओर से तिब्बती शरणार्थियो के पुनर्वास के कार्य मे नियुक्त है।

पृष्ठ २२६ दलाई लामा के सचिवालय से प्राप्त सूचना के अनुसार वॉब फोर्ड अपने देश को जा चुका है। पेटर आफ्शिनेटर अभी नेपाल मे ही है। वह कुछ समय पूर्व दलाई लामा से भारत मे मिला भी था।

हैनरी हैरर ने दलाई लामा के भाई के संस्मरणों की पुस्तक 'तिब्बत इज माई कन्ट्री' नाम से लिखी है।

●